शिशिर–वसन्त' ९५

द्वैमासिक

जीवनीय

स्वास्थ्य पत्रिका

१२ रु०

शिशु स्वास्थ्य विशेषांक

अंतर्राष्ट्रीय बाल वर्ष में

बच्चों में रक्त की कमी • बच्चों में सूखा रोग

स्तनपान की आवश्यकता • शिशुओं मे दस्त

मानसिक विकलांग बच्चे • बच्चों के अधिकार

दाँत निकलते समय सावधानियाँ • खसरा : बचाव एवं उपचार

जीवनीय द्वैमासिक

मानद संपादक मंडल (लखनऊ)
पं. काशीनाथ गोपाल गोरे
डॉ. पारस नाथ मिश्र
वैद्य पूर्ण चंद्र जैन
डॉ. प्रेम सागर
वैद्य बदलू राम रसिक
डॉ. बिशन नारायण मेहरोत्रा
वैद्य ब्रज बिहारी मिश्र
डॉ. एम. पी. शुक्ल
डॉ. रवि कुमार शर्मा
डॉ. रेनु महेन्द्र
वैद्य सुल्तान अली खां
डॉ. सी.एस. सैंबी
डॉ. हरि प्रकाश शर्मा

कार्यकारी संपादक
डॉ. नरेंद्र नाथ मेहरोत्रा

संयोजक
पं. माधवाचार्य

सम्पादकीय सहायक
कु.वीना टंडन
श्री के.बी.सिंह

आवरण चित्र
अनुपम कुमार, फोटोग्राफर

साज-सज्जा
श्री संदीप सेनगुप्ता

इस पत्रिका के लिये कापार्ट से मिले अनुदान के हम आभारी हैं।

जीवनीय संबंधित समस्त विवादों का निपटारा लखनऊ के न्यायालयों के आधीन होगा।

जीवनीय सोसायटी की ओर से मुद्रक तथा प्रकाशक डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा द्वारा प्रकाश पैकेजर्स, २५७ गोलागंज लखनऊ-१८ से मुद्रित तथा ई-III/ २४९ सेक्टर एच, अलीगंज लखनऊ-२० से प्रकाशित, संपादक डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा

संपादकीय कार्यालय
जीवनीय
ई-III/२४९, सेक्टर एच
अलीगंज लखनऊ-२२६०२०
फोन-०५२२-७७५६८

अतिथि संपादक
वैद्य देवेन्द्र नाथ मिश्र
डा. रश्मि कुमार

वर्ष ५, अंक ५-६
१६ जनवरी १९९५ - १५ मई १९९५

संपादकीय सलाहकार समिति
वैद्य अयोध्या प्रसाद अचल, गया
हकीम अल्ताफ अहमद आजमी, नई दिल्ली
डॉ. गीता बामेजई, नई दिल्ली
वैद्य विवेकानंद पांडे, नई दिल्ली
वैद्य भगवान दाश, नई दिल्ली
वैद्य मायाराम उनियाल, नई दिल्ली
डॉ. टी. के. अब्दुल रज्जाक, पालक्कड़
वैद्य शिव कुमार मिश्र, पीलीभीत
वैद्य सुभाष रानाडे, पुणे
डॉ. उमा, बंगलूर
डॉ. भारतेन्दु प्रकाश, बाँदा
श्री ए.वी. बालसुब्रहमण्यम, मद्रास
वैद्य रमेश म. नानल, मुंबई
वैद्य भास्कर वि. साठ्ये, मुंबई
वैद्य नरेन्द्र सो. भट्ट, मुंबई
हकीम सफदर नवाब, लखनऊ
वैद्य वी.बी. म्हैस्कर, वड़ौदरा

जीवनीय में छपने वाले लेखों को पाठकों के लिए उपयोगी बनाने हेतु हम सतत् संपादकीय प्रयास करते हैं। परंतु रोग निदान एवं चिकित्सा एक कुशल चिकित्सक का ही काम है। स्वस्थ जीवन हेतु आवश्यक जानकारी अवश्य जीवनीय से प्राप्त करें पर रोग-चिकित्सा कुशल चिकित्सक की ही देखरेख में करें।

— संपादक

जीवनीय चंदे की दरें

	व्यक्तिगत (रुपये)	संस्थागत (रुपये)
वार्षिक	५०	१००
द्वैवार्षिक	९०	१८०
त्रैवार्षिक	१३०	२६०
आजीवन	५००	१०००

चंदा साधारण डाकखर्च सहित है पर यदि पत्रिका रजिस्टर्ड डाक से मंगाना है तो उपरोक्त दरों में रू. ३५ प्रति वर्ष और जोड़ कर भेजें। चंदे की रकम ड्राफ्ट या मनीआर्डर द्वारा ही 'जीवनीय सोसाइटी' लखनऊ के नाम से भेजें। लोस्वापसंस के सदस्यों एवं स्वैच्छिक संस्थाओं को चंदे में १० प्रतिशत की छूट मिलेगी।

संपादकीय

हाल ही में भारत सरकार ने जिन छः नए विभागों की घोषणा की है उनमें से एक पारंपरिक भारतीय चिकित्सा पद्धतियों के विकास के लिए है। यह निश्चय ही एक ऐसा कदम है जो न केवल इन चिकित्सा पद्धतियों के विकास के लिए उपयोगी हो सकता है वरन् देश में प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं के ढांचे को मजबूत एवं प्रभावी बनाने के लिए भी विशेष रूप से सहायक हो सकता है। पर ऐसा कुछ भी होने के लिए आवश्यक है कि पहले तो यह विभाग प्रभावी रूप से कार्य कर सके। केन्द्र सरकार को चाहिए कि ऐसे स्पष्ट संकेत दे कि इन विभागों की घोषणा मात्र दिखाने के लिए नहीं की गई है। हाल में इनमें से पांच विभागों के लिए तो पूर्णकालिक सचिवों की नियुक्ति कर दी गई है पर पारंपरिक चिकित्सा विभाग फिलहाल अनाथ ही छोड़ा गया है।

दूसरा सबसे महत्वपूर्ण निर्णय होगा इस विभाग के लिए समुचित धन की व्यवस्था करना जिसके अभाव में तो विभाग मात्र कागजी कार्यवाही ही बना रहेगा। वर्तमान में केन्द्र सरकार के स्वास्थ्य बजट का लगभग ९५ प्रतिशत आधुनिक चिकित्सा पद्धति के विकास व उस पर आधारित स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था पर खर्च किया जाता है। परिवार कल्याण विभाग का तो लगभग शत-प्रतिशत बजट आधुनिक चिकित्सा पद्धति की झोली में जाता है। ऐसे में पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों से किसी चमत्कार की आशा करना किसी भूखे, नंगे गरीब से कुश्ती का ओलंपिक स्वर्ण पदक जीतने की आशा करना जैसा ही बेमानी होगा।

तीसरे इन चिकित्सा पद्धतियों पर आधारित स्वास्थ्य सेवाओं को स्वास्थ्य सेवाओं के ढांचे में प्रभावी स्थान देने से ही कुछ लाभ होगा। यद्यपि स्वास्थ्य सेवाएं राज्यों के कामकाज की सूची में आती हैं पर अन्य कई केन्द्रीय योजनाओं की तरह इन पद्धतियों के विकास व उन पर आधारित स्वास्थ्य सेवाओं के प्रभावी योगदान की कुछ केंद्रीय योजनाएं शुरू की जा सकती हैं, इन पद्धतियों के चिकित्सकों को स्वतंत्र रूप से कार्य करने की छूट होनी चाहिए। इसके लिए अलग से किसी प्रकार के ढांचे को खड़ा करने की आवश्यकता नहीं है। पर इस बात का ध्यान अवश्य रखना होगा कि प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में तीसरे चिकित्सक की नियुक्ति जैसा निष्प्रभावी प्रबंध तो कारगर नहीं ही होगा। उचित होगा कि विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों के चिकित्सकों को प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में तथा स्वास्थ्य सेवाओं के ढांचे में बराबरी के आधार पर निर्णय लेने व उन्हें प्रभावी बनाने के समुचित अधिकार दिए जाएं।

फिलहाल मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य के क्षेत्र में तथा परिवार कल्याण के लिए दाइयों के सक्रिय एवं प्रभावी सहयोग का एक देशव्यापी कार्यक्रम तो तुरंत ही बनाना चाहिए जिसमें दाइयों का महत्वपूर्ण योगदान अपनी पद्धति पर आधारित सेवाएं प्रदान करने के लिए होना चाहिए न कि केवल परिवार नियोजन के लक्ष्य पूरे करने में मदद करने के लिए।

ये सही है कि देश भर में फैले पारंपरिक चिकित्सकों एवं स्वास्थ्यकर्मियों को सक्रिय रूप से स्वास्थ्य के ढांचे में जोड़ने से देश के स्वास्थ्य पर निश्चित ही अच्छा असर होगा पर यह केवल विभाग खोलने मात्र से तो नहीं ही होगा। जब तक इसके लिए समुचित धन की व्यवस्था, उचित प्रशासकीय ढांचा व जनकल्याणकारी योजनाएं नहीं बनतीं तब तक ये भी मात्र एक दिखावा ही बना रहेगा।

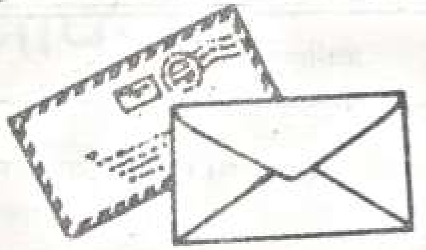

पाठकों के पत्र

प्रिय सम्पादक जी,

आपकी पत्रिका जीवनीय की कुछ प्रतियां देखने का अवसर मिला। वास्तव में इस पत्रिका के द्वारा लोगों को पारम्परिक चिकित्सा पद्धति व उपयोगी पौधों के विषय में जानकारी मिलती है। जीवनीय ज्ञानवर्धक है। मैं आपको इतनी रोचक पत्रिका प्रकाशित करने के लिए अपनी शुभकामनाएं व धन्यवाद देता हूं।

प्रो. एस. के. जोशी
महानिदेशक, सी. एस. आई. आर., नई दिल्ली

मैं एक सामाजिक कार्यकर्ता हूं इसलिए मुझे जगह–जगह जाना पड़ता है। अपने इस कार्य के दिनों में मुझे आपके द्वारा प्रकाशित द्वैमासिक पत्रिका जीवनीय देखने को मिली। इसके साथ ही साथ कई अंकों को पढ़ने का सुअवसर भी प्राप्त हुआ जो मुझे बहुत पसन्द आए। मैंने इसके पहले के प्रकाशित अंकों को भी प्राप्त करने की कोशिश करी लेकिन सफलता नहीं प्राप्त हो सकी। अब मैं जीवनीय का नियमित पाठक बनना चाहता हूं, मेरी इस इच्छा को पूरा करने में आपकी मदद चाहिए।

श्री श. बा. बैसवारे, नागपुर

मुझे जीवनीय के दो–तीन अंक पढ़ने को मिले, सब मुझे बहुत उपयोगी लगे। मुझे पत्रिका पढ़ कर ऐसा लगा कि यह स्वास्थ्य पत्रिका पाठकों को अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक और उनको प्रकृति के पास ले जाने में निरन्तर लगी है। इस पत्रिका से पाठक को विभिन्न विषयों की जानकारी मिलती है। 'आयुर्वेद और ज्योतिष' बहुत रुचिकर लगा। मुझे आशा है कि आप इस स्तम्भ पर जीवनीय के प्रकाशित होने वाले प्रत्येक अंक में इसी प्रकार लाभकारी जानकारी देते रहेंगे।

श्री रवि कान्त वर्मा, नई दिल्ली

मै जीवनीय को नियमित रूप से पढ़ता हूं। मैं इस पत्रिका को स्वास्थ्य साहित्य में जाज्व्ल्यमान नक्षत्र मानता हूं। इस द्वैमासिक पत्रिका ने मुझे और मेरे सम्पर्कमें आने वाले हर व्यक्ति की प्राथमिक स्वास्थ्य समस्या का समाधान किया है। मुझे हर पल इसके नए अंक की प्रतीक्षा रहती है।

श्री राम गोपाल मिश्र, गोंडा

मुझे एक मित्र के पास आपकी जीवनीय द्वैमासिक पत्रिका देखने को मिली। पत्रिका के कुछ पृष्ठ देखने के बाद उसको पढ़ने की जिज्ञासा हुई। आपकी पत्रिका बहुत ही रोचक व ज्ञानवर्धक लगी। इसकी पाठन सामग्री व लेखकों के नाम से बहुत प्रभावित हुआ। मैं इसका हर अंक पढ़ना चाहता हूं। मेरे विचार में यदि इसमें रंगीन चित्र दिए जाएं तो पाठकों को पढ़ने में अधिक आनन्द आएगा।

डा. ओम प्रकाश श्रीवास्तव, सीतापुर

मैंने जीवनीय का 'अस्थिरोग' विशेषांक पढ़ा। इस अंक का प्रत्येक लेख महत्वपूर्ण जानकारी संजोए हुआ था। यह पत्रिका पढ़ने में बहुत रुचिकर लगी। मैंने इस पत्रिका को कई बुक स्टाल पर पूछा लेकिन कहीं नहीं प्राप्त हो सकी। कृपया इस सम्बन्ध में मेरी मदद करिए।

श्री नीरज शर्मा, नई दिल्ली।

यदि आप इस पत्रिका को नियमित रूप से पढ़ना चाहते है तो आप हमारे कार्यालय से ग्राहक चंदा कार्ड मंगवा कर सही जानकारी प्राप्त कर 'जीवनीय' के ग्राहक बन सकते हैं।

संपादक

मुझे जीवनीय द्वैमासिक पत्रिका देखने का अवसर मिला। मै परम्परागत चिकित्सा पद्धति को लोगों तक पहुंचाने में पिछले कई वर्षों से लगा हूं, इसलिए इस विषय में प्रकाशित होने वाली हर पत्रिका को पढ़ता हूं। इस पत्रिका का अवलोकन किया और मुझे बहुत लाभकारी जानकारी प्राप्त हुई। अतः मेरी इसके सब अंकों को पढ़ने की इच्छा है।

डा. सैय्यर बदर, लखनऊ

मैं आपकी द्वैमासिक पत्रिका को नियमित पढ़ता हूं, इसलिए इसका हर समय इन्तजार करता रहता हूं। मुझे हेमन्त–शिशिर–बसन्त अंक, महिला स्वास्थ्य विशेषांक बहुत पसन्द आया। अब मुझे शिशु स्वास्थ्य विशेषांक प्राप्त करने की उत्सुकता है।

श्री निरमल दास महेश्वरी, आगरा

हम हमेशा अपने पाठकों की रूचि व उत्सुकता से प्रेरित होते रहे हैं। अपनी पत्रिका की विषय–वस्तु के निर्धारण में पाठकों के अनुभव व सुझाव को भी ध्यान में रखते हैं। अब आपके लिए शिशु विशेषांक भरपूर जानकारी के साथ प्रकाशित किया जा रहा है।

संपादक

मुझे यह लिखते हुए हर्ष हो रहा है कि आपकी पत्रिका वास्तव में बहुजन हिंताय में लगी है। मैने अभी तक इसका किशोरावस्था अंक पढ़ा है लेकिन मुझे इससे लगाव हो गया है। अब मुझे इसके हर अंक को पढ़ने की इच्छा होती है। इसलिए मैंने जीवनीय की द्वैवार्षिक सदस्यता ले ली है।

श्री रामेश्वर हेलोडे, इन्दौर

इस अंक में

आयुर्वेद कल आज और कल १०
प्लेग को न भूलें १२
दुनिया में परिवार संस्था का पतन १४
कैंसर का टीका बनाने का प्रयास १८
दवाइयों में प्यार का व्यापार १९
बच्चों के अधिकार ५०
भारतीय संविधान और राष्ट्रीय शिशु नीति ५२
चिकित्सा सेवा तथा प्राइवेट प्रैक्टिस ६९
डाक्टरों के एकाधिकार का विकास ७०

आवरण लेख

शिशु आहार २१
शिशु के विकास की कहानी २२
बच्चों का शारीरिक विकास २४
शिशु की आहार व्यवस्था २६
शिशु की देखभाल २९
बच्चे का सही पहनावा ३०
दंतोदय काल में उपचार ३१
नवजात शिशु में कामला ३३
बच्चों के सामान्य रोग ३४
बच्चों का जुकाम ३६
बच्चों के पेट में कीड़े ३७
बच्चे का पेट दर्द–कारण व उपचार ३८
खसरा–राष्ट्रव्यापी बालव्याधि ३९
खसरा–रोकथाम व होम्योपैथिक इलाज ४१
भैंगेपन से बचाव ४२
बच्चे को अंधत्व से बचायें ४३
बाल पक्षाघात या पोलिओमाइलाइटिस ४४
सूखा रोग की सरल चिकित्सा ४५
बच्चों में मानसिक विकलांगता ४६
बच्चों द्वारा बिस्तर गीला करना ४८
बच्चों का असामान्य व्यवहार ५३

औषध द्रव्य

मकोय ५६
वच ५७
अतीस ५८

आहार द्रव्य

गन्ने का रस ५९
आलू ६०

स्थायी स्तंभ

स्वास्थ्य समाचार ४
अनुसंधान समाचार ५
मधुसंचय ६
जीव विज्ञान समाचार ७
शिशिर ऋतुचर्या ८
वसन्त ऋतुचर्या ९
साक्षात्कार–वैद्य वी धर्मलिंगम १५
ज्ञानकोष–बच्चों में अतिसार ३५
दादी मां के नुस्खे ५४
रोग और ज्योतिष ५५
स्वयं बनायें ६१
पुस्तक समीक्षा ६२
पौष्टिक व्यंजन ६३
लोस्वापसंस समाचार ६४
जीवनीय विज्ञान पहेली ६६
जीवनीय सोसायटी रिपोर्ट ६७

स्वास्थ्य समाचार

प्रदेश के ४९८ व्यक्ति एचआईवी संक्रमित

'एड्स एवं यौन रोग उत्तर प्रदेश में स्वयंसेवी संस्थाओं की भूमिका' विषय पर साक्षरता निकेतन में तीन दिवसीय कार्यशाला के प्रथम सत्र का उद्घाटन करते हुए पूर्व स्वास्थ्य महानिदेशक डा. पी.डी.पी. माथुर ने कहा कि जनस्वास्थ्य को बेहतर बनाए रखने के लिए राज्य सरकार और स्वैच्छिक संस्थाओं के बीच समन्वय आवश्यक है। उन्होंने कहा कि अकेले राज्य सरकार जन स्वास्थ्य के बारे में लोगों में चेतना पैदा नहीं कर सकती। इस अवसर पर ब्रिटिश काउंसिल डिवीजन नई दिल्ली के डा. इयाम सिम ने कहा कि उत्तर प्रदेश में जनस्वास्थ्य के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा चलाये जा रहे कार्यक्रमों को ब्रिटिश काउंसिल पूरा सहयोग देगी।

राज्य सरकार के राज्य एड्स नियंत्रण अधिकारी डा. एस. के. सिन्हा ने उत्तर प्रदेश में 'एड्स' की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए इस बात पर बल दिया कि इस समस्या के निदान के लिए राज्य सरकार स्वैच्छिक संस्थाओं का भी पूरा सहयोग ले।उन्होंने बताया कि गत वर्ष दिसंबर तक के आंकड़े दर्शाते हैं कि उत्तर प्रदेश में ४९८ व्यक्तियों को एच.आई.वी. से संक्रमित पाया गया। डा. सिन्हा ने बताया कि जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा जो अपना घर छोड़ बड़े शहरों की ओर जाता है उन्हें इस संक्रमण तथा अन्य यौन रोग होने की अधिक आशंका रहती है। उन्होंने बताया कि एच.आई.वी. संक्रमण ज्यादातर यौन संपर्क, खून चढ़ाने से और मां से बच्चे को प्रसव के दौरान होता है।

परिवार कल्याण के क्षेत्रीय निदेशक डा. पी. एल. जोशी ने समारोह की अध्यक्षता करते हुए कहा कि हमें उत्तर प्रदेश की मलिन बस्तियों पर अधिक ध्यान देना होगा। इसका आयोजन प्रदेश वालंटरी हेल्थ एसोसिएशन ने ब्रिटिश काउंसिल तथा वालेंट्री हेल्थ एसोसिएशन ऑफ इंडिया के सहयोग से किया है।

मछली का तेल मोटापा कम करे

बाबू मोशाय के छरहरे शरीर का राज़ अब जाना

तेल और तैलीय भोज्य पदार्थ मोटे लोगों के शत्रु माने जाते हैं क्योंकि इससे मोटापा और बढ़ता है। मगर हाल ही में किए गए अध्ययनों ने प्रमाणित किया है कि मछली का तेल इस नियम का अपवाद है। मोटापा बढ़ाने के बजाए यह उल्टे मोटापा कम ही करता है। मनुष्य पर यह कितना सफल रहेगा, अभी यह देखना है। मछली का तेल चूहों में न केवल दो प्रकार की वसा को कम करने में सहायक सिद्ध हुआ है बल्कि वसा के कारण धमनियों के अवरुद्ध होने को भी रोका है। अगर यह मनुष्य पर कारगर हुआ तो यह दिल का दौरा पड़ने से रोकेगा।

फ्लोराइड वाले टूथपेस्ट पर चेतावनी

फ्लोराइडयुक्त टूथपेस्ट के ट्यूब पर अब यह चेतावनी लिखी होगी कि सात वर्ष से कम आयु के बच्चे इसका इस्तेमाल न करें। स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय द्वारा तैयार मसौदा कानून के तहत इस नियम को अनिवार्य बनाया गया है। इस वर्ष २१ मार्च तक अगर इसका विरोध नहीं किया गया तो यह मसौदा अधिसूचना कानून के रूप में लागू हो जाएगा। इस नए कानून से औषध पदार्थ एवं कास्मेटिक नियम १९४५ में अतिरिक्त संशोधन होगा।

चिकित्सा विशेषज्ञों ने इस बहुपक्षीय अधिसूचना का स्वागत करते हुए इसे सही दिशा में उठाया गया कदम बताया। अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में फ्लोरोसिस नियंत्रण प्रकोष्ठ की प्रमुख डा. ए. के. सुशीला ने कहा कि यह नियम १९९२ में उसी समय लागू होना चाहिए था जब औषध पदार्थ एवं कास्मेटिक कानून में दो संशोधन किये गये थे।

चिकित्सा सेवाओं में विदेशी पूंजीनिवेश

केन्द्रीय वित्त मंत्री डा. मनमोहन सिंह ने उच्च तकनीक वाली स्वास्थ्य सेवाओं में विदेशी पूंजीनिवेश और तकनीकी समझौतों का स्वागत किया है। डा. सिंह ने दंत विशेषज्ञों की एक पांच दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेस का उद्घाटन करते हुए कहा कि देश के स्वास्थ्य क्षेत्र में अधिकतर प्रयोग में आने वाले उपकरण अभी विदेशों से आयात किए जाते हैं। उन्होंने कहा कि विदेशी निवेश और तकनीक की मदद से यह उपकरण देश में तैयार किए जा सकते हैं।उन्होंने दांतों की बढ़ती बीमारियों पर भी चिन्ता व्यक्त की और कहा कि देश में ८० प्रतिशत लोग दंत रोगों से पीड़ित हैं। इसका मुख्य कारण दांतों के रख-रखाव के बारे में अज्ञानता हैं। उन्होंने दंत विशेषज्ञों से दंत रोगों की रोकथाम और इनके रखरखाव की जानकारी लोगों तक पहुंचाने ने तरीके ढूंढने का आग्रह किया।डा. सिंह ने कहा कि दांत रोग के प्रमुख कारकों सिगरेट व पान मसालों के सेवन पर अंकुश लगाने के लिए सिर्फ इनकी कीमतें बढ़ाना पर्याप्त नहीं है अपितु इसके लिये आत्मनियंत्रण और लोक शिक्षण कहीं ज्यादा जरुरी है।

अनुसंधान समाचार

चिकित्सकों ने खोजा खर्राटों का इलाज

खर्राटों से परेशान न हो क्योंकि चिकित्सकों ने असका आसान और सस्ता इलाज ढूढ़ लिया है। फ्रांस में विकसित 'लेजर असिस्टेड यूयुलो पैरिगोरलास्टी', लौप नामक इस उपचार का फ्रांस के अलावा अमरीका, दक्षिण अफ्रीका, कोरिया, प्रायद्वीप स्पेन, ब्रिटेन, मैक्सिको, ग्रीस, पुर्तगाल और मोरक्को में व्यापक पैमाने पर इस्तेमाल हो रहा है। इस उपचार से मात्र २० मिनट में खर्राटे की समस्या से छुटकारा दिलाया जा सकता है।

लोग खर्राटे को आदत समझकर इसे नजरअंदाज कर जाते हैं लेकिन दरअसल यह श्वसन में बाधा पड़ने वाले 'एपनीया' नामक रोग के लक्षण हैं। यह रोग कई बार जानलेवा भी बन जाता है।श्वसनरोध नामक इस रोग में १० सेकेंड तक श्वसन प्रक्रिया रुक जाती है जिससे शरीर में आक्सीजन की कमी हो जाती है। इस कमी की पूर्ति के लिए व्यक्ति जोर-जोर से श्वास लेता है। गंभीर किस्म के श्वसन रोध 'रोन्कोपैथी' से पीड़ित व्यक्ति में निराशा और उदासी पाई जाती है। वह यौन समस्याओं से भी ग्रस्त हो सकता है।

नयी चिकित्सा की एक और विशेषता यह है कि इसमें लोकल एनिस्थीसिया का उपयोग किया जाता है। इसमें रोगी पूरी तरह होश में रहता है। साथ ही रोगी को अस्पताल में रखना नहीं पड़ता है। इलाज के बाद वह घर जा सकता है।

खर्राटा रोकने की मशीन

सोते वक्त खर्राटा मारने का अभी तो कोई उपचार नहीं था मगर स्विट्जरलैंड के एक डाक्टर ने खर्राटे रोकने के लिए सोते समय जबड़े में लगाने वाला एक यंत्र बनाया है। बारह वर्ष के परीक्षण एवं लगन के बाद यह यंत्र अब बाजार में उपलब्ध हो गया है। गला, नाक तथा कान विशेषज्ञ डाक्टर अर्नेस्ट टूफर के अनुसार यह उपकरण हर व्यक्ति के जबड़े के अनुसार बनाना पड़ेगा। सोने से पूर्व इसे मुंह में लगाना होगा। इसका ऊपरी भाग खर्राटा पैदा करने वाली तालू की थरथराहट को रोकेगा और निचला भाग जीभ और निचले जबड़े को दबाकर रखेगा। वास्तव में उपकरण का निचला भाग ही जोरदार खर्राटे को रोकने का काम करता है।

रात के समय जोरदार खर्राटे लेने वाले प्रायः थकावट, क्रोध और मानसिक तनाव की शिकायत करते हैं। ऐसे लोगों को कभी-कभी सुबह सिरदर्द भी होता है। उनकी याददाश्त कमजोर हो जाती है। इस नए उपकरण के प्रयोग करने वाले को नाक से सांस लेनी होगी।

कलर ब्लाइण्डनेस पर शोध

इंग्लिश मिडलैण्ड्स के ऐस्टन विश्वविद्यालय में जारी परीक्षण को कामयाबी मिल गई तो शिशु के जन्म के कुछ दिनों बाद ही, रंगों के प्रति उसकी संवेदनशीलता यानी कलर ब्लाइण्डनेस को परखा जा सकेगा। अभी इसकी पहचान के लिए चिकित्सकों को बच्चे की आयु ५ वर्ष हो जाने तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है।

ऐस्टन विश्वविद्यालय के दृष्टि विज्ञान विभाग की एक टीम ने प्रोफेसर ग्राहम हार्डिंग के नेतृत्व में दुनिया का पहला ऐसा परीक्षण किया है, जिसमें ३० सप्ताह के शिशु के दिमाग में हुए क्रमवार परिवर्तन का अध्ययन सफलतापूर्वक किया गया।प्रोफेसर हार्डिग के अनुसार छह से आठ सप्ताह का बच्चा रंगों के फर्क की ठोस पहचान नहीं कर सकता, इसलिए जब किसी नवजात को हरा और लाल रंग दिखाया जाता है तो उसे दोनों रंगों की चमक एक सी दिखाई देती है।परीक्षण से यह टीम इस निष्कर्ष पर पहुंची कि रंगों की पहचान न कर सकने वाले व्यक्तियों की आंख की रेटिना में हरे और लाल रंग के कोन्स में आपसी सामंजस्य न रख पाने की कमी होती है। वास्तव में रंगों और स्वरूप में भेद के लिए किसी एक रंग के साथ काले रंग का होना बहुत जरुरी होता है। प्रोफेसर हार्डिंग कहते हैं-- इन परीक्षणों से हम शिशु की रंगों के प्रति संवेदनशीलता परख सकते हैं।

बनावटी रक्त मिलेगा

वह दिन दूर नहीं जब हम रक्त का निर्माण कारखानों में करने लगेंगे। विज्ञानियों ने एक ऐसे पदार्थ का निर्माण कर लिया है जो निश्चित होकर किसी भी रक्त ग्रुप के रोगी को रक्त के रूप में दिया जा सकता हैं। 'रक्त ग्रुप' और 'क्रास मैचिंग' (रक्तदाता और रोगी के रक्त को मिलाने की जांच) की आवश्यकता इस पदार्थ के साथ नहीं होगी। इस पदार्थ को हम 'बनावटी रक्त' कह सकते हैं।

वास्तव में बनावटी खून एक रसायन फरफ्लोरो कार्बन के पायसीकृत रूप से बनाया गया है ।फरफ्लोरो कार्बन से तात्पर्य है, ऐसा हाइड्रोकार्बन जिसमें हाइड्रोजन अणु के स्थान पर फ्लोरीन अणु लगा दिए हैं। इस द्रव्य में यह खूबी है कि यह तीन साल तक आसानी से रखा जा सकता हैं। रखते समय ख्याल रखना होता है कि तापमान दो से चार डिग्री सेलसियस हो। आमतौर पर प्राकृतिक रक्त भी चार डिग्री के तापमान में ही रखा जाता है लेकिन अधिक से अधिक तीन हफ्ते के लिए ही।यह पदार्थ शरीर के किसी भी भाग पर हानिकारक प्रभाव नहीं डालता है। जंतु परीक्षणों के आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि इस द्रव्य का गुणसूत्रों (जींस) पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है। यह सघन द्रव्य रासायनिक और जैविक दृष्टि से स्थिर है और उच्च गतिशीलता रखता है जापान की एक औषधि निर्माण कंपनी में इस कृत्रिम पदार्थ पर शोध कार्य चल रहा है। बहुत से आपात मरीजों में इस पदार्थ के एक ही रूप का सफलतापूर्वक उपयोग किया जा चुका है और यह समझा जाता है कि आने वाले वर्षों में रक्त का यह कृत्रिम विकल्प अन्य देशों में भी आसानी से उपलब्ध हो जाएगा।

दस फीसदी लोग मानसिक रोगों के शिकार

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल मोतीलाल वोरा ने जिला अस्पतालों में मानसिक रोग चिकित्सा विभाग खोलने और उनमें प्रशिक्षित मानसिक रोग चिकित्सक नियुक्त किए जाने की आवश्यकता पर जोर दिया है उन्होने कहा कि पूरी आबादी में से दस फीसदी लोग मानसिक रोगों के शिकार है, इसकी तुलना में मासिक चिकित्सकों की संख्या करीब तीन हजार ही है। किंग जार्ज मेडिकल कालेज में इण्डियन एसोसिएशन आफ क्लीनिकल साकोलाजिस्ट के इक्कीसवीं राष्ट्रीय अधिवेशन में श्री वोरा ने प्रशिक्षित मानसिक चिकित्सा वैज्ञानिकों की व्यवस्था करने के लिए और प्रशिक्षण स्कूल खोलने का आह्वान किया।

इण्डिसन एसोसिएशन आफ क्लीनिकल साइकोलाजिस्ट के अध्यक्ष डा. एस. सी. गुप्ता ने कहा कि दूरदर्शन पर विदेशी कार्यक्रम के जरिए समाज में अश्लीलता का जहर घोला जा रहा है। स्टार टी.वी., जी.टी.वी. आदि विदेशी चैनल जो सेक्स व हिंसा परक कार्यक्रम दे रहे हैं, उससे किशोरों व नवयुवकों में नशाखोरी, यौन अपराध, उग्रता व मनोदोष काफी बढ़ा है। इस संदर्भ में उन्होंने चीन का उदाहरण दिया। श्री गुप्त के अनुसार चीन में इन्हीं टी.वी. कार्यक्रमों के कारण यौन अपराधों में २५ फीसदी की दर से वृद्धि हुई है। इसका कारण ब्लूफिल्मों का सहजता से उपलब्ध होना भी है। उन्होंने इस मामले में चीन से सबक लेने की सलाह दी।

मानसिक तनाव और शराब से सावधान

शराब से सावधान

मानसिक तनाव और शराब से सावधान रहना चाहिए क्योंकि गर्भावस्था के दौरान मानसिक तनाव और शराब के सेवन से नर भ्रूण नपुंसक हो सकता है। यह बात चूहों पर किए गए एक परीक्षण के बाद सामने आई है। स्वीडन के एक मनोविज्ञान संस्थान में किए गए इस आशय के परीक्षण कार्य से संबंधित एक प्रोफेसर का मत है कि प्रयोग के तहत गर्भवती चुहिया को एक लीटर शराब के बराबर अल्कोहल पिलाया गया। जिसके कारण उसके गर्भ में पल रहा नर भ्रूण नपुंसक हो गया। अनुसंधानकर्ता के अनुसार यह बात महिलाओं के संदर्भ में भी सही हो सकती है।

बुढ़ापे के रोग जन्म से पहले जानिए

बच्चा होने के बाद उसके बुढ़ापे के रोगों के लिए सोचेंगे

जी हाँ ! अधेड़ उम्र और बुढ़ापे में हो सकने वाली कुछ लाइलाज बीमारियों और विकृतियों का पता जन्म से पहले ही लगाया जा सकता है। यह बात एक शीर्ष अमेरिकी वैज्ञानिक ने विश्व मोलेक्यूलर बायोलाजी कांग्रेस में बतायी। मानव जीन परियोजना पर काम कर रहे एक वैज्ञानिक डा. थामस कार्स्के ने कांग्रेस को बताया कि अब भ्रूण पर इस तरह के जीन परीक्षण करना संभव है कि क्या वे भविष्य में ऐसी बीमारियों से ग्रसित होंगे। होस्टन के बेयलर चिकित्सा महाविद्यालय के डा. कार्स्के के अनुसार रीढ़ की कमजोरी, हंटिंग्टन रोग और मानसिक अवमंदन रोग, आनुवंशिक,जन्म पूर्व रोगों में से है, जिनकी भविष्यवाणी जन्म से पहले ही की जा सकती है।

मुहांसे का कारण उत्तेजना

चेहरे पर निकलने वाले कील-मुहांसे के कारण कितने ही चेहरों की कांति क्षीण हो जाती है। इस सम्बन्ध में दिल्ली में त्वचा विज्ञान की सातवीं अंतराष्ट्रीय कांग्रेस के संयुक्त सचिव तथा मुहांसा विशेषज्ञ डाक्टर टी. आर. बेदी ने अनेक भ्रांतियों का निराकरण करते हुए कहा कि भोजन और मुहासों के बीच किसी प्रकार के संबंध का कोई वैज्ञानिक प्रमाण नहीं है। शोध से यह भी सिद्ध हो गया है कि मुहांसों का कारण कब्ज भी नहीं है, बल्कि मुहांसों का कारण यौन तनाव, उत्तेजना, बोझ और कुण्ठा हो सकता है क्योंकि जो कुछ भी दिमाग में चलता है उसका संबंध त्वचा से होता है।

डा. बेदी का मत है कि मुहांसों का इलाज अति जटिल है और घावों, धब्बों और निशानी के ठीक होने की मियाद भी लंबी होती है। इसका इलाज चिकित्सीय देख-रेख में होना चाहिए। डा. बेदी ने आगाह किया है कि मुहांसों के उपचार के लिए अनेक प्रकार की क्रीमों और लोशनों का उपयोग चेहरे को बिगाड़ सकता है। इसका सबसे अच्छा इलाज ऐसी दवा का उपयोग हो जिसका दोहरा असर हो, एक तो वह त्वचा को तेलयुक्त न रहने दे और दूसरे उन जीवाणुओं का नाश कर सके जो मुहांसे में मौजूद हैं।

कोशिकीय जैविकी संगोष्ठी

कोशिका संरचना तथा फलनों के मौलिक एवं व्यवहारिक पहलुओं पर जानकारी देने कि लिए राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान में १८वीं अखिल भारतीय कोशिका जैविकी सम्मेलन एवं संगोष्ठी में देश के विभिन्न हिस्सों से आये दो सौ से ज्यादा वैज्ञानिकों ने कोशकीय फलनों का अणु अनुवांशिक विश्लेषण एवं कृषि, उद्योग तथा स्वास्थ्य के क्षेत्र में इनके अनुप्रयोगों पर विशेष जोर दिया । जैव प्रौद्योगिकी सचिव एवं प्रख्यात अनुवांशिकीविज्ञ डा. सी. आर. भाटिया ने अपने संबोधन में कोशिका जैविकी के ज्ञान से होने वाले आर्थिक एवं मानवीय लाभों पर प्रकाश डाला फइटा, आकारिकी, जैवमात्रा, परजीवी पोषक में पारस्परिक संबंध में स्ट्राइग का एक उत्कृष्ट उदाहरण दिया जो कि केवल पोषक पौधे की उपस्थिति में ही अंकुरित होता है। उन्होंने मानवीय कोशिका जैविकी, डी एन ए संरचना, ट्रांसजीवी पौधे तथा पशु, मानवीय ग्लोब्युलिन जीन इत्यादि पर प्रकाश डालते हुए कहा कि इन पर शोध के लिए कोशिकी से ही सूत्र मिलेंगे।

विख्यात वैज्ञानिक प्रो. बी. के. बछावत ने अपने अध्यक्षीय भाषण में युवा कोशिका जैविकीविज्ञों की कोशिका जैविकी विज्ञान के प्रति जिज्ञासा की प्रशंसा की। उन्होंने युवा वैज्ञानिकों का आह्वान करते हुए बताया कि कैसे वे उपलब्ध संरचना से इस क्षेत्र में आगे बढ़ कर अपना योगदान दे सकते हैं।

अखिल भारतीय कोशिका जैविकी समिति के अध्यक्ष डा. एम. आर. दास ने समुदाय को बताया कि कोशिका जैविकी विभिन्न विषयों जैसे कि जैव भौतिकी, कोशिका जैविकी, अणु जैविकी इत्यादि का संगम हैं।

घेंघा रोग के लिए कचनार

कचनार पौधे और कुछ अन्य औषधियों के मिश्रण से तैयार की गई एक नई आयुर्वेदिक औषधि ने घेंघा से पीड़ित लोगों के लिए आशा का नया संचार किया है। इस औषधि से मरीज को बगैर आपरेशन के इस खतरनाक बीमारी से छुटकारा मिलेगा। आयुर्वेदिक चिकित्सक डा. मधुकर घोलप और उनके दल के सदस्यों ने इस औषधि पर अनुसंधान किया था, जिसका परिणाम काफी उत्सावर्धक रहा।

केला खाइये और दिल का दौरा भगाइये

दिल के मरीजों के लिए केला काफी फायदेमंद होता है। दिल का दौरा पड़ने के फौरन बाद अगर मरीज को केले का सेवन कराया जाए तो उसकी अचानक मौत हो जाने की आशंका ५५ प्रतिशत कम हो जाती है। वास्तव में केले में मैग्निशियम के सेवन से शरीर में कैलशियम की मात्रा कम हो जाती है, जिससे शरीर की धमनियों में खून का बहाव, खून पतला रहने के कारण सही रहता है। पूरी मात्रा में मैग्नीशियम लेने से कोलेस्ट्रोल की मात्रा भी कम होती है और शरीर में ताकत बढ़ती है। हार्ट केयर फाउंडेशन के उपाध्यक्ष डा. के. के. अग्रवाल ने आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के एक अनुसंधान के दौरान केले में उक्त गुण पाये। डा. अग्रवाल के अनुसार केले में भी मैग्नीशियम काफी मात्रा में होता है।

आधुनिक चिकित्सा पद्धति से पैदा होती व्याधियां

प्राचीन चिकित्सा पद्धति जहां स्वास्थ्यपरक है, वहीं आधुनिक चिकित्सा पद्धति के कारण नाना प्रकार की व्याधियां पीछा पकड़ लेती हैं।के. जी. मेडिकल कालेज, लखनऊ में सामुद्रिक व वनौषधि विज्ञान कांग्रेस के दूसरे दिन वैद्य ब्रज बिहारी मिश्र और डा. वी. पी. त्रिवेदी ने अपने शोध पत्रों में उक्त तथ्य का खुलासा किया। उन्होने कहा कि सामुद्रिक व वनौषधि द्रव्यों का जिक्र प्राचीन और आधुनिक दोनों चिकित्सा पद्धतियों में मिलता है।

अमरीका से आए डा. आर. एन. सेठ ने अमरीकावासियों में कोलेस्ट्राल के बढ़े स्तर के बारे में बताया और कहा कि कोलेस्ट्राल बढ़ने का कारण असंयमित खानपान है। कोलेस्ट्राल की मात्रा कम करने में वनस्पतियों ने अच्छे परिणाम दिए हैं। राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान के डा. एस. सी. चतुर्वेदी ने ऊतक संवर्द्धन विधि से औषधीय पादपों पर किए गए शोध कार्यों का उल्लेख किया। डायस्कोरिया पौधे का इस विधि से विशेष प्रजनन किया गया है।

शिशिर ऋतुचर्या

वैद्य. एस.ए. खान, लखनऊ

शिशिर ऋतु उत्तम स्वास्थ्य काल की दूसरी ऋतु है। इसी ऋतु से आदान काल आरंभ होता है। आदान काल में जीव जन्तुओं तथा वनस्पतियों में रस की कमी होने लगती है। जिससे स्वास्थ्य व शक्ति का ह्रास होने लग जाता है। वातावरण में तिक्त रस की उत्पत्ति होती है। तिक्त रस वायु व आकाश महाभूतों से मिलकर बनता है। अतः इस ऋतु में वायु का प्रभाव अधिक रहता है। जिससे त्वचा में रूक्षता उत्पन्न होती है तथा शरीर में वायु की वृद्धि भी होती है। ऋतु के प्रभाव से कफ दोष का संचय होता है। यह वायु की वृद्धि कफ को अत्यधिक मात्रा में बढ़ने से रोकती है क्योंकि यदि वात और कफ अत्यधिक बढ़ जावें तो पित्त स्वाभाविक रूप से क्षीण हो जायेगा। पित्त के क्षीण होने पर शरीर की सभी १३ अग्नियां स्वाभाविक रूप से शान्त होने लगेंगी जिससे शारीरिक समान्य क्रियायें रुक जायेगी और जीव (मनुष्य) भयंकर रूप से रोग ग्रस्त होकर मृत्यु को प्राप्त हो जायेगा।

इस ऋतु में अधिक ठन्ड पड़ने व शीतल हवायें चलने से अस्थाई रूप से वात व कफ का प्रकोप भी हो जाता है। जिससे विभिन्न वातज तथा वात कफज रोग उत्पन्न हो जाते है जैसे- प्रतिश्याय (सर्दी जुकाम), शिरःशूल, आमवात, निमोनिया, खाँसी, वातश्लेष्मज ज्वर, कन्ठशालूक आदि। इस ऋतु में भी चन्द्रमा का ही प्रभाव अधिक रहता है अतः मधु रस की उत्पत्ति के कारण कफ की वद्धि होकर बल, वीर्य व शक्ति की वृद्धि होती है।

शिशिर ऋतु में भी पाचन शक्ति प्रबल रहती है परन्तु हेमन्त की अपेक्षा कम क्योंकि ज्यों-ज्यों शिशिर ऋतु का समय बढ़ता जाता है त्यों-त्यों कफ की वृद्धि (संचय) होने से भूख कम होने लगती है।

इस ऋतु मे भी पौष्टिक, गरिष्ठ, स्निग्ध, उष्ण भोजन करना चाहिये। ठन्ड तथा हवा से बचने का उपक्रम करना चाहिये जैसे गरम स्थान में रहना, सीधी ठन्डी हवा से बचना, वात कफ शामक आहार विहार का सेवन करना जैसे मदिरा, गोश्त, मछली, अन्डा, चाय, काफी, केशर, बादाम, कस्तूरी, अम्बर आदि।

शरीर, शिर, सीना, हाथ पैरों को कपड़ों से ढ़क कर रखना चाहिये। वात कफ शामक पदार्थ जैसे सोंठ, अदरख, हींग, काली मिर्च, पिप्पली, लहसुन, जायफल, मेथी, असगन्ध, जीरा, कलौंजी, काला तिल, तुलसी, सोहागा आदि का प्रयोग करना चाहिये।

वात वर्धक अनाज आदि जैसे मक्का, ज्वार, बाजरा, चना, मटर, मसूर, लाल मिर्च, पत्तेदार सब्जियां आदि का लगातार ज्यादा प्रयोग नहीं करना चाहिये परन्तु बथुआ के पत्तों व मेथी के पत्तों का साग प्रयोग किया जा सकता है जिसमें डंठल न हों। फलों व मेवों में - अनार, अमरूद, पपीता, बादाम, काजू, अखरोट, पिस्ता, चिरौंजी, चिलगोजा आदि खाये जा सकते हैं।

सब्जियों में गोभी, आलू, टमाटर, बैंगन, गाजर, चुकन्दर आदि खाये जा सकते है।

नियमित व्यायाम व सरसों के तेल की मालिश अवश्य करना चाहिये। मीठे, नमकीन व खट्टे पदार्थों का सेवन करना चाहिये। भोजन समय से करना चाहिये। प्रातः उठकर शीघ्र नाश्ता करना चाहिये। भूखे न रहें क्योकि रातें अधिक बड़ी होने के कारण रात का खाया खाना पूर्णतया पच चुका होता हैं। खाली पेट अधिक देर तक रहने से पाचकाग्नि दूषित हो जाती है। न तो अधिक गरम पानी से और न अधिक ठंडे पानी से नहाना चाहिये। गुनगुना जल नहाने के लिये उपयुक्त रहता है अधिक ठन्डे पानी से हानि होने की संभावना रहती है। अधिक गरम पानी से नहाने से त्वचा के रोम छिद्र ज्यादा खुल जाते हैं जिससे ठंडी वायु व ठन्ड प्रवेश कर वात प्रकोप कर दोषों की वैषम्यता उत्पन्न करते हैं। तैल मालिश कर गुनगुने पानी से नहाकर सूखे तौलिये से शरीर को रगड़ कर पोंछ देना चाहिये।

गेहूं, चावल, उड़द, गुड़, तिल, घी, दूध, मक्खन, खोये से बने पदार्थों का सेवन करना चाहिये।

अपनी प्रकृति के अनुसार ही आहार विहार करना चाहिये। वातज व कफज प्रकृति के लोगों को उष्ण पदार्थों का उपयोग करना चाहिये। कफज प्रकृति के लोगों को अधिक पौष्टिक व अतिस्निग्ध पदार्थों का कम प्रयोग करना चाहिये। पित्तज प्रकृति को अधिक उष्ण पदार्थों का प्रयोग नहीं करना चाहिये जिससे इस ऋतु का कुप्रभाव न पड़े।

डाक्टरों के अनुसार संचारी रोगों के परीक्षण की कम सुविधाएं

तीसरी दुनिया के देशों में जितनी मौतों होती हैं उनमें से छियानबे फीसदी संचारी रोगों के चलते होती है। भारत की स्थिति भी कोई बहुत अच्छी नहीं है। देश भर के साढ़े चार हजार अस्पतालों और निजी प्रयोगशालाओं की बहुलता के बावजूद संचारी रोगों के परीक्षण की बहुत कम सुविधाएं हैं और वे भी बहुधा विश्वसनीय रिपोर्ट नहीं देती, इसलिए इन परीक्षणों का गुणवत्ता नियंत्रण भी जरूरी है। सही उपचार के लिए सही परीक्षण अनिवार्य है।

वसन्त ऋतुचर्या

वैद्य. एस. ए. खान, लखनऊ

वसन्त ऋतु आदान काल की द्वितीय ऋतु है। यह सामान्यतया १६ मार्च से १५ मई तक रहती है। इस ऋतु में वायु की प्रधानता रहती है। वायु के प्राधान्य के कारण वायु मन्डल में कषाय रस की उत्पत्ति होती है।

आदान काल में सूर्य की किरणों व वायु द्वारा जीव जन्तुओं व वनस्पतियों से स्नेह व जलीयांश का शोषण होता है। अतः मनुष्यों में शारीरिक दुर्बलता आ जाती है। हेमन्त व शिशिर ऋतुओं में संचित कफ प्रकुपित हो जाता है। सूर्य की किरणें शरीर में प्रवेश कर कफ को द्रवित कर देती हैं। यह कफ अपने मूल स्थान आमाशय में आ जाता है। परिणामस्वरूप कफज रोग- अग्नि मांद्य, अरुचि, कास, टांसिल्स की सूजन, शिरःशूल, त्वचा के रोग, प्रतिश्याय ,कफज ज्वर आदि रोग हो जाते है। त्वचा व शरीर में रूक्षता उत्पन्न हो जाती है।

उक्त कफज बीमारियों व मन्दाग्नि से बचने के लिये सबसे पहले आवश्यक है प्रकुपित व आमाशय में संचित कफ को शरीर से बाहर निकालना इसे वमन या नस्य कर्म द्वारा निकाला जा सकता है वमन के लिये प्रायः नीहार मुंह मदन फल (२-३ फल का चूर्ण सैंधव नमक व मधु मिलाकर चटायें ऊपर से गर्म जल पिलायें या नीम के पत्तों, बकायन के पत्तों, परवल के पत्तों के ५० मि.ली. क्वाथ में पिपली चूर्ण व सेंधा नमक व मधु मिलाकर पिलायें। यदि एक बार में वमन न हो तो कुछ देर में पुनः औषधि पिलायें जिससे २-३ उल्टियां हो जायें। नस्य के लिये कायफल का महीन चूर्ण या श्वास कुठार रस नाक द्वारा सूंघा जा सकता है। कड़ुई तुम्बी का २-३ बूंद रस नथुनों में डाला जा सकता है। इन उपक्रमों से छींकें आती है तथा नाक से स्राव के रूप में कफ निर्हरित हो जाता है। त्वचा की रूक्षता दूर करने के लिये तैल मालिश व व्यायाम करना चाहिये तथा गुनगुने जल से स्नान करना चाहिये।

लघु, सुपाच्य व कम चिकनाई युक्त भोजन का प्रयोग करना चाहिये।

प्रकुपित कफ के कुप्रभाव से बचाव के लिये ६ छोटी हरड़ का चूर्ण बराबर मधु मिला कर प्रातः निहार मुंह व शाम को भोजन के बाद चाटकर ऊपर से जल पीना चाहिये। इसी प्रकार

ऋतुएं और हमारा स्वास्थ्य

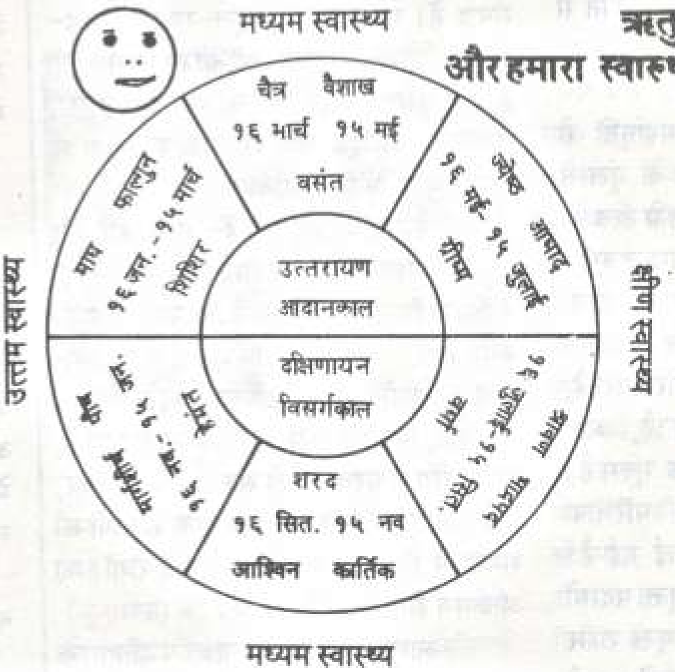

आदावन्ते च दौर्बल्यं विसर्गादानयोर्नृणाम् ।
मध्ये मध्यबलं त्वन्ते श्रेष्ठमग्रे विनिर्दिशेत् ।।-च.सू. ६.८

कुछ दीपक पाचक औषध द्रव्यों का सेवन नियमित रूप से करना चाहिये। जैसे-सोंठ, पीपल, अदरख, हींग, अजवाइन, नरसार कागजी नीबू आदि।

भोजन में पुराना जौ, गेहूं, चावल, मूंग, मसूर, लौकी बैंगन, बथुआ, गाजर, परवल, करेला, सेंधा नमक, मट्ठा, सिरका, कांजी, आमलकी, गोभी आदि खाना चाहिये। गुड़ या पिष्टी से बने गरिष्ठ खाद्य पदार्थ, खोये से बने मिष्ठान्न, तली हुई वस्तुयें नहीं खानी चाहिये।

भोजन ताजा व समय पर खाना चाहिये। स्वादिष्ट व सुपाच्य भोजन कम मात्रा में करना चाहिये। यदि आप कफज प्रकृति के हों तो खाने के बाद १०-१५ मिनट तक सीधे बैठे रहें । यदि वातज या पित्तज प्रकृति के हों तो खाने के बाद १०-१५ मिनट तक बाई करवट लेटें, इससे खाया हुआ भोजन ठीक प्रकार पचेगा। वसन्त ऋतु में अग्निमांद्य होने की संभावना सर्वधिक रहती है अतः आहार विहार पर विशेष ध्यान देना आवश्यक होता है। सूर्योदय से १ घंटा पहले उठना व टहलने जाना चाहिये दिन में सोना नहीं चाहिये यदि आप मांसाहारी हों तो जंगली पशु पक्षियों का चिकनाई रहित अंगारों पर भुना हुआ मांस ले सकते हैं। इसी प्रकार भुनी हुई चिकनाई रहित मछली भी ले सकते हैं।

इस ऋतु में अग्निमाद्य के लिये सामान्य रूप से चित्रकादि वटी २-२ गरम जल से, जुकाम के लिये नारदीय लक्ष्मी विलास रस की २-२ वटी पान के रस व मधु से दो बार लें। चन्द्रप्रभा वटी २-२ वटी स्त्रियों, बच्चों आमाशय व आन्त्रक्षत रोगी, क्षय रोगी, हृदय रोगी आदि को वमन न करायें। उन्हें सीधे कफ शामक उपरोक्त औषधि द्रव्यों का सेवन करना चाहिये। वातज प्रकृति वाले लोगों को कटु तिक्त व कषैले पदार्थों का अधिक लगातार सेवन नहीं करना चाहिये। कफज प्रकृति वाले इनका सेवन कर सकते हैं। इसी प्रकार कफज प्रकृति वाले लोगों को अधिक मधुर खट्टे गरिष्ठ पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिये क्योकि इससे कफ वृद्धि होगी और पहले से प्रकुपित कफ और भंयकर होकर कफज रोग उत्पन्न कर देगा।

पिछले अंक से

आयुर्वेद कल, आज और कल

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे, लखनऊ

आयुर्वेद अपौरुषेय है, सार्थक नामा है, समता के सिद्धान्त पर आधारित है और कर्मवाद का प्रखर समर्थक भी है। इसके अलावा भी आयुर्वेद की कई विशेषताएं हैं।

भारतीय दर्शन एवं विचारधारा के अनुसार ईश्वर से प्रकृति उत्पन्न हुई। प्रकृति से जीवात्मा, बुद्धि, मन और पंच तन्मात्राएं उत्पन्न हुई। पंच तन्मात्राओं का ही व्यक्ति रूप पंच महाभूत हैं। समस्त सृष्टि पंच महाभूतों से निर्मित है। इस प्रकार स्थूल सृष्टि के मूल में पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश ये तत्व हैं। आधुनिक विचारकों के अनुसार समस्त सृष्टि पदार्थ से निर्मित है। पदार्थ के तीन रूप हैः ठोस, द्रव और गैस। परन्तु पंच महाभूतों का सिद्धान्त तत्वों के केवल स्थूल रूप पर आधारित नहीं है, अपितु वह ज्ञानेन्द्रियों से संबद्ध है, अतः आधुनिक विचारधारा से भी अधिक सूक्ष्म है। इसी आधार पर 'पुरुष' की परिभाषा "पंचमहाभूत शरीरि समवायः" बताई गई है। पंचमहाभूतों के उल्लेख से केवल मुक्त पदार्थों का ही ज्ञान नहीं होता, जिससे स्थूल शरीर बना है बल्कि चेतनास्वरूप ज्ञानेन्द्रियों का भी समावेश हो जाता है।

अन्य चिकित्सा पद्धतियों और आयुर्वेद में एक विशेष भिन्नता यह भी है कि अन्य पद्धतियों में रोग की चिकित्सा की जाती है, जबकि आयुर्वेद के अनुसार पुरुष की चिकित्सा की जानी चाहिए क्योंकि यद्यपि रोग एक ही होता है, परन्तु प्रकृति भिन्नता अर्थात् दोष वैषम्य, धातुवैषम्य और गुण वैषम्य में भिन्नता के कारण एक ही रोग की चिकित्सा भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के लिए भिन्न होगी। यही कारण है कि आजकल रोग विशेष के लिए जो पेटेण्ट दवाएं सभी रोगियों को दी जाती हैं, उनके प्रभाव व्यक्तिशः भिन्न-भिन्न होते हैं और कई रोगी दवाओं के प्रभाव से अन्य विकारों से रुग्ण हो जाते हैं।

भारतीय विचारधारा और विशेषतः आयुर्वेद में व्यक्ति को पांच कोशों से निर्मित बताया गया है। ये पांच कोश हैं- अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश और आनन्दमय कोश, जो क्रमशः स्थूल शरीर, जीवन (प्राण/चेतना), मन, बुद्धि और आत्मा से संबद्ध हैं। यह सिद्धान्त स्थूल-सूक्ष्म, जड़-चेतन, आत्मा-परमात्मा सभी का समावेश करता है। इसी कारण केवल शरीर की स्वस्थता ही नहीं, मानसिक, बौद्धिक और आत्मिक स्वस्थता भी स्वस्थ पुरुष के लिए आवश्यक है।

प्रकृति के तीन गुण हैं- सत्व, रज और तम। दर्शनशास्त्र के इस सिद्धान्त को आयुर्वेद में त्रिदोष सिद्धान्त के रूप में अपनाया गया है। कफ, पित्त, और वात ये दोष प्रकृति के उक्त तीन गुणों का शरीर में प्रतिनिधित्व करते हैं। जब तक वात, पित्त और कफ साम्यावस्था में रहते हैं, व्यक्ति रोग से ग्रस्त नहीं हो सकता। जब आहार, विहार में त्रुटि, अतिसेवन, अल्पता से दोषों की समता में विभेद उत्पन्न होता है तभी रोगों का आक्रमण होता है।

आधुनिक चिकित्सा पद्धति के अनुसार अधिकांश रोग कीटाणु या विषाणु के आक्रमण से होते हैं। परन्तु इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि कीटाणु और विषाणु सर्वत्र विद्यमान हैं और सभी व्यक्ति उनकी चपेट में सदैव आते रहते हैं, परन्तु प्रत्येक व्यक्ति में रोग उत्पन्न नहीं होते। आयुर्वेद के अनुसार इसका सीधा कारण यही है कि प्रत्येक व्यक्ति में दोषों की स्थिति भिन्न होती है और कीटाणु/विषाणुओं का आक्रमण सफल नहीं हो पाता। अतः आयुर्वेद का दोषों की साम्यावस्था का सिद्धान्त कीटाणुओं/विषाणुओं के आक्रमण से बचने का सही उपाय है। यदि आहार और विहार पर नियंत्रण रखा जाय और दोष, धातु, अग्नि की साम्यावस्था शरीर में बनी रहे तो अधिकांश कीटाणु/विषाणु जन्य रोगों के आक्रमण की कोई संभावना नहीं रहेगी।

चिकित्सा

'कित् रोगापनयने' धातु से निष्पन्न चिकित्सा शब्द का अर्थ ही रोगों का निवारण है। *"प्रवृत्तिर्धातुसाम्यार्था चिकित्से त्यभिधीयते"* के अनुसार वैद्य की रोगनिवारण के लिए सोद्देश्य प्रवृत्ति ही चिकित्सा है। धातु वैषम्य रूपी विकार को दूर कर साम्यावस्था-स्वस्थता लाना ही चिकित्सा है। चरक के समय में चिकित्सा तीन रूपों में थीः-

(१) दैव व्यपाश्रय
(२) युक्ति व्यपाश्रय और
(३) सत्वावजय।

दैव व्यपाश्रय के अधीन ईश्वरोपासना, मंत्र, मणि, बलि, हवन, नियम, प्रायश्चित्त, उपवासादि आते हैं। युक्ति व्यपाश्रय में आहार, औषधि आदि की योजना और सत्वावजय के अधीन अहित पदार्थ आदि के संबंध में मनोनिग्रह आता है। प्राचीन काल में ही दैव व्यपाश्रय संबद्ध चिकित्सा गौण हो गई थी।

चिकित्सा के चार पाद आयुर्वेद में बताये गये हैं। वे हैं

(१) गुणवान वैद्य
(२) गुणकारक द्रव्य
(३) गुणवान परिचारक और
(४) रोगी

रोगी के लिए भी यह आवश्यक है कि वह वैद्य के निर्देश का पूर्ण पालन करें और वैद्य को अपना पूरा हाल बताये, कुछ भी न छिपाये।

आयुर्वेद की चिकित्सा में वानस्पतिक औषधियों का विशेष महत्व है। वनस्पतियाँ सर्वत्र सुलभ होती हैं, सस्ती होती हैं और उनका कोई गंभीर कुप्रभाव नहीं होता। वनस्पतियों का उपयोग भी प्रायः उनके मूलरूप में यथा जड़, तना, पत्ते, फूल और फल के रूप में होता है अतः आयुर्वेदीय चिकित्सा अमीर-गरीब सभी के लिए उपलब्ध हो जाती है।

आयुर्वेद में अनुपान पद्धति का बहुत महत्व है। अन्य चिकित्सा पद्धतियों में इस पर

कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। अनुपान की योजना दोषवैषम्य, अग्नि की स्थिति, रोगावस्था को ध्यान में रखकर की जानी है, जिससे औषधि का रोगी पर समुचित प्रभाव होता है। एक ही औषधि विभिन्न अनुपानों के प्रभाव से भिन्न-भिन्न रोगों में प्रभावी होती है।

आयुर्वेद के अनुसार *'नानौषधिभूतं जगति किंचिद् द्रव्यमस्ति'* अर्थात् संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो औषधि के रूप में प्रयुक्त न की जा सके। यहाँ तक कि गृह धूम कज्जली, चूहे की विष्ठा, बकरी/घोड़ा/ऊंट आदि के मूत्र का भी औषधि के रूप में विधान है।

रोग की पहचान और उसका कारण जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि उसके आधार पर ही चिकित्सा प्रभावी हो सकती है। निदान के लिए चरक ने निदान पंचक, यथा निदान, पूर्वरूप, रूप, उपशय और अनुपशय तथा संप्राप्ति, बताये है।

रोग के ज्ञान के लिए अष्ट स्थान परीक्षा, और दशविध परीक्षा का विधान है।

अष्टस्थान परीक्षा में नाड़ी, मल, मूत्र, जिह्वा, शब्द, स्पर्श, दृक और आकृति की परीक्षा बताई गई है।

दशविध परीक्षा में दूष्य, देश, बल, काल, अनल, वय, सत्व, सात्म्य, प्रकृति और आहार की परीक्षा बताई गई है। इस प्रकार निदान के विषय में भी आयुर्वेद परिपूर्ण है।

औषधि रूप द्रव्यों के भी रस, गुण, वीर्य, विपाक और प्रभाव को ध्यान में रखते हुये ही औषधि योजना का विधान है।

सामान्यतया भारतीय परम्परा पर एक अभियोग यह लगाया जाता है कि जो कुछ शास्त्रों में कहा गया है वही अन्तिम है किसी नई बात को ग्रहण करना शास्त्र विरुद्ध होने के कारण ग्राह्य नहीं होता। परन्तु यह अभियोग पूर्णतया निराधार है। चरकसंहिता में विमान स्थान के अध्याय में कहा गया है- *"बुद्धिमतोमित्रस्यापि धन्यं यशस्यमायुष्यं पौष्टिकं लौकिकमभ्युपदिशतो वचः श्रोतव्यमनुविधातव्यं"* अर्थात् शत्रु भी यदि कोई अच्छी बात कहे तो उसे भली भांति सुन-समझकर ग्रहण करना चाहिए। इसी आधार पर प्राचीन काल में समय-समय पर ऋषियों की संगोष्ठियां (विद्वत् संभाषा) होती थीं और अनुभवों के आधार पर नई-नई धारणाओं को मान्यता दी जाती थी। आयुर्वेद ने सदैव नई-नई पद्धतियों, औषधियों आदि को आत्मसात् किया है। प्राचीन काल में नाड़ी परीक्षा का विधान नहीं मिलता परन्तु बाद में योग एवं बाह्यप्रभाव से आयुर्वेद के पंडितों ने नाड़ी परीक्षा का महत्व समझा और उसे आत्मसात् किया। रसायनों के संबंध में भी यही स्थिति है और अनेक औषधियां, जिनका ज्ञान बाद में हुआ, आयुर्वेद में सम्मिलित की गई। इस प्रकार आयुर्वेद में प्रगति की जीवन्त परम्परा निरन्तर चलती रही है।

(क्रमशः)

पारिवारिक हिंसा : महिलाओं की सबसे बड़ी पीड़ा

विश्व में महिलाओं की पीड़ा का सबसे बड़ा कारण पारिवारिक हिंसा है। यह जानकारी संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (यूनीसेफ) की एक रिपोर्ट में दी गयी है। वैसे लगभग पांच लाख महिलाएं प्रतिवर्ष गर्भवस्था और शिशु को जन्म देते समय मर जाती हैं पर इसके खिलाफ इस सदी में आवाज कम ही उठाई गई। महिलाओं की पीड़ा का एक बड़ा कारण उनके पतियों का हिंसात्मक व्यवहार है।

रिपोर्ट में बताया गया है कि विश्व की एक चौथाई महिलाओं के साथ उनके घर में ही दुर्व्यवहार होता है। सामुदायिक आधार पर किए गए सर्वेक्षण के अनुसार दुर्व्यवहार और हिंसा की ऐसी घटनाएं थाईलैंड में ५० प्रतिशत महिलाओं के साथ तथा पाकिस्तान और चिली की ८० प्रतिशत महिलाओं के साथ होती है।

महिलाओं के साथ उनके पति की मारपीट पारिवारिक हिंसा का सामान्य रूप है। पति से पिटाई के बाद अस्पताल में भर्ती होने वाली महिलाओं की संख्या बलात्कार, गला घोंटने तथा सड़क दुर्घटनाओं की कुल घटनाओं से अधिक हैं। रिपोर्ट में बताया गया कि घर में महिलाओं पर हो रहे अत्याचार का पता लगाना जितना मुश्किल है उतना ही मुश्किल इसका समाधान है क्योंकि आमतौर पर ऐसे मामले में मित्र, संबंधी और पड़ोसी आदि दखल देना पसंद नहीं करते हैं तथा इस तरह की घटनाओं की शिकायत भी कम होती है। इसके अलावा इसमें हिंसा की अन्य घटनाओं की तुलना में ऐसे मामलों में कानून की मदद कम ही ली जाती है। रिपोर्ट के अनुसार ज्यादातर महिलाएं इसे अपनी नियति मानकर स्वीकार कर लेती हैं।

रिपोर्ट में कहा गया है कि महिलाओं में कभी-कभी इतनी हीन भावना आ जाती है कि वे अपने को मित्र और परिवार से अलग रखती हैं। इन घटनाओं से बच्चे भी प्रभावित होते हैं। पारिवारिक हिंसा से पीड़ित महिला को गर्भपात और औसत से कम वजन के शिशु जन्मने की संभावना अधिक बनी रहती है। इस तरह की महिलाओं के बच्चों में कुपोषण, स्कूल न जाने तथा बाद में हिंसक हो जाने की संभावना अधिक रहती है।

प्लेग को न भूलें

रमाकान्त मणि, कानपुर

यह रोग कई कारणों से होता है। यह रोग चूहों से फैलता है। बस्तियों के आस-पास गंदगी, कूड़ा-करकटका बना रहना, मलमूत्र का सड़ना, दिन में भीषण गर्मी, एवं रात्रि में अत्यधिक ठंड पड़ना भी इस रोग का कारण है।

रोगी के मल मूत्र की परीक्षा करने पर उसमें कोकोवेसिलस नामक जीवाणु पाये जाते हैं।

विशेष लक्षण

शरीर में विष प्रवेश होने के पश्चात् और रोग होने के पहले थकावट, सिर में पीड़ा, आलस्य, भूख न लगना, हाथ पैर में ऐंठन, कम्प, बगल और पुट्ठों में थोड़ा-थोड़ा दर्द आदि लक्षण प्रगट होते हैं। इसके बाद कभी-कभी एकाएक ज्वर हो जाता है और साथ ही शरीर में घाव, गांठों का उठ आना, जीभ में सूजन और लाली, बगल में जोरों का दर्द, नाड़ी क्षीण, ज्वर, प्यास, अनिद्रा, प्रलाप, श्वास का तीव्र रूप से चलना, मूत्र लाल होना, टट्टी का काला होना, मिचली होना, हृदय, प्लीहा, आदि में प्रदाह मालूम होना, अस्थिरता और शक्ति क्षीणता के लक्षण प्रारम्भ में ही प्रगट होने लगते हैं, रोगी में उठने की शक्ति कम होती है और वह बिस्तर पर छटपटाता है।

इस रोग को चार प्रकार का कहा जा सकता है जैसे

(१) गांठ का फूलना या प्रदाहित होना

(२) गांठ का न तो फूलना और न प्रदाहित होना (सेप्टोसोमिक प्लेग)

(३) श्वास-प्रश्वास द्वारा प्रभावित (न्यूमोनिक प्लेग)

(४) उदरामयिक।

सूरत में ब्यूबोनिक प्लेग ही अधिक आक्रामक एवं सांघातिक रूप से फैला था।

(१) ब्युबोनिक- इस रोग में गाँठ फूल जाती है। सिर घूमता है । सिर में भीषण पीड़ा होती है । फिर कम्पन देकर अत्यन्त तेज ज्वर होता है। आंखें लाल जी मिचलाना, कै, बात करने में जीभ का काँपना, आदि लक्षण दिखाई पड़ते है- और शरीर का तापमान १०२ से लेकर १०७ तक हो जाता है। नाड़ी की गति पहले सरल रहती है परन्तु बाद में क्षीण हो जाती है। जिह्वा में सफेदी, अधिक प्यास, प्रलाप, भय, कांख या जाँघ में गाँठ जिसे बाघी कहते हैं निकल जाती हैं। साधारणतः एक ही गाँठ फूलती है और उंगली से दबाने पर उस में बहुत पीड़ा होती है। रोग होने के पहले या दूसरे दिन से गाँठ फूलने लगती है आर सातवें या अठवें दिन तक पक जाती है और उसमें से बदबूदार पीप निकलने लगता है।

(२) मस्तिष्क आक्रामक या सेप्टीसीमिक - इसमें समूचे शरीर का रक्त दूषित हो कर मस्तिष्क आक्रान्त होता है। प्रायः शरीर की समस्त क्रियायें लगभग बंद हो जाती है। रोग के प्रारम्भ से ही शारीरिक तथा स्नायु मण्डल की दुर्बलता मालूम होती है।

(३) श्वास प्रश्वास द्वारा ताऊन- यह बहुत ही सांघातिक रोग है। श्वास-प्रश्वास द्वारा मनुष्य के शरीर में विष प्रवेश कर फुफ्फुस या छाती में जकड़न के सभी लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। कभी-कभी गाँठें कुछ-कुछ फूलती हुई दिखाई देती हैं। ऐसी स्थिति में मृत्यु की संभावना अधिक रहती है। अक्सर दो तीन दिन में ही रोगी की जीवन लीला समाप्त हो जाती है।

(४) उदरामयिक महामारी - इस प्लेग में पाकाशय और आँतें रोग से आक्रान्त होती हैं। इसमें कुछ तो हैजा और कुछ सन्निपातिक ज्वर के से लक्षण प्रकट होते है और कै, मिचली, उदर फूलना, उदरामय आदि लक्षण रहते हैं।

महामारी रोग का परिणाम प्रायः प्राणघातक होता है। परन्तु प्रतिरोधक उपायों से उसे मिटाया भी जा सकता है। जिस समय यह सांघातिक रोग फैल रहा हो उसके प्रतिरोध के लिए सदा स्वच्छता पर विशेष ध्यान देना चाहिये। स्वच्छ एवं साफ सुथरे मकान में रहना चाहिये। मकान की सफाई करने पर जो कूड़ा कचरा निकले उसे बहुत दूर फेक दें या जलाने योग्य हो उसे जला दिया जाना चाहिये।

मकान की टट्टी मोरी, पनाले सदा साफ रखना चाहिये। प्लेग के समय मकान में चूना लगवा देना बहुत ही आवश्यक तथा अच्छा होता हे। मकान में सदा धूप आदि दुर्गन्ध नाशक पदार्थ जलाना, हवन आदि करना चाहिये जिससे शुद्ध वायु मिलती रहे। मकान के चारों ओर पनाले आदि स्थानों में कीटनाशक और औषधि का छिड़काव करना चाहिये।

सावधानियाँ

इस रोग के वाहक चूहे होते हैं। रोग के जीवाणु (पिस्सू) चूहों पर प्रथम आक्रमण करते हैं। जिसके कारण चूहे मर-मर कर रोग को फैलाते हैं। चूहे भाग भाग कर घरों में जाते हैं जिससे यह रोग अधिक फैलता है। जब चूहे मरते है उस समय अधिक सावधान रहना चाहिये। मरे हुए चूहों को कार्बोलिक एसिड लोशन में डुबो कर बहुत दूर जमीन में काफी गहरे गाड़ देना चाहिए। जिस मकान में चूहे मरते हों उसकी दीवारों पर चूना करवा देना चाहिये। नीम की पत्ती जलाने से भी लाभ होता है। इसके धुएं से रोग फैलाने वाले जीवाणु नष्ट हो जाते है। जहाँ तक हो सके ऐसे मकान में उस समय रहना नहीं चाहिये। इस रोग के रोगी के बिस्तर एवं कपड़े जला देना चाहिए। चिंता न करें रोग से भयभीत न हों। रोग के सम्बन्ध में चिन्ता न करें। रोगी के संसर्ग से बचें।

असीमित एवं अनियमित आहार, अधिक परिश्रम, रात्रि जागरण, शराब का सेवन, भय, चिन्ता, मानसिक चिन्ता, प्रगति का त्यागना अधिक हितकर है।शुद्ध, स्वच्छ, भोजन, पानी प्रयोग कराना अधिक लाभदायक है। घी, मक्खन प्रयोग लाभदायक है।

खट्टी चीजें, नमक से प्लेग का विष नष्ट होता है। अतः नीबू का प्रयोग हितकर होगा। सरसों का शुद्ध तेल शरीर में मालिश करना चाहिए इससे विष नष्ट होता है। सरसों के तेल

की मालिश कर स्नान करना चाहिये। अतः इस रोग से बचने के लिए स्वच्छता सर्वोत्तम उपाय है।

आयुर्वेद के अनुसार कुछ औषधोपचार अत्यन्त लाभकारी हैं।

- कौड़िया लोहबान या नीम की पत्ती की धूनी देना।
- एलुआदि बटी प्लेग से बचाव के लिए बहुत ही अनुभूत है।

बनाने की विधि

एलुआ १ तोला केशर असली ६ ग्रा. मुरमकी ६ माण कूट पीस कर गुलाब जल में मिला कर जंगली बेर के समाल गोली बना कर रख लें हर तीसरे दिन एक गोली खाने से प्लेग की बीमारी से काफी बचाव रहता है।

- प्लेग के कै और टट्टी पर आजमूदा पलास्तरः–

विधिः गुलरोगन, सिरका, गुलाबजल, समान भाग लेकर कपड़े में तर करके रोगी के नाभि के बाईं ओर रक्खें जब कपड़ा गरम हो जावे तब दूसरा ताजा पलस्तर रक्खें। इससे दस्त व मिचली दूर होगी।

- एक लीटर पानी में २ तोला बड़ी इलायची के छिलके डाल आग पर पानी उबाला जाये जब आधा रह जाय तब पीपल की छाल को जला कर पानी में बुझा दिया जाय। पानी को छानकर किसी मिट्टी के पात्र में रख लें। प्यास लगने पर इसी पानी को रोगी को पिलाया जावे इससे प्यास का वेग कम होगा।
- संजीवनी वटी जल से दिन में २ बार १,१ वटी देवें।
- सिरका २० ग्रा. गुलाबजल ५० ग्रा. गुलरोगन, १० ग्राम लेकर पानी में मिला कर कपड़े में भिगो रोगी के सिर पर पट्टी देने से बेहोशी तथा ज्वर का वेग कम हो जायगा।
- माँजा की कली १२ ग्राम–आग में जला कर राख बना लेवें। ३० ग्राम अदरक के रस में खरल कर मूंग के दाने के बराबर गोली बना कर रख लेवें। १–१ गोली शहद के साथ ३–३ घंटे पर देवें। इससे महामारी का ज्वर शान्त होगा।
- निम्बादि वटी– एक–एक घन्टे बाद पानी से खिलाने से महामारी का ज्वर कम होगा।

बनाने की विधि

नीम के कोमल सूखे पत्ते १२ ग्राम– काली मिर्च १० ग्राम अतीस १० ग्राम– शुद्ध कपूर १० ग्राम–कूट पीस कर सरल में पानी से पीस मटर भर की गोलियाँ बना एक–एक घन्टे पर १–१ गोली सेवन करने से महामारी का ज्वर उतर जाता है।

- जब गिल्टी भर रही हो उस समय शहद चूना, पीने का तम्बाकू, मिला कर गिल्टी पर बांधें गिल्टी बैठ जायगी या बड़ी होगी तो फूट जायगी।
- **रोगी के पेट में दर्द होः–** घी में सेंधा नमक घिस कर पेट पर धीरे–धीरे मलने से दर्द कम होता है।
- **यदि गिल्टी पक कर फूट गई हो –** सरसों के तेल में मोम पकाकर सिन्दूर मिला कर लगाने से घाव आसानी से सूख जाता है।
- सिरस के फूल और पत्ते २ किलो। काली मिर्च ३० ग्राम पानी २० लीटर। सब कूट कर पानी में मिला देवे और १२ घंटे भीगने देवें। इसके बाद भभके से अर्क निकाल लेवें और बोतल में भर कर रख लेवें। १–१ छंटाक के अनुमान से रोगी को पिलाते रहें अवश्य लाभ होगा।
- गिल्टी पर सिरस की पत्ती और सेंधा नमक मिला कर लुगदी बना कर बार–बार बांधते रहें अवश्य बैठ जायगी।

पुराने अंक बिना डाक खर्च के

जीवनीय के पाठक पुराने अंकों के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए हमें बहुत से पत्र भेजते हैं। ऐसे सभी जिज्ञासु पाठकों के लिये, जो पुराने उपलब्ध अंक प्राप्त करना चाहते हैं, इस समय हमारे पास उपलब्ध अंकों की सूची हम यहां प्रस्तुत कर रहे हैं –

१९८९	१९९०	१९९१	१९९२	१९९३	१९९४
शरद रु.५	मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य रु.८	वसंत रु.६	योग विशेषांक रु.८	किशोरावस्था विशेषांक रु.१०	महिला स्वास्थ्य विशेषांक रु.१२
हेमंत रु.५	वर्षा रु.५	ग्रीष्म रु.६	नैत्र सुरक्षा विशेषांक रु.१०	अस्थिरोग विशेषांक रु.१०	मानसिक स्वास्थ्य विशेषांक रु.१२
	शरद रु.५	यकृत रोग विशेषांक रु.६	उदर रोग विशेषांक रु.१०		
	हृदय रोग विशेषांक रु.८	दंत सुरक्षा रु.६			
		वृद्धावस्था विशेषांक रु.६			

ये सभी अंक ऊपर लिखी हुई पुरानी दरों पर बिना डाक–शुल्क के उपलब्ध हो सकते हैं यदि आप कम से कम रु.२५ मूल्य की पत्रिकाओं का ऑर्डर एक साथ भेजकर उसका अग्रिम भुगतान मनीऑर्डर या बैंक ड्राफ्ट द्वारा करें। पत्रिकाएं रजिस्टर्ड डाक से मंगाने के लिए रु.७ जोड़ कर भेजें।

दुनिया में परिवार संस्था का पतन

जेठानी जी, साथ रहने का लाभ तो हम दोनों को है।

भारत डोगरा, नई दिल्ली

अनेक देशों में, विशेष रूप से औद्योगिक देशों में परिवार संस्था पतन की दिशा में अग्रसर है। विश्व के अनेक भागों में पहले संयुक्त परिवारों के विघटन की प्रक्रिया शुरू हुई, जो कि आज भी जारी है। उसके स्थान पर जो केन्द्रीय परिवार संस्था (पति, पत्नी और बच्चे) आयी, वह भी अनेक देशों में टूट चली है और कुछ समृद्ध देशों में यह टूटना अपनी चरम अवस्था में है।

१९५५-५८ ई. के दर्म्यान इंग्लैण्ड में खंडित विवाहों की संख्या छह गुनी हो गयी। एकाकी जीवन व्यतीत करने वालों का प्रतिशत १९७१ ई. में १७ था, जो १९८८ तक २६ हो गया। विवाह के बगैर उत्पन्न होने वाले बच्चों का प्रतिशत १९५५ ई. में पांच से १९८८ ई. में २५ तक बढ़ कर पांच गुना हो गया। ३०-३४ वय के अविवाहित युवाओं का प्रतिशत १९८० ई. में १५ से १९८७ ई. में २२ हो गया। यदि वर्तमान प्रवृत्ति जारी रहा, तो इंग्लैण्ड में लगभग २० प्रतिशत बच्चे १६ वर्ष की वय को प्राप्त होने से पूर्व अपने माता-पिता के बीच तलाक के लिए होने वाले संघर्ष के शिकार हो जायेंगे।

संयुक्त राज्य अमरीका में ५० प्रतिशत विवाहों का अंत तलाक में होता है। वहां के लगभग आधे बच्चे १६वें जन्म दिवस तक पहुंचते-पहुंचते अपने माता-पिता के तलाक के मानसिक आघात से पीड़ित हो जाते हैं। लगभग १० लाख से ३० लाख बच्चे अपनी १९ साल तक की कमसिन माताओं के साथ रहते हैं जिन में से आधी अविवाहित हैं। पाँच वर्ष से कम आयु के लगभग ६० लाख ऐसे बच्चे अपनी उन माताओं के साथ रह रहे है जिन्होंने किशोरावस्था में ही प्रसव किया था। विवाहेत्तर यौन संबंधों से उत्पन्न बच्चों का प्रतिशत अमरीका में १९९१ में ३० था।

डेनमार्क और स्वीडन की स्थिति तो और भी खराब है, जहाँ विवाहेतर बच्चों का प्रतिशत क्रमशः ४७ और ५२ है। डेनमार्कऔर स्वीडन में स्त्रियों के प्रथम विवाह की औसत वय भी बहुत अधिक, क्रमशः २९ और ३० है। डेनमार्क में तलाक की दर ४८ प्रतिशत है। यह फिनलैंड में अधिकतम ५८ प्रतिशत है।

अमरीका में रोग नियत्रण केन्द्र के सर्वेक्षण के अनुसार ४० प्रतिशत किशोर नवीं कक्षा तक पहुंचते-पहुंचते सहवास का अनुभव कर चुके होते है। वहाँ लड़कों के लिए प्रथम सहवास की औसत उम्र १६ और लडकियों के लिए १७ है। ३३ प्रतिशत लड़कों और २० प्रतिशत लड़कियों ने बताया कि उन्होंने १५ वर्ष की उम्र से पहले ही सहवास कर लिया था। अनेक किशोरों ने कहा कि उनके चार या इससे भी अधिक यौन साथी है।

इसका एक परिणाम तो यही है कि अमरीका में २५ लाख किशोर यौन रोगों से ग्रस्त है। दूसरा यह कि ऐसी किशोरी माताओं की संख्या अत्यधिक है जिन्हें एकाकी जीवन व्यतीत करते हुए अति कठिन आर्थिक अवस्थाओं में बच्चे का लालन-पालन करना पड़ रहा है। ऐसे बच्चों का बचपन सामान्य और सुखी होने की आशा अत्यंत क्षीण है।

तलाकशुदा माता अथवा पिता के साथ पल रहे बच्चों का जीवन भी दुखमय है। इस दुख की छाया उनकी शिक्षा, आत्मसम्मान और भावी जीवन पर भी अपना दुष्प्रभाव छोड़े बगैर नही रहती।

ऐसे घरों में स्थिति और भी विकट होती है जहाँ तलाकशुदा अभिभावक ने पुनर्विवाह कर लिया है। इससे बच्चे को अनेक सौतेले भाई-बहनों के साथ रहना पड़ सकता है, जिससे बच्चों तथा माता-पिता में परस्पर अनेक भ्रांतियां और संघर्ष हो सकते है। ऐसे परिवारों में बच्चे के साथ दुर्व्यवहार एक आम बात है।

प्रायः तलाक का अंतिम प्रभाव जोड़ीदारों पर भी बुरा ही होता है। यद्यपि प्रारंभ में दोनों को राहत महसूस होती है। आकड़ों से स्पष्ट होता है कि तलाक और उससे होने वाले एकाकीपन और तनाव से विविध गंभीर स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

अवश्य ही कई मामलों में स्त्रियों के साथ इतना दुर्व्यवहार होता है कि तलाक वांछनीय हो उठता है। लेकिन तलाक की अत्यधिक बढ़ती प्रवृत्ति चिन्ताजनक है। इससे तलाक प्राप्त स्त्री पुरुष और उनकी संतानों में विविध शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं आगामी वर्षो में उठ खड़ी होगीं और हिंसा, विशेष रूप से किशोर हिंसा भी बढ़ेगी।

आज जबकि पति-पत्नी संबंध भी अत्यंत नाजुक हुए जा रहे हैं, यह कहना कि संयुक्त परिवारों की सुरक्षा की जानी चाहिए, आदर्शवाद होगा, लेकिन संपूर्ण शक्ति के साथ इसका प्रयास किया जाना चाहिए। कुल आबादी में वृद्धों की संख्या सभी देशों में बढ़ रही है। वृद्धाश्रमों की निरंतर बढ़ती संख्या के बावजूद, बुढ़ापे के लिए संयुक्त परिवार का कोई जवाब नहीं है। यह बूढ़ों के लिए ही नहीं अपितु उनके नाती-पोतों के लिए भी श्रेयस्कर है। दादा-दादी एवं नाना-नानी के साथ बिताये क्षण बच्चों के लिए सर्वाधिक सुखद होते है और इस थाती का संवर्धन होना ही चाहिए।

परिवारों को टूटने से बचाने के लिए लोगों को कम आत्मकेंद्रित, कम आक्रामक और दूसरों के कल्याण के प्रति अधिक चिंताशील होना पड़ेगा। ये गुण संयुक्त परिवारों में अच्छी तरह पनपते हैं और हमारे जीवन के अनेक क्षेत्रों में बहुत काम आते हैं। *(एन.एफ.एस. फीचर्स)*

पारंपरिक मर्मचिकित्सक

वैद्य वी. धर्मलिंगम

३९ वर्षीय वैद्य धर्मलिंगम पर परिवार की परंपरा का गहरा असर है। उन्होंने अपनी स्कूली शिक्षा के साथ-साथ माता-पिता से पारंपरिक वैद्यक के अतिरिक्त विष चिकित्सा व अस्थि रोगों की चिकित्सा सीखने में रुचि ली। उन्होंने तत्कालीन ट्रावनकोर विश्वविद्यालय (अब एम.जी.आर. विश्वविद्यालय) के अंतर्गत पी.वी. कालेज से 'सिद्धा' चिकित्सा पद्धति के साढे पाँच वर्षीय स्नातकीय पाठ्यक्रम का अध्ययन करने के बाद स्नातकोत्तर डिप्लोमा सिद्धा मार्थ कल्लूरी मुजुरई से किया। कुछ वर्षों तक ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत रहने के पश्चात वैद्य धर्मलिंगम को तत्कालीन तमिलनाडु सरकार के देशी चिकित्सा पद्धति विभाग के निदेशक, श्री इलांगोवन ने १९८६ में मद्रास के अन्ना अस्पताल में प्रशिक्षक वैद्य के रूप में आमंत्रित किया। लोक स्वास्थ्य परंपरा संवर्धन समिति परिवार से संपर्क में आने पर वैद्य धर्मलिंगम ने समिति के प्रशिशुओं के साथ भी सक्रिय रुप से कार्य किया है। १९८८-८९ से वैद्य धर्मलिंगम ने मद्रास में रहकर चिकित्सा कार्य करने का निर्णय किया और संप्रति अपनी पत्नी डा. भागेश्वरी के साथ 'धर्मा क्लिनिक' चला रहे हैं। यद्यपि डा. भागेश्वरी आधुनिक चिकित्सा पद्धति की स्नातक हैं वे भी पारंपरिक 'सिद्धा' व मर्मचिकित्सा में विशेष रुचि लेकर पारंगत हुई हैं। वैद्य धर्मलिंगम विशेषकर पोलियो, गठिया, दमा, पक्षाघात अस्थि व मानसिक रोगों की चिकित्सा करते हैं। पिछले दिनों आपने श्री सी.पी. रामास्वामी अय्यर के मानसिक रूप से विक्षिप्त 'स्पास्टिक' बच्चों के स्कूल के साथ ऐसे बच्चों की चिकित्सा का एक विशेष अनुसंधान कार्यक्रम लिया है। इसके अंतर्गत किए जा रहे बच्चों की चिकित्सा में प्रगति का विवरण डाक्टरों के साथ-साथ स्कूल की शिक्षिकाएं भी नियमित रूप से करती है। पिछले दिसंबर में जीवनीय के संपादक डा. नरेंद्र मेहरोत्रा ने मद्रास में वैद्य धर्मलिंगम के क्लीनिक में जाकर न केवल उनसे विस्तृत साक्षात्कार किया वरन् अपने पीठ दर्द का सफल इलाज भी करवाया। उनसे साक्षात्कार का विवरण निम्नवत है।

१४ पीढ़ियों से मर्मचिकित्सा एवं सिद्द परंपरा वाले परिवार के तीन भाइयों में सबसे छोटे, वैद्य धर्मलिंगम नागरकोइल जिले के मानवेलुकुर्ची गांव के निवासी हैं। आपके पिता (स्व.) श्री वेलुमैयल तिरुवनंतपुरम रियासत से महल में चिकित्सक के रूप में नियुक्त थे। आज भी वैद्य धर्मलिंगम को रियासत से वार्षिक भत्ता मानदेय के रूप में मिलता है (अलबत्ता इतनी कम राशि को लेने अब वे नहीं जा पाते हैं)। इनकी मां स्त्री रोगों की चिकित्सा में विशेष पारंगत थी। उनके द्वारा प्रयोग में लाने वाली पोलियो व मासिक धर्म में अनियमितताओं जैसी कई बीमारियों की चिकित्सा के नुस्खे वैद्य धर्मलिंगम अभी तक प्रयोग में लाते हैं। उनके द्वारा विशेष जड़ी बूटियों से बनाई जाने वाली औषधि के सेवन से न केवल प्रसव सामान्य होता है वरन् होने वाले बच्चे की पोलियो से रोकथाम भी होती है। उन्होंने इस दवा को ६०० से अधिक महिलाओं पर प्रयोग किया है और उनमें से किसी के भी बच्चे को पोलियो का असर नहीं हुआ है।

धर्मा क्लीनिक, मद्रास : तीन वर्ष का एक बच्चा जिसके माता-पिता को उसके जीवन के भविष्य के प्रति कुछ भी आशा नहीं थी, पिछले माह से उसकी 'वर्मा' चिकित्सा से हुई प्रगति से संतुष्ट हैं। तेरह वर्षीय अब्दुल जब ३ माह पूर्व हाइड्रोसिफैलस नामक रोग से ग्रस्त आया था तब ठीक से उठ बैठ भी नहीं पाता था, आज वह अपने आप खड़ा हो पाता है। ५४ वर्षीय श्री सुब्रमणियन् के मस्तिष्क के ट्यूमर निकालने की सर्जरी के बाद दाईं आँखों की रोशनी लगभग समाप्त हो गई थी जो २ माह की चिकित्सा से आने लगी है। ये सभी व ऐसे बहुत से रोगी दूर-दूर से वैद्य धर्मलिंगम से चिकित्सा करवाने उनके टेनमपेट स्थित क्लीनिक में नित्य आते हैं उन्होंने मद्रास से लगभग ३० किमी दूर श्रीपेरुम्बुदूर में जिस कांप्लेक्स को विकसित करने का प्रयास किया है, वहाँ भी डा. मेहरोत्रा ने जाकर विवरण लिया है।

डा. मेहरोत्रा: *वैद्य जी आप किस तरह के रोगियों का इलाज करते हैं?*

वैद्य धर्मलिंगम: वैसे तो हम लोग सभी प्रकार के रोगियों का इलाज 'सिद्धा' व आयुर्वेद के अनुसार करते हैं पर हमारे क्लीनिक में दमा, अस्थिरोग, पक्षाघात, पोलियो, गठिया व काफी समय से तंत्रिका तंत्र के पीड़ित रोगी बहुत आते हैं। इधर हमे अंतःस्त्रावी ग्रंथियों के रोगों से प्रभावित जैसे बौने व तंत्रिका तंत्र के प्रभावित 'स्पास्टिक' बच्चों की चिकित्सा में भी विशेष सफलता मिली है। मैंने गठिया आदि रोगों के लिए जनसाधारण से लेकर तमिलनाडु व केरल के कई मंत्रियों, राज्यपाल श्री चेत्रा रेड्डी व गांधीग्राम ग्रामीण विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति डा. देवेन्द्र कुमार का पक्षाघात भी उपचार किया है। हाल ही में मैंने

महामहिम राष्ट्रपति श्री शंकर दयाल शर्मा जी का उपचार भी आरंभ किया है।

डा. मेहरोत्राः *ये 'वर्मा' या मर्म चिकित्सा क्या है?*

वै. धर्मलिंगमः 'वर्मा कलई', 'सिद्धा' चिकित्सा का एक अंग है जबकि मर्मचिकित्सा, आयुर्वेद चिकित्सा का भाग है, वैसे दोनो लगभग एक समान ही हैं। दक्षिण भारत के कुछ प्रदेशों में विशेषकर नागरकोइल व कन्याकुमारी जिलों में अभी वर्माकलई से उपचार करने वाले 'वर्मा–आसन' काफी संख्या में मिलते हैं, पर इनके क्रमबद्ध विकास की बड़ी आवश्यकता है। इस ज्ञान के अनुसार शरीर में १०८ 'वर्मा' बिंदु होते हैं (ऐसे ही १०८ बिंदु सुश्रुत ने भी बताए हैं)। इन बिंदुओं से होकर जीवनी–शक्ति जाती है जिनका मार्ग अवरुद्ध हो जाने के कारण रोग होते है जबकि इन 'वर्मा' बिंदुओं में सामंजस्य होने से मनुष्य स्वस्थ रहता है। इन्हीं बिंदुओं पर दबाव डालकर इनके मार्ग को स्फूर्त करने से रोगों का उपचार करते हैं।

डा. मेहरोत्राः *आपने वर्मा कलई व मर्मचिकित्सा में जो संबंध बताया उस पर कुछ प्रकाश डालिए।*

वै. धर्मलिंगमः वर्मा बिंदु भी वात–पित्त–कफ के सिद्धांतों पर ही कार्य करते हैं जैसे शरीर के निचले भाग के 'वर्मा' बिंदु वात प्रधान होते हैं, सिर के वर्मा बिंदु पित्त प्रधान होते हैं व हृदय के वर्मा बिंदु कफ प्रधान होते हैं। इनमें से पित्त वाले वर्मा बिंदु जो मस्तिष्क पर प्रभाव डालते हैं सबसे अधिक संवेदनशील होते हैं । अतः शिक्षा के अनावश्यक बोझ से व टी.वी. आदि से आजकल बच्चों में मानसिक रोग अधिक होते हैं।

डा. मेहरोत्राः *अपनी चिकित्सा विधि में आप किस प्रकार के उपचार को प्रयोग में लाते हैं।*

वै. धर्मलिंगमः हम अपनी चिकित्सा में आवश्यकतानुसार आयुर्वेद व 'सिद्धा' की औषधियों का प्रयोग तो करते ही हैं, 'वर्मा–बिंदुओं' को सक्रिय करने के लिए उन्हें उचित प्रकार से दबाते हैं व तेल से मालिश करके सेंकाई भी करते हैं। किसी–किसी स्थान के वर्मा–बिंदु विकृत हो जाते हैं या मृत हो जाते हैं पर मुख्य वर्मा–बिंदु कभी मरता नही है अतः उचित उपचार से धीरे–धीरे सक्रिय हो जाता है। चूंकि केवल सहयोगी बिंदु ही प्रभावित होते हैं, वे तेल मालिश व उचित दबाव से पुनः सक्रिय हो जाते हैं।

डा. मेहरोत्राः *क्या आप अपने पूर्वजों द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाले पारंपरिक नुस्खे भी प्रयोग में लाते हैं।*

वै. धर्मलिंगमः मेरी मां कई विशेष औषधियाँ घर पर बनाती थी, मैं आज भी उन्हें प्रयोग में लाता हूं।मेरे पिता यकृत रोग व दमा–खाँसी आदि की कुछ विशेष औषधियाँ बनाते थे। इसके अतिरिक्त उनके द्वारा प्रयोग में लाया जाने वाला तेल भी हम मालिश में प्रयोग करते हैं।

डा. मेहरोत्राः *क्या आपने वर्मा कलई के उपयोग में कोई नए प्रयोग किए हैं?*

वै. धर्मलिंगमः मेरी पत्नी आधुनिक चिकित्सा की स्नातक है अतः हम रोग का आधुनिक चिकित्सा के मापदंडों के आधार पर भी आंकलन करते हैं। इसी कारण हम हर रोगी का विस्तृत इतिहास सहित, उपचार से हो रहे लाभ–हानि का नियमित आंकलन करने के लिए एक कार्ड बनाकर अपने पास भी रखते हैं। इससे हमें रोगी के उपचार में भी सहायता मिलती है। हमने मंदबुद्धि (स्पास्टिक भी) बच्चों की शारीरिक व मानसिक कमजोरियों को दूर करने के लिए कुछ विशेष प्रयास किए हैं। इसमें हमने सर सी.पी. रामास्वामी अय्यर स्कूल के कुछ बच्चों पर नियमित उपचार के विवरण क्रमबद्ध रूप से सूचीबद्ध किए हैं। स्कूल के शिक्षक भी इन

बच्चों का नियमित आंकलन करते हैं। हमें इसमें आशातीत सफलता मिल रही है।

डा. मेहरोत्राः *इस चिकित्सा पद्धति को आगे बढ़ाने के लिए आपकी क्या योजनाएं हैं?*

वै. धर्मलिंगमः मैं 'वर्मा कलई' में प्रशिक्षण के लिए एक साढ़े पाँच वर्षीय कोर्स शुरू करना चाहता हूं। इसके लिए पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों पर आधारित एक कालेज की स्थापना का प्रयास है। कालेज के साथ एक अस्पताल व औषध निर्माण शाला का भी प्रावधान है। लगभग १०० बिस्तरों वाले अस्पताल में विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों से इलाज के साथ-साथ कुछ विशेष चिकित्सा के लिए (जैसे मंदबुद्धि बच्चों) तथा प्रशिक्षण केंद्र आदि भी चलाने का सुझाव है। इसके लिए आवश्यक कदम उठा रहे हैं। मद्रास से लगभग ३० किमी. दूर श्रीपेरुम्बुदूर (जहाँ भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी की हत्या हुई थी) के पास लगभग ३० एकड़ भूमि का प्रबन्ध कर लिया है जहां औषध निर्माण के साथ औषधीय पौधों की कृषि, बागवानी व उद्यान भी लगाया है।

डा. मेहरोत्रा : *इन विषयों की शिक्षा देने के लिए आपके क्या मापदंड होंगे ? क्या आप इस ज्ञान को गुप्त नहीं रखना चाहेंगे ?*

वै धर्मलिंगम : यह सही है कि 'वर्मा' का ज्ञान सभी को न देकर परिवार के कुछ सदस्यों तक ही सीमित रखा जाता था, पर इसका उद्देश्य जनकल्याण ही होता था ताकि कोई कुपात्र इसका दुरुपयोग न कर सके। हमें भी इस ज्ञान के प्रसार के लिए सुपात्र ढूढ़ने होंगे। वैसे भी इसके विशेषज्ञों, 'वर्मा-आसनों' की काफी कमी हो रही है। अतः आवश्यक है कि इसके ज्ञान का उचित प्रचार-प्रसार सुपात्रों के जरिए जन-जन के कल्याण के लिए किया जाए। इसलिए मैं इसका कालेज खोलना चाहता हूं।

डा. मेहरोत्रा : *इसकी शिक्षा व आगे अनुसंधान के बारे में आपके क्या विचार हैं ?*

वै. धर्मलिंगम : इसकी शिक्षा मूलतः आयुर्वेद - सिद्धा के सिद्धांतों के आधार पर ही दी जाएगी जिसके लिए विस्तृत पाठ्यक्रम तैयार कर रहे हैं। फिलहाल तो इसके अनुसंधान में अधिक जोर चिकित्सीय परीक्षणों पर उनकी क्रमबद्ध रूप से विवेचना से ही होगा। किन्हीं परिस्थितियों में आधुनिक जाँच जैसे एक्स-रे, ई.सी.जी. व रक्त-परीक्षण आदि से भी इसके प्रभाव को स्पष्ट रूप से दर्शाया जा सकता है

डा. मेहरोत्रा : *आज के परिप्रेक्ष्य में वर्माकलाई की क्या प्रासंगिकता है ?*

वै. धर्मलिंगम : मुझे पूरा विश्वास है कि आज की परिस्थिति में भी इस चिकित्सा पद्धति का काफी महत्व है। प्राथमिक उपचार से लेकर अन्य कई बीमारीयां जितका जिक्र मैंने ऊपर किया है, उस सभी में बिना किसी शल्य क्रिया के सफल उपचार किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त कई रोग जिनका इलाज आधुनिक चिकित्सा में नहीं है जैसे गठिया फालिज, मंदबुद्धि (स्पास्टिक), दमा आदि, उनका सफल उपचार 'हम इस विधि से करते हैं।

औषध-निर्माण, चिकित्सा एवं शिक्षा केंद्र

मद्रास से लगभग ३० किमी दूर श्रीपेरुम्बुदूर गांव में (जहां भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी की हत्या हुई थी वहां से लगभग १ किमी दूर) वैद्य धर्मलिंगम ने अपने औषध निर्माण, चिकित्सा एवं शिक्षा केंद्र की स्थापना एक चैरिटेबल ट्रस्ट के रूप में है। फिलहाल वहां पर कुछ औषधीय एवं फलों के पौधों की खेती के साथ औषध निर्माण कार्य विशुद्ध पारंपरिक पद्धति से शुरू किया गया है। वैद्य धर्मलिंगम स्वयं सप्ताह में एक दो बार

वहां जाकर औषध निर्माण कार्य की देखरेख करते हैं। चिकित्सालय के लिए लगभग २०-२५ कुटियों का निर्माण कार्य अगले चरण में प्रारंभ होने जा रहा है जिसमें प्रशिक्षण केंद्र के लिए एक पारंपरिक चिकित्सा महाविद्यालय की अनुमति के लिए प्रस्ताव तमिलनाडु सरकार के विचाराधीन है।

फिलहाल लगभग ४० से अधिक औषधीय पौधों की खेती के साथ-साथ नारियल व केले के उद्यान भी लगाए गए हैं। नारियल का तेल औषध निर्माण में प्रयुक्त हो सकेगा। चिकित्सा के कार्य में प्रयोग किए जा रहे मालिक्ष के लिए व हड्डी जोड़ने वाले औषधीय तेल, केश तैल, अवलेह,चूर्ण आदि कई औषधियों का निर्माण कार्य हो रहा है जिसकी मांग भी पूरी नहीं हो पा रही है। दमा के लिए तथा बुद्धि-विकास के लिए भी कुछ विशेष औषधियों के निर्माण के साथ साथ गर्भावस्था के दौरान प्रयोग किए जानी वाली औषधियाँ भी बनाई जा रही हैं।

कैंसर का टीका बनाने का प्रयास

कैंसर का टीका वैज्ञानिकों का एक सपना-सा ही है। कई बार लगता है कि बस अब वहां पहुंचे, पर रह जाते हैं। एक बार फिर आशा की किरण नजर आई है। फोर्डहैम विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क के डॉ. प्रमोद श्रीवास्तव ने एक नई तकनीक का उपयोग किया है, जिससे लगता है कि कैंसर का टीका विकसित होने के अलावा एड्स वाइरस से निपटने का भी एक तरीका हासिल हो पाएगा।

डॉ. श्रीवास्तव व उनके साथी हाईकिरो उदोनो ने चूहे की रोग-प्रतिरोध प्रणाली का अध्ययन करते हुए पाया कि यह प्रणाली हीट-शॉक प्रोटीन या संक्षेप में एच.एस.पी. के प्रति प्रतिक्रिया दर्शाती है। हीट-शॉक प्रोटीन वे प्रोटीन हैं जो कोशिकाओं में तनाव की स्थिति में पैदा होते हैं तथा अन्य अणुओं से जुड़कर उन्हें कोशिका के अन्य स्थानों पर पहुंचाते हैं। ट्यूमर या कैंसरग्रस्त कोशिका में उत्पन्न होने वाले एच.एस.पी. में एण्टीजन गुण देखे गए हैं।

एण्टीजन वे पदार्थ होते हैं जो हमारी कोशिकाओं को एण्टीबॉडी बनाने को प्रेरित करते हैं। इस प्रकार जब कोई बाहरी पदार्थ शरीर में प्रवेश करता है तो शरीर उसकी प्रतिक्रिया में कुछ रसायन बनाता है। जिन्हें एण्टीबॉडी कहते हैं। यदि एच.एस.पी. में कैंसर-एण्टीजन है, तो शायद अन्य कोशिकाओं में पहुंचने पर शरीर इसके विरूद्ध एण्टीबॉडी जरूर बनाएगा।

डॉ. श्रीवास्तव व उदोनो ने जो प्रोटीन प्राप्त किया है उसे एच.एस.पी. ७० का नाम दिया गया है। उन्होंने यह प्रोटीन कैंसरग्रस्त कोशिका से प्राप्त किया तथा इसमें एण्टीजन क्षमता पायी। उन्होंने इस प्रोटीन का टीका जब चूहों में दिया, तो पाया कि ये चूहे उस विशिष्ट कैंसर के प्रतिरोधी हो गए थे। इसके विपरीत जब चूहों को स्वस्थ कोशिकाओं के एच.एस.पी. ७० का टीका दिया गया तो ऐसा प्रतिरोध विकसित नहीं हुआ। स्पष्ट है कि इस तरीके से विशिष्ट कैंसर हेतु टीका तैयार करने की सम्भावना है। व्यक्ति को उसके अपने कैंसर के खिलाफ प्रतिरोधी बनाने की गुंजाइश इस तकनीक में नजर आती है। अगले वर्ष शायद इस तकनीक का परीक्षण स्तन कैंसर के खिलाफ किया जाएगा। डॉ. श्रीवास्तव का मानना है कि कैंसर की पहचान होने के आठ घण्टे के अन्दर-अन्दर उसका प्रोटीन हासिल करके टीका बनाया जा सकता है और यह तकनीक मात्र कैंसर में ही उपयोगी नही है, अपितु अनेक वाइरसों से भी प्रतिरोध क्षमता विकसित करने की गुंजाइश रखती है और वाइरस के खिलाफ ऐसा टीका हर व्यक्ति के लिए अलग-अलग हो यह जरूरी नहीं है।

वाइरस विशेष के लिए जो टीका बनेगा वह आम तौर पर उपयोगी व कारगर होगा। ज्ञातव्य है कि एड्स एक वाइरस जनित रोग है, जिसमें हमारी प्रतिरोध क्षमता ठप्प होने लगती है। शायद इस तकनीक से एड्स वाइरस के खिलाफ भी टीका विकसित किया जा सके। इसके लिए एड्स वाइरस संक्रमित कोशिका से एच.एस.पी. निकालकर परीक्षण करने होंगे।

कुछ वैज्ञानिक इन प्रयोगों को दिलचस्प मानते हुए भी कहते हैं कि अभी तालियाँ बजाने का वक्त नही आया है। अभी काफी काम बाकी है और मंजिल बहुत दूर है।

कैंसर का रहस्य

अमर कोशिका

कैंसर कोशिकाओं की विडंबना यह है कि ये अमर हो जाती हैं। आमतौर पर हर कोशिका में एक जैविक घड़ी होती है, जो लगातार चलती रहती है। एक हद के बाद उस कोशिका की जिन्दगी खत्म हो जाती है और वह मर जाती है। कैंसर कोशिका में यह घड़ी अस्तव्यस्त हो जाती है तथा कोशिका लगातार विभाजित होकर, गांठ (ट्यूमर) बना देती है। अगर किसी तरह से इसे मृत्यु दी जा सके तो कैंसर बढ़ना रुक सकता है।

आखिर कोशिकाओं की आयु निर्धारित करने वाली यह घड़ी कैसी है? वैज्ञानिक इस विषय में विभिन्न विचार रखते हैं। हाल ही में न्यूयॉर्क के कुछ वैज्ञानिकों ने इस समस्या पर नया प्रकाश डाला है। आम तौर पर हर कोशिका ६० से १०० बार तक विभाजित होने के बाद मर जाती है। कोशिका के गुणसूत्र (क्रोमोसोमों में) इसका राज छुपा होता है। इसमें डी.एन.ए. नामक रासायनिक पदार्थ होता है जो चार क्षारीय पदार्थों की श्रृंखला से बनता है तथा शरीर में प्रोटीन बनाने की क्रिया नियंत्रित करता है। एक प्रोटीन बनाने के लिए डी.एन.ए. का एक हिस्सा जिम्मेदार होता है।

न्यूयॉर्क के वैज्ञानिक दल का विचार है कि क्रोमोसोम के सिरों पर अम्लीय न्नोजन, समाविष्ट चार अवयवों(चूल्कीओटाइडों) की एक ऐसी श्रृंखला होती है जो प्रोटीन निर्माण में भाग नहीं लेती। यह श्रृंखला बार-बार दोहराई हुई रहती है। 'टीलोमीयर' नामक एक हिस्सा ही कोशिका की आयु निर्धारित करता हैं।। हर विभाजन के बाद टीलोमीयर श्रृंखला का कुछ हिस्सा टूटकर क्रोमोसोम से अलग हो जाता है। जब यह पूरा अलग हो जाता है तो समझिए कोशिका की मौत आ गई। मगर कैंसर कोशिका में एक विशेष क्षमता पैदा हो जाती हैं। विभाजन के समय टीलोमीयर का जो हिस्सा टूटकर अलग होता है, उसे ये वापस बना लेती हैं। यानी यह अपनी आयु में लगातार होने वाली कमी की पूर्ति करती रहती है।

इस काम के लिए ये कोशिकाएं एक विशिष्ट एन्जाइम टीलोमीरेज बनाती है। साफ है कि यदि टीलोमीरेज न बने तो ये कोशिकाएं भी अपनी प्राकृतिक मृत्यु को प्राप्त होंगी। तो यह समझना जरुरी है कि टीलोमरेज क्यों बनता है? हो सकता है कि टीलोमरेज हर कोशिका में बनता हो, मगर साथ में उनमें इसकी क्रिया को रोकने वाला पदार्थ भी बनता हो। न्यूयॉर्क के वैज्ञानिकों ने एक ऐसा पदार्थ खोज निकाला है जो टीलोमरेज की क्रिया को अवरुद्ध करता है। अभी ये परीक्षण परखनली में किए गए हैं। परखनली में बेशक कैंसर कोशिकाओं का विभाजन सफलतापूर्वक रोका जा सका है। बहरहाल अभी यह अनुसंधान काफी शुरुआती दौर में है तथा किसी भी औषधि के आने में बीसों वर्ष लग सकते हैं।

दवाइयों में प्यार का व्यापार

अपने बच्चों के शारीरिक व मानसिक की स्वास्थ्य की चिंता हर माता-पिता को होती है- खासकर मां को ज्यादा, क्योंकि बच्चों का लालन-पालन उसी के जिम्मे होता है। लेकिन क्या आपने कभी इस बात पर विचार किया है कि आपकी इस 'चिंता का व्यापार' किया जा रहा है?

दरअसल माता-पिता की इस चिंता का फायदा औषध कंपनियां तथा बाल-आहार निर्माता खूब उठाते हैं। कर्नाटक की एक संस्था ड्रग ऐक्शन फोरम ने इस बाबत कुछ उपयोगी जानकारियों वाली एक पुस्तिका प्रकाशित की है।

माता-पिता की सबसे पहली चिंता यह रहती है कि "बच्चा कुछ खाता नहीं"। कई बार यह चिंता एक वहम भी होती है। भूख बढ़ाने की कई 'औषधियां' बाजार में बिकती हैं। इनमें से कइयों में मुख्य घटक अल्कोहल होता है। अल्कोहल बच्चे के लिए हानिकारक हो सकता है, खासकर जब बच्चा पहले से कुपोषित हो। इन 'औषधियों' में दूसरा घटक विटामिनों का होता है। ये विटामिन अनावश्यक तो नहीं होते किंतु भूख बढ़ाने में इनका कोई योगदान नही होता।

भूख बढ़ाने के लिए एक अन्य 'औषधि' पिज़ोटिफेन है। वास्तव में यह एक एलर्जी विरोधी दवा है जिसका एक पार्श्व प्रभाव वजन बढ़ाना भी है। इस पार्श्व प्रभाव को ही आधार बनाकर ये दवाइयां दी जाती है। ये हानिकारक तो होती है, साथ ही दवा बंद करते ही उसका 'प्रभाव' समाप्त होता है। यदि सचमुच बच्चे को भूख नहीं लगती है, तो इसके कारणों का पता लगाया जाना चाहिए।

माता-पिता की दूसरी चिंता होती है कि बच्चा दुबला-पतला है। वह बढ़ नही रहा। इसके लिए डाएनाबोल, एड्रायड, एनाबोलेक्स न्यूरोबाल जैसी दवाइयां दे दी जाती है। शुरुआत में तो इन दवाइयों से बच्चे की वृद्धि तेज हो जाती है किंतु उसके हाथ-पैरों की हड्डियों की वृद्धि रुक सकती है। इन दवाइयों का प्रमुख तत्व स्टीरॉइड हैं। ये स्टीरॉइड बच्चे के यौन विकास में बाधा पहुंचा सकते हें या असामान्य विकास को बढ़ावा दे सकते हैं। लड़कियों के यौनांगों में विकृतियाँ भी पैदा हो सकती है। इन स्टीरॉइड की वजह से गंजेपन, आवाज के मोटे होने, शरीर पर बाल वगैरह जैसी समस्याएं पैदा हो सकती है।

दरअसल अधिकांश मामलों में वृद्धि न होने का कारण कुपोषण होता है। इसका एकमात्र इलाज पर्याप्त भोजन है, दवा नहीं।

इसके बाद नंबर आता है बच्चे के मानसिक विकास का। बच्चे में एकाग्रता का अभाव, स्मरण शक्ति की कमी वगैरह इस समस्या के लक्षण नजर आते है। तो इसके लिए भी दवाइयां बेची जाती हैं। परंतु पेरिटोल, एनसिफेबॉल या हायडर्जिन जैसी इन दवाइयों के बारे में ऐसा कोई सबूत उपलब्ध नही है जिससे इनके प्रभाव की पुष्टि की जा सके। वास्तव में कई बार कुपोषण जन्य कमजोरी की वजह से बच्चे किसी चीज पर एक चित्त नहीं हो पाते। कई बार ऐसा भी होता है कि अन्य किसी भय या आशंका की वजह से बच्चे अपनी पूरी मानसिक ऊर्जा का इस्तेमाल नहीं कर पाते। और कई मामलों में तो स्कूली पढ़ाई इतनी उबाऊ होती है कि बच्चे को उसमें रस नहीं आता। इन सबकी वजह बच्चे के दिमाग में नहीं होती। इससे निपटने के लिए बच्चे के दिमाग के इलाज की जरूरत नहीं है। जरूरत है वास्तविक कारणों को समझना।

सावधान रहें! भोजन का एकमात्र विकल्प भोजन ही है और आपके प्यार का एकमात्र विकल्प प्यार ही है। व्यापार तथा वस्तुएं इनका विकल्प नहीं हो सकते। *(स्रोत फीचर्स)*

सुभाषितं

आपोभिताग्रं द्वौ कालौ कषायकटुतिक्तकम्।
भक्षयेत् दन्त धवनं दन्तमांसान्यबाधयन।।

चरक

कषाय, कटु या तिक्त रस वाली हरी टहनी (दातौन) एक सिरे पर चबा कर प्रातः एवं शयन से पूर्व इस तरह से प्रयोग करनी चाहिए कि मसूढ़ों को चोट न पहुंचे।

निहन्ति गन्ध वैरस्यं जिह्वादन्तास्यजं मलम्।
निष्कृष्य रुचिमाधत्ते सद्यो दन्तविशोधनम्।।

चरक

दांत साफ करने से मुंह की दुर्गन्ध तथा जबान दांतों और मुंह की गन्दगी दूर होने से भूख भी अच्छी तरह लगती है।

धार्याण्यास्येन वैशद्यरुचि सौगन्ध्यमिच्छता।
जातीकटुकपूगानां लवंगस्य फलानि च।
कक्कोलस्य फलं पत्रं ताम्बूलस्य शुभं तथा।
तथा कर्पूर निर्यासः सूक्ष्मैलायाः फलानि च।

चरक

जिसे स्वच्छता, उत्तम स्वाद और सांस की सुगन्ध की इच्छा हो उसे जायफल खरबूजे के बीज, सुपाड़ी, लौंग, पान की पत्ती, कपूर और कालीमिर्च मुंह में चबानी चाहिये।

अतिथि सम्पादकीय

डा. (श्रीमती) रश्मि कुमार
बालरोग विभाग,
के. जी. मेडिकल कालेज, लखनऊ

'जीवनीय' का प्रस्तुत अंक बच्चों के स्वास्थ्य को समर्पित है। बच्चे राष्ट्र की भावी संपदा हैं। आज उनके स्वास्थ्य पर ध्यान देना एक ऐसा पूंजी निवेश है जिसका प्रचुर लाभांश हमें आगामी वर्षों में प्राप्त होगा। १४ वर्ष से कम उम्र के बच्चों की संख्या देश की कुल आबादी का ४०% अर्थात् एक अच्छा-खासा हिस्सा है। यह हमारा एक सुकोमल भाग है जिसकी स्वास्थ्य संबंधी अपनी विशिष्ट समस्याएं हैं।

बच्चों की स्वास्थ्य समस्याओं का वयस्कों की अपेक्षा अलग प्रकार का स्वरुप रहता है। छोटे बच्चों की समस्याएं तो और भी विशेष प्रकार की होती हैं। उगते जीवन की क्रांतिक अवस्था है, शैशव। बच्चे वृद्धि, विकास और पोषण से संबंधित प्राथमिक एवं द्वितीयक, दोनों प्रकार की विकृतियों के प्रति प्रवण (अनुकूल) होते हैं। बच्चों में विविध जन्मजात एवं आनुवंशिक विकृतियों के उजागर होने की संभावना भी अधिक होती है। खसरा, चेचक, कनफेड जैसे बचपन के संक्रमणों के लिए भी वे भेद्य होते हैं। अपेक्षा कृत अधिक कोमल होने के कारण रुग्णावस्था में वे वयस्कों की अपेक्षा जल्दी बदतर होते हैं पर वयस्कों की अपेक्षा शीघ्र स्वस्थ भी हो जाते हैं। बचपन की बहुत सारी समस्याएं संक्रमण और पोषण से संबंधित होने के कारण टाली जा सकती है। अनेक व्याधियों के प्रतिबंधक प्रतिरक्षीकरण के अतिरिक्त आधुनिक चिकित्सा में अनेक प्रगतियां हुई हैं जिनसे शिशु मृत्यु दर में कमी आयी है और जीवित शिशु जन्म की दर में वृद्धि हुई है। बच्चों के लिए उपयोगी अनेक पारंपरिक स्वास्थ्यकर प्रथाएं भी हैं। शैशव की सामान्य व्याधियों, उनकी रोकथाम और सरल चिकित्सा की जानकारी जन-जन तक पहुंचाने का 'जीवनीय' एक आदर्श माध्यम है। आशा है कि प्रस्तुत अंक पाठकों को अपने निर्धारित लक्ष्य की ओर ले चलने में सफल होगा।

अगले अंक के प्रमुख आकर्षण

हृदय-रोग विशेषांक

सामान्य हृदय रोगों से बचाव
बच्चों में हृदय रोग
एन्जाइना या हृच्छूल
उच्च रक्तदाब की रोकथाम
हृदय रोगों एवं रक्तचाप में योगासन
रक्तचाप का मानसिक संबंध
हृदय रोगों की शल्य चिकित्सा
हृदय रोग निदान के आधुनिक उपकरण

शिशु आहार

बच्चों की स्वस्थ वृद्धि और विकास के लिए उनके समुचित आहार का महत्व सर्वाधिक है। फिर भी अज्ञान और गलत धारणाओं के कारण उन्हें खिलाने पिलाने की गलत प्रथाएं व्यवहार में हैं जिसके परिणाम स्वरूप उनकी वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

स्तनपान

मां के दूध में मवेशियों के दूध और डिब्बाबंद पाउडर दूधों की अपेक्षा कई ऐसे लाभ हैं जो वैज्ञानिक रीति से सिद्ध हो चुके हैं। पोषण की दृष्टि से शिशु की अभीष्टतम वृद्धि के लिए मां का दूध सबसे उपयुक्त है। यह आवश्यकतानुसार तत्काल सुलभ, स्वास्थ्यकर, किफायती और प्रत्यूर्जता (ऐलर्जी) को रोकनेवाला है। बहुत ही छोटे बच्चों में रुग्णता और मृत्यु के प्रधान कारण होने वाले तीव्र श्वसन संक्रमणों तथा आंत्रिक संक्रमण जैसे सामान्य संक्रमणों केप्रति मां का दूध एक रक्षात्मक कवच का निर्माण करता है। केवल मां के दूध पर पले हुए बच्चे की अपेक्षा मां के दूध से वंचित बच्चे की अतिसार से मृत्यु की संभावना १४ गुनी है और अन्य संक्रमणों से दो–तीन गुनी। बच्चे को स्तनपान कराने से मां को होनेवाले लाभों में प्रसवोत्तर रक्तस्राव की शीघ्रतर समाप्ति तथा स्तनों एवं अंडाशय के कैंसर से सुरक्षा प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त यदि बच्चा केवल स्तनपान पर निर्भर है तो इससे प्रारंभ के ४–६ महीनों तक मां में गर्भनिरोध की स्थिति रहती है। और सबसे बड़ी बात यह कि स्तनपान से मां और बच्चे के बीच का भावात्मक संबंध धनिष्टतम हो जाता है।

स्तनपान का प्रारंभ

सामान्य प्रसव होने पर बच्चों को प्रसव के बाद शीघ्र ही यथासंभव एक घंटे के भीतर स्तनपान करा देना चाहिए। बच्चे को कोई अन्य तरल जैसे शहद, जन्म घूंटी, मवेशियों का दूध या पाउडर दूध चाय, पानी या ग्लूकोज़ आदि नहीं देना चाहिए। जन्म के बाद कुछ दिनों तक जो गाढ़ा, पीला दूध आता है उसे पीयूष कहते हैं। लोगों में यह गलत धारणा प्रचालित है कि यह त्याज्य है। यह धारणा ठीक नहीं है और बच्चे को उसी की आवश्यकता होती है। बच्चे को उसके अतिरिक्त कुछ भी न दें।

स्तनपान की विधि

अधिकांश बच्चों को हर दो–चार घंटे पर दूध पिलाने की आवश्यकता पड़ती है। मां को आराम से उठ बैठना चाहिए और बच्चे का सिर थोड़ा उठा हुआ रखकर बारी–बारी से दोनों स्तनों का दूध पिलाना चाहिए। बच्चे के सिर को कंधों के नीचे से (सिर के नीचे नहीं) सहारा देना चाहिए। स्तनपान के समय मां को बच्चे के साथ सक्रिय रूप से संलग्न हो जाना चाहिए। मां के द्वारा दुलराना, सहलाना और अपने से सटाना बच्चे को अत्यंत हितकर लगता है। अधिकांश बच्चों को एक बार पेट भर स्तनपान करने में १५–२० मिनट लगता है। संतुष्ट बच्चा खेलने लगता है, अच्छी तरह सोता है, उसके भार में नियमित वृद्धि होती है और छह या अधिक बार पेशाब करता है। उसे इतना दूध पिला देना चाहिए कि कम से कम दो घंटे तक वह दूध के लिए न रोये। दूध पिलाने के बाद उसे कंधे पर लेकर उसकी पीठ तब तक धीरे–धीरे थपथपानी चाहिए जबतक कि वह डकार न लेने लगे।

प्रारंभ के ४–६ महीने बच्चे को मां के दूध के सिवा कुछ नहीं चाहिए। गर्मियों के दिनों भी नहीं। स्तनपान की शुरुआत में स्तनपान के एक–दो घंटे बाद बच्चा रोना शुरू कर देता है जिससे यह मान लिया जाता है कि स्तनपान से उसका पेट नहीं भरा और फिर बोतल का दूध शुरू कर दिया जाता है। यह ठीक नहीं है। मां को चाहिए कि रोते हुए बच्चे को पुनः स्तन चूसने दे। चूसने से दूध के उत्पादन और निकलने को बढ़ावा मिलता है। जल्द ही एक समय–सारणी बन जाएगी और शीघ्र ही केवल स्तनपान कराना सुविधाजनक और समस्त समस्या निवारक हो जायगा।

मां का आहार

स्तनपान करानेवाली मां को आहार थोड़ा ज्यादा लेना चाहिए और नियमित रूप से हरी पत्तियों वाली सब्जियां लेनी चाहिए। उसे आयोडीनयुक्त नमक अवश्य लेना चाहिए। अत्यधिक शराब, कैफीन और तंबाकू के अतिरिक्त उसके आहार पर नियंत्रण रखने की कोई आवश्यकता नहीं है।

जन्म के समय कम भार के बच्चों के लिए भी मां का दूध उत्तम है। यदि बच्चा छोटा होने के कारण चूसने में असमर्थ है तो उसे छाती का दूध निकाल कर चम्मच से या बोतल से पिलाना चाहिए।

स्तनपान निषेध

मां को तीव्रज्वर होने या स्तनों में व्रण होने पर स्तनपान अस्थायी तौर पर बंद किया जा सकता है। ऐसे में स्तनों का दूध समय–समय पर दबा कर निकाल देना चाहिए। कैंसर की चिकित्साधीन माताओं, स्वर्णयौगिक, एर्गाट, लिथियम और ऐंटीथायरायड दवाएं को सामान्य बीमारियां होने पर स्तनपान चालू रखें। गंभीर रूप से बीमार बच्चों को कोई आहार न दें।

स्तन्य मोचन आहार

दो स्तनपान के बीच पतली दलिया या दाल देनी चाहिए बाद में बच्चे के कुछ बड़े होने पर ज्यादा घनी चीजें दी जा सकती हैं। परिवार में बने हुए खाने को मसल–मसल कर दें। उसमें हरी सब्जियां अवश्य हों। थोड़ा अतिरिक्त तेल भी मिलाया जा सकता है।

स्तन्यमोचन आहार में दाल, वसा, शक्कर, हरी सब्जियां और आयोडीनयुक्त नमक मिलाकर उसे अधिक पौष्टिक बनायें। घी के साथ दाल या खिचड़ी दही, मसला हुआ पका केला, दूध या दाल में भिगो कर नरम की हुई चपाती, मसली हुई सब्जियां, सूजी, दलिया आदि उत्तम स्तन्यमोचन आहार हैं। छह महीने के होते होते बच्चे को आधा कप अर्धठोस आहार रोज चाहिए। नौ महीने के बच्चे को मां के दूध के अलावा दिन में चार–पांच बार अतिरिक्त आहार दिया जाय। दो साल के बच्चे को मां का लगभग आधा खाना चाहिए। सफाई का विशेष ध्यान रखें। यथासंभव बच्चे को ताजा खाना दें। यदि बासी देना पड़े तो गरम करके दें। बच्चे का खाना तभी बंद करें जब डाक्टर ने वैसी सलाह दी हो। विशेष रूप से दस्त की स्थिति में उसे अतिरिक्त ठोस आहार देना बंद न करें क्योंकि ठोस आहार दस्त में लाभ करता है।

शिशु के विकास की कहानी

डा. प्रमोद मालवीय, वैद्य पूर्णचन्द्र जैन, लखनऊ

मानव, शिशु के रूप में जन्म लेता है और धीरे-धीरे विकसित होकर पूर्ण मानव बनता है। तभी वह रस रक्तादि धातुओं इन्द्रिय, बल, वीर्य, पौरुष एवं पराक्रम से पूर्ण होता है। तभी उसका मन स्थिर होता है और उसकी विभिन्न क्रियाओं में पूर्णता आती है। पूर्ण मानव सभी कार्यों को करने में समर्थ होता है।

शिशु के विकास की कहानी उसके गर्भ में आने से प्रारंभ होती है। आयुर्वेद में आयु के तीन विभाग किये गये हैं- बाल्यावस्था, मध्यावस्था, एवं क्षीणावस्था। औसत आयु १०० वर्ष की स्वीकार करने पर प्रथम सोलह वर्ष बाल्यावस्था है जो गर्भ काल से प्रारंभ होकर बालक के वृद्धि के समय तक की अवस्था होती है। चरक के अनुसार सोलह से तीस वर्ष की आयु भी वृद्धि की अवस्था है जिसे विवर्धमान धात्वावस्था कहते हैं। ३० से ६० वर्ष की आयु मध्यावस्था और ६०-७० से ऊपर की आयु वृद्धावस्था में सम्मिलित है।

मानव गर्भ पुंबीज (शुक्राणु अथवा स्पर्म) एवं स्त्रीबीज (डिम्ब अथवा ओवम) के संयुक्त होने पर उत्पन्न होता है। इस प्रक्रिया को गर्भावक्रान्ति कहते हैं जो डिम्ब प्रणाली में होती है। संयुक्त बीज को संयुक्त डिम्ब अथवा जाइगोट कहते हैं। यह संयुक्त बीज क्रमशः गति कर गर्भाशय में स्थित होकर गर्भ के रूप में बढ़ता है।

गर्भ में लिंग उत्पत्ति

गर्भ में लिंग का निर्धारण गर्भावक्रान्ति के समय स्त्रीबीज एवं पुरुष बीज में स्थित क्रोमोसोम करते हैं। क्रोमोसोम की संख्या पुंबीज में २३ जोड़े एवं स्त्रीबीज में २३ जोड़े मिलकर ४६ जोड़े होती है जो कोष विभाजन के उपरांत संयुक्त बीज में २३ जोड़े रहती है। इनमें २२ क्रोमोसोम के जोड़े एक प्रकार के हैं जिन्हें आटोसोम कहते हैं और १ जोड़ा क्रोमोसोम लिंगविभेदक होता है। पुंबीज में लिंगविभेदक एवं वाई क्रोमोसोम का जोड़ा होता है जब कि स्त्रीबीज में एक्स क्रोमोसोम का जोड़ा होता है। डिंब संसेचन एवं कोष विभाजन के उपरांत यदि संसेचित डिम्ब या जाइगोट में लिंगविभेदक एक्स क्रोमोसोम का जोड़ा होता है तब गर्भ में स्थित संतान कन्या तथा यदि लिंग विभेदक क्रोमोसोम एक्स वाई का जोड़ा होता है तब उत्पन्न संतान पुरुष होती है।

गर्भाशय में गर्भ की वृद्धि

गर्भाशय में गर्भ के धारण के बाद उसकी क्रमशः वृद्धि होती है। वृद्धि के परिणामस्वरूप तीन प्राथमिक स्तरों का निर्माण होता है जिन्हें प्राथमिक जनन स्तर कहते है। ये हैं-

१. बाह्य जननस्तर
२. मध्य जनन स्तर
३. आभ्यंतर जनन स्तर

बाह्य जनन स्तर से शरीर को ढंकने वाली त्वचा, तंत्रिका संस्थान, एवं ज्ञानेन्द्रियों का विकास होता है। मध्य जनन स्तर से अस्थि कंकाल, मांस पेशियां, रक्तवह संस्थान, प्रजनन एवं मूत्र संस्थान का विकास होता है। अन्त्रस्तर आन्तरिक स्तर से पाचन संस्थान तथा मध्यकर्ण, अवटु एवं उपावटु ग्रन्थि, स्वरयंत्र, कंठ, वस्ति, पौरुषग्रन्थि, योनिमार्ग एवं मूत्रमार्ग के उपकला स्तरों का विकास होता है। विकास के क्रम में गर्भ में विभिन्न पोषक स्तरों का निर्माण होता है जिससे अपरा एवं नाभिनाड़ी का निर्माण होकर गर्भ का पोषण माता के हृदय के संकोच विकास से होने लगता है। गर्भावस्था में दिन-प्रतिदिन गर्भ का आकार बढ़ता जाता है जिससे गर्भाशय नाभिप्रदेश तक पहुंच जाता है। प्रसव के समय गर्भ का सिर नीचे की ओर रहता है और उसके नितंब का भाग ऊपर की ओर रहता है।

जन्मोपरांत शिशु की वृद्धि

गर्भाशय में ९ मास वास करने के उपरांत बच्चे का जन्म होता है। जन्म के उपरांत भी उसकी वृद्धि निरंतर होती रहती हैं। वृद्धि का कार्य जन्मोपरांत प्रथम वर्ष में तीव्रगति से होता है। परंतु वृद्धि की तीव्रता सबसे अधिक ६-७ वर्ष की आयु में देखी जाती है और युवावस्था में पहुंचने पर तीव्रता में कमी हो जाती है।

भार में जन्मोपरांत शिशु का भार २ से ३ किलो होता है जो प्रथम सप्ताह में कुछ कम हो जाता है अगले सप्ताह में बढ़ जाता है। इसके बाद भार में वृद्धि होकर पांचवें मास में भार दूना हो जाता है और एक वर्ष में तीन गुना हो जाता है। पोषक तत्वों की उचित मात्रा से यह वृद्धि इससे भी अधिक देखी गई है। १५ वर्ष की आयु में बालक का भार वृद्धि के परिणामस्वरूप पूर्ण होता है। लड़कियों की अपेक्षा लड़कों का भार कुछ अधिक होता है।

जन्म के समय बालक लगभग ४० से ५० से.मी. लंबा होता है। यह लंबाई यद्यपि आनुवंशिकी प्रवृत्ति पर निर्भर है तथापि एक वर्ष में बच्चे की लंबाई ६५ से ७० से.मी. तथा इसके उपरांत प्रत्येक वर्ष लगभग ६ से.मी. लंबाई में वृद्धि होती है। १५ वर्ष में बालक की लंबाई १५० से.मी. होती है। इसी प्रकार जन्म के समय शिशु के सिर का घेरा ३० से ३५ सें.मी. होता है। ६ मास की आयु में सिर की परिधि ४० से.मी. तथा १२ माह में ४४-४५ सें.मी. हो जाती है। पांच वर्ष की आयु में परिधि ५० से.मी. एवं १५ वर्ष की आयु में ५३-५५ से.मी. होती है। सिर की परिधि अत्यधिक कम होने पर मस्तिष्क के विकास में विकृति एवं परिधि अधिक होने पर हाइड्रोसेफेलस व्याधि की आशंका व्यक्त होती है। सिर में स्थित फान्टेनेल (विवर) १८ माह में बंद हो जाते हैं।

दांतों का विकास

बालकों में दांतों का विकास दो प्रकार से होता है। पहले दूध के दांत निकलते हैं जो कुछ

समय बाद स्वयंमेव गिर जाते हैं। दूध के दांत अथवा अस्थायी दांत संख्या में २० होते हैं १० ऊपर के जबड़े में १० नीचे के जबड़े में। इनका उद्‌गम १ अधः केन्द्रीय कर्त्तनक ५ से १० माह में ऊर्ध्व केन्द्रीय एवं उर्ध्व बहि

८ से १२ माह में ३ अधः बहिःकर्त्तनक एवं अधः एवं ऊर्ध्व प्रथम चवर्णक १२–१४ माह में ४ अधः एवं ऊर्ध्व भेदक १६–२२ माह में ५–३+६ एवं ऊर्ध्व द्वितीय चर्वणक २४ से ३० माह में होता हे। स्थायी दांत ३२ होते हैं। १६–१६ नीचे और ऊपर के जबड़ों में। ये अस्थायी दांतों के गिरने के साथ निकलते हैं। इनका उद्‌गम निम्न प्रकार है।

प्रथम चवर्णक ५ से ७ वर्ष में,
केन्द्रीय कर्त्तनक ६–८ वर्ष में,
बहिःकर्त्तनक ७–९ वर्ष में,
प्रथम अग्र चवर्णक ९–११ वर्ष में
द्वितीय अग्र चवर्णक १०–१२ वर्ष में
भेदक ११–१४ वर्ष में
द्वितीय चवर्णक ११–१३ वर्ष में
तृतीक चवर्णक १६–२५ वर्ष में

तंत्रिका संस्थान का विकास

जब बच्चा जन्म लेता है तब उसके मस्तिष्क में तंत्रिका कोष के ७ स्तर बन चुकते हैं। जन्म के बाद एक वर्ष में मस्तिष्क प्रगल्भ हो पाता है। जन्म के समय मस्तिष्क का भार ३५० ग्राम के लगभग होता है तथा एक वर्ष में वृद्धि को प्राप्त कर ९०० ग्राम तक हो जाता है। २० वर्ष की आयु में भार जन्म से ४–५ गुना हो जाता है। मस्तिष्क में संज्ञावाहक तंत्रिकाओं का विकास पहिले होता है, पश्चात् आज्ञावाही तंत्रिकाओं का योग पूर्ण होता है। मस्तिष्क के विकसित न होने से जन्मोपरांत बालक २०–२४ घंटे सोता है। ६ मास की आयु में वह १८ घंटे, एक वर्ष की आयु में १४–१६ घंटे, ५ वर्ष की आयु में १० से १२ घंटे एवं १६ वर्ष की आयु में ९ घंटे सोता है।

संज्ञावह स्रोतसों का विकास पूर्व में होने से बालक जन्म के पश्चात प्रकाश युक्त पदार्थों की ओर देखना शुरू करता है। दो से तीन माह में वह अपनी मां एवं धाय को पहिचानने लगता है। बच्चे में प्रतिवर्त्त (रिफ्लेक्सेस) धीरे–धीरे जाग्रत होते है। सहज प्रतिवर्त्त से जन्म के उपरांत वह भूख लगने पर स्तन चूसना शुरू कर देता है। दूसरे माह में वह हंसने लगता है। तीसरे माह में हाथ पैर चलाने लगता है, पांचवें माह में वस्तुओं को हाथ से पकड़ता है, छठे माह में आसपास की वस्तुओं को पहचानकर पकड़ता है। आठवें महीने में वह आवाज करने लगता है और एक वर्ष में मामा, पापा, आदि बोलने लगता है। दूसरे वर्ष में और अधिक बोलने लगता है और पांच से सात वर्ष में वह अपना मन्तव्य व्यक्त करता है, शुद्ध भाषण, विचारों का प्रकटीकरण पठन, लेखन सभी में उसकी गति होने लगती है और वातावरण के अनुसार उसकी बुद्धि का विकास भी होता है।

शिशु की वृद्धि में सहायक तत्व

बालकों की वृद्धि में आनुवंशिकी का अत्यधिक महत्व है। पुंबीज एवं स्त्रीबीज के क्रोमोसोम में दो प्रकार के जीन्स होते हैं १ प्रभावी २ अप्रभावी दोनों बीजों के प्रभावी जीन्स के संयुक्त होने पर संतान में रंग, रूप, लंबाई, भार, माता–पिता के गुणधर्म, स्वभाव आदि जो उन जीन्स के कारण है प्रभावी के रूप में संक्रमित होते हैं। अप्रभावी जीन्स के संयुक्त होने पर अप्रभावी गुणधर्म संक्रमित होते हैं। परंतु प्रभावी एवं अप्रभावी जीन्स के संयुक्त होने पर २५ प्र.श. प्रभावी २५ प्र. श. अप्रभावी एवं ५० प्र.श. दोनों चिन्हों वाले गुणधर्म 'संक्रमित होते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार माता पिता के गुणधर्म, स्वभावशील आदि बच्चे में तीन पकार से संक्रमित होते हैं। आनुवंशिकी जो पुरखों की विशेषताएं रोगों की प्रतिकारक क्षमता संतान में संक्रमित करते हैं। द्वितीय –जिनके द्वारा कुल एवं वंश की विशेषताएं संक्रमित होती हैं। तृतीय जो विशेषताएं लिंग से संबन्धित हैं जैसे हीमोफिलिया का संक्रमण बालकों स्त्रियों द्वारा पुरुष बालकों में संक्रमित होता है। कन्या शिशुओं में रोग न रहते हुए भी वे रोग के वाहकमात्र होते हैं।

निःस्रोत ग्रन्थियों के स्राव भी बालक के क्रमिक विकास में अत्यंत प्रभावकारी हैं। इनमें पिच्यूटरी ग्रन्थि, थायराइड, थाइमस, पेराथाइराइड एवं सुप्रारीनल ग्रन्थि के स्राव शिशु की वृद्धि एवं विकास में अत्यधिक महत्व के हैं। अग्रपिच्युटरी (पीयूष) ग्रन्थिका वृद्धिजनक स्राव एवं अन्य भागों के हार्मोन्स शरीर एवं अस्थियों की वृद्धि के साथ, रक्तचाप, लिंगविकास तथा अन्य निःस्रोत ग्रन्थियों की प्राकृतिक क्रिया को बनाये रखते हैं। थाइराइड ग्रन्थि के हार्मोन शरीर की विकास प्रक्रिया को उत्तेजित करने के साथ चयापचय का नियंत्रण करते हैं, तंत्रिका संस्थान को उत्तेजित करते है, बालों एवं अस्थियों के निर्माण एवं त्वचा के पोषण में विशेष भाग लेते है। इसकी मन्द क्रिया से अस्थियों एवं अन्य अंगों की वृद्धि रुक जाती है और बालक, मंद बुद्धि एवं बौना हो जाता है। थायमस ग्रन्थि भी शरीर वृद्धि को उत्तेजित करती है जबकि पेराथाइराइड केल्सियम व फास्फोरस के धातुपाक को नियमित कर अस्थियों के विकास में दृढ़ता प्रदान करती है। अन्तः स्रावी ग्रन्थियों के साथ विटामिन ए,बी,सी, एवं डी भी शिशु के विकास में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। विटामिन ए आच्छादन करने वाले तंतुओं के विकास में सहायक है जबकि विटामिन बी तंत्रिका संस्थान की क्रिया विकसित करता है, विटामिन सी रक्त वाहिनियों के विकास में तथा विटामिन डी अस्थियों के विकास में परमोपयोगी है।

स्वस्थ भारतीय बच्चों का औसत भार

आयु	भार (किलोग्राम) बालक	बालिका
जन्म के समय	३.०	२.९
६ माह	७.५	७.०
एक वर्ष	९.५	९.०
दो वर्ष	११.५	११.०
तीन वर्ष	१४.०	१३.५
चार वर्ष	१५.५	१४.५
पांच वर्ष	१७.५	१६.५

स्वस्थ भारतीय बच्चों की औसत लम्बाई

आयु	लम्बाई सेंटीमीटर में बालक	बालिका
एक वर्ष	७५.०	७२.५
दो वर्ष	८५.०	८३.०
तीन वर्ष	९४.०	९२.०
चार वर्ष	१००.०	९९.०
पांच वर्ष	१०७.०	१०५.०

बच्चों का शारीरिक विकास

डा. डी. एन. मिश्रा, लखनऊ

जिस प्रकार कमजोर नींव पर भवन निर्माण नहीं किया जा सकता है उसी प्रकार उचित शारीरिक विकास न होने पर सबल युवा नागरिक तैयार नहीं हो सकते। शारीरिक विकास को प्रमुख रूप से दो भागों में विभाजित किया गया है।

१- प्रसव पूर्व गर्भ विकास

२- प्रसवोपरान्त शिशु विकास

प्रसव पूर्व गर्भ विकास

यही वह समय है जबकि एक कोषीय शरीर से सम्पूर्ण अंग वाला विकसित शिशु जन्म लेता है। इसे भी अवस्थानुरूप दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(१) दो माह तक का गर्भ इस काल में प्रयुक्त भोजन, औषधि तथा माता को होने वाली व्याधि का प्रभाव गर्भ के शरीर, अंग निर्माण तथा विकास पर पड़ता है। इसी दौरान शरीर में सम्पूर्ण अंगों के विकास का बीज पड़ता है तथा लिंग विकास का बीजारोपण दूसरे तीसरे मास के मध्य होता है।

(२) शेष गर्भावस्था - इस समय में शरीर के विभिन्न संस्थानों का विकास होता है। गर्भस्थ शिशु के आकार में तीव्रता से वृद्धि होती है और यह सबसे अधिक लगभग २० वें सप्ताह में होती है व भार में वृद्धि ३४ वें सप्ताह में सर्वाधिक होती है।

प्रसवोपरांत शिशु का विकास

प्रसव के बाद नवजात शिशु से लेकर १६-१८ वर्ष की आयु तक के शारीरिक विकास का कई प्रकार से वर्गीकरण किया गया है। आयुर्वेद में शिशु, बाल, कुमार आदि अवस्था विशेष को यों स्पष्ट किया गया है-

अत्यधिक शयन करने वाला शिशु कहलाता है, बल की अल्पता वाला बाल कहलाता है, कुत्सित मार अर्थात् जिसकी कामेच्छा मृत हो वह कुमार है, कामेच्छा का जागरण उसे युवा बना देता है।

इसी प्रकार पाचन संस्थान के विकास की दृष्टि से बालक को क्षीरपायी (दूध पीने वाला बच्चा) एक वर्ष तक, क्षीरान्नपायी (दूध व अन्न दोनो पर आश्रित बच्चा) दो तीन वर्ष तक और अन्नपायी (सिर्फ अन्नाहार पर निर्भर) बच्चा तीन वर्ष के ऊपर।

विज्ञान ने यह प्रमाणित कर दिया है कि मस्तिष्क का ८५% विकास प्रारम्भ के दो वर्षों में ही हो जाता है। सम्भवतः इसी को ध्यान में रखते हुए आयुर्वेद के आचार्यों ने बच्चों के प्रारम्भिक वर्षों में बुद्धि व स्मृति बढ़ाने वाले विशिष्ट रसायन औषधों जैसे च्यवनप्राश, अमृतप्राश आदि के सेवन कराने का निर्देश दिया है।

५ वर्ष की अवस्था विद्याध्ययन प्रारम्भ करने का सर्वाधिक उपयुक्त काल यही है। आधुनिक मतानुसार भी बच्चे की प्राथमिक शिक्षा इसी आयु में प्रारम्भ करनी चाहिये।

आधुनिक विज्ञान ने शिशु के विकास क्रम को ध्यान में रखते हुए बाल्यावस्था को निम्न प्रकार से विभाजित किया है-

शैशवावस्था जन्म से १८ माह तक

बाल्यावस्था १८ माह से ५ वर्ष तक

लडकपना ५ वर्ष से ११ वर्ष तक

किशोरावस्था ११ वर्ष से २० वर्ष तक

प्रसव पूर्व की स्थिति- गर्भ कालीन संक्रमण जैसे खसरा, मधुमेह, कुपोषण का प्रभाव आगे भी बालक पर पड़ता है।

आहार एवं पोषक तत्वों की कमी- आहार की कमी भी एक मुख्य कारण है जो कि आहार की मात्रा से ही नहीं बल्कि उसकी गुणवत्ता से भी सम्बन्ध रखता है। भोजन में सिर्फ मात्रा की पूर्ति कर लेने से आवश्यक सभी पोषक तत्वों की पूर्ति नहीं होती।

विहार

साधारणतः बच्चे की लम्बाई वसन्त ऋतु में व भार शरद ऋतु में सर्वाधिक बढ़ता है। प्रदूषित पर्यावरण तथा भोज्य पदार्थों में होने वाली मिलावटों आदि का शारीरिक विकास पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

आर्थिक, सामाजिक एवं पारिवारिक स्थिति- प्रदूषित व अस्वास्थ्यकर बस्तियों में रहना, स्वच्छ जल उपलब्ध न होना, धनाभाव के कारण परिपूर्ण पोषक तत्वों तथा आवश्यक उपचारों का न मिल पाना आदि, का पोषण, शिक्षा व चिकित्सा पर प्रभाव पड़ता है।

अंतःस्रावी ग्रन्थियों, विशेषकर पिट्यूटरी एवं थाइराइड की विषमता, हृदय व यकृत आदि अंगो के विभिन्न रोग भी शरीर के; विकास को सीधे-सीधे प्रभावित करते हैं।

माता-पिता का बच्चों की रुचियों, विचारों व समस्याओं को समझना, बच्चों की तरफ ध्यान कम देना या उन्हें हमेशा उपेक्षित रखना आदि बातें बच्चों में तरह-तरह की समस्याओं को जन्म देती हैं।

पहले पांच वर्षो में भार और लम्बाई में औसत वृद्धि

आयु	प्रति सप्ताह भार में वृद्धि
०-३ माह	२०० ग्रा.
४-६ माह	१५० ग्रा.
७-९ माह	१०० ग्रा.
१०-१२ माह	५०-७५ ग्रा.
१ से ५ वर्ष	२ किलो प्रति वर्ष

आयु	लम्बाई में प्रति वर्ष वृद्धि
पहला वर्ष	२५ से. मी.
दूसरा वर्ष	१०-१२ से. मी.
तीसरा वर्ष	७-९ से. मी.
चौथा वर्ष	६-८ से. मी.
पांचवा वर्ष	६-८ से. मी.

बाल विकास की अवस्थाएं

आचार्य राजकुमार जैन, लखनऊ

मनुष्य जीवन की छह शारीरिक अवस्थाएं हैं शैशवावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था। जन्म के साथ ही शुरु होती अवस्था शैशव है। जिसकी तीन अवस्थायें हैं।

क्षीराद– शैशव के आरम्भिक छह माह तक शिशु केवल दूध पर ही आश्रित रहता है। शिशु के लिए सामान्यतः माता का दूध ही हितकारी होता है। माता के दूध के अभाव में गाय या बकरी का दूध उसे दिया जा सकता है। आज कल फैशन के कारण औरतें अपने बच्चों को अपने स्तन से दूध पिलाने की बजाय डिब्बा बन्द पाउडर का दूध पिलाना अधिक पसन्द करती हैं जो कृत्रिम रूप से निर्मित विटामिन्स और अन्य पौष्टिक तत्व तो उपलब्ध कराता है, किन्तु माता के दूध में प्राकृतिक रूप से जो पौष्टिक तत्व विद्यमान रहते हैं उनकी आपूर्ति डिब्बा बन्द दूध के द्वारा नहीं होती। कई बालक उस कृत्रिम दूध को नहीं पचा पाते, जिसका प्रभाव उनके शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक विकास पर पड़ता है। इसकी पुष्टि विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी की है।

क्षीरान्नाद– सात माह से ढाई वर्ष तक के शिशु इस वर्ग में आते हैं। इस अवस्था में शिशुओं को दूध के साथ–साथ धीरे–धीरे द्रव प्रधान अन्नाहार भी देना प्रारम्भ कर देते हैं। इस अवस्था में दांत निकलना भी प्रारम्भ हो जाता है।

अन्नाद– ढाई वर्ष की आयु से बालक पूर्णतः अन्न पर आश्रित हो जाता है, इसका आशय यह बिल्कुल नहीं है कि उन्हें दूध बन्द कर देना चाहिये। बालकों के शारीरिक विकास की दृष्टि से दूध सदा बालकों के लिए अपेक्षित रहता है। शिशुओं को यदि शुद्ध दूध तथा सुपाच्य आहार नहीं मिलता है तो उन्हें कई तरह के पेट के विकार जैसे पेट फूलना, पेट दुखना, यकृत या प्लीहा का बढ़ जाना, दस्त होना, पेशाब रुक जाना आदि विकार उत्पन्न हो जाते हैं। शिशु स्वभावतः कोमल प्रकृति के होते हैं, अतः अचानक बढ़ी हुई सर्दी गर्मी आदि को सहन नहीं कर पाते हैं। परिमाणतः न्यूमोनिया, ज्वर, सर्दी,खाँसी, श्वास फूलना आदि बीमारियाँ उन्हें घेर लेती हैं। यह अवस्था कफ प्रधान है।अतः उसे कफकारक व शीत वीर्य या ठंडे वातावरण से बचाना चाहिये।

बाल्यावस्था : ६ से १२ वर्ष की आयु में भी बच्चों के स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। इस अवस्था में उन्हें पर्याप्त मात्रा में पोषण तत्व न मिलने से बच्चे पोषणाभावजन्य अनेक बीमारियों के शिकार हो जाते हैं जिससे उनका विकास अवरुद्ध हो जाता है। सूखा रोग, बाल शोष, अस्थिक्षय, बाल पक्षाघात जैसी बीमारियों के कारण उनका सम्पूर्ण जीवन कष्टमय हो सकता है।

किशोरावस्था : १८ वर्ष तक विकास की प्रक्रिया जारी रहने से उन्हें पोषक तत्वों की आवश्यकता सतत बनी रहती है। यदि इस अवस्था में उन्हें अपेक्षित पोषण नहीं मिल पाता है तो उनके शरीर में अपेक्षित रोग प्रतिरोध क्षमता विकसित नहीं हो पाती है। शरीर की रोग प्रतिरोध क्षमता बढ़ाने के लिये बालक की प्रकृति ज्ञात कर तदनुरूप षड्रस भोजन का सेवन कराना चाहिये।

शिशु के लिए उचित दुग्धपान

आयु	चौबीस घंटे में कितने बार पिलाएं
जन्म–१ माह	६–८ बार
१–३ माह	५–८ बार
३–६ माह	४–५ बार
६–१२ माह	३–४ बार

आयु	दूध की औसत मात्रा
१–२ सप्ताह	५०–७५ मि.ली.
२ सप्ताह–२ माह	१००–१२५ मि.ली.
२–३ माह	१२५–१५० मि.ली.
३–४ माह	१५०–१७५ मि.ली.
५–१२ माह	१७५–२२५ मि.ली.

आप बतायें

आपको यह अंक कैसा लगा ?

'जीवनीय' पत्रिका आपके ही स्वास्थ्य को ध्यान में रखकर प्रकाशित की जाती है। हम पूरी–पूरी कोशिश करते हैं कि इसका प्रत्येक अंक आपके लिए रुचिकर और लाभकारी हो जिससे वह आपके स्वस्थ जीवन का एक अंग बन सके।

कृपया हर अंक पर अपनी राय, सुझाव या आलोचना भेजें। यह भी बतायें किआपको कौन सा लेख सबसे अधिक पसन्द आया ? धन्यवाद

सम्पादक,जीवनीय,

ई–III/२४९, सेक्टर एच, अलीगंज

लखनऊ – २२६ ०२०

शिशु की आहार व्यवस्था

डा. प्रमोद मालवीय एवं वैद्य पूर्ण चन्द्र जैन, लखनऊ

शरीर में आहार की जरूरत शरीर की वृद्धि, उसकी टूटफूट की मरम्मत एवं विभिन्न क्रियाओं के संचालन हेतु आवश्यक ऊर्जा की प्राप्ति के लिए है। फिर वह चाहे केवल दुग्ध हो अथवा दुग्ध एवं अन्न, उससे उक्त आवश्यकता की पूर्ति होनी चाहिये। आहार में प्रोटीन, वसा, कार्बोज, लवण जल एवं विटामिन्स की गणना की गई है। इनमें प्रोटीन शरीर की वृद्धि एवं मरम्मत का कार्य करती है। एक ग्राम प्रोटीन से ४.१ केलोरी ऊर्जा उत्पन्न होती है। वसा भी शरीर की वृद्धि के लिए आवश्यक है और १ ग्राम वसा ९ कैलोरी ऊर्जा उत्पत्र करती हैं। कार्बोज द्रव्य केवल ऊर्जा उत्पत्र करते है और १ ग्राम कार्बोज से ४ कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। लवण, जल एवं विटामिन्स से यद्यपि ऊर्जा प्राप्त नहीं होती अपितु शरीर की रक्षा होती है। बाल्यावस्था में निम्न प्रकार से ऊर्जा की आवश्यकता होती है

बाल्यावस्था

१ वर्ष से कम	१०० कैलोरी प्रति किलोग्राम भार
१-३ वर्ष	९०० कैलोरी
३-५ वर्ष	१२०० कैलोरी
५-७ वर्ष	१४०० कैलोरी
७-९ वर्ष	१७०० कैलोरी
९-१२ वर्ष	२००० कैलोरी
१२-२१ वर्ष	२४०० कैलोरी
२१-३० वर्ष	२६०० कैलोरी

ऊर्जा की आवश्यकता एवं पूर्ति आहार द्रव्यों का पचन, शोषण एवं उपयोग रूपी धातुपाक, क्रिया एवं शरीर की ऐच्छिक एवं अनैच्छिक क्रियाओं के संचालन के लिये होती है।

शिशु का आहार

स्तनधारी प्राणियों में जन्म से लेकर कुछ समय तक मां का दूध ही एकमात्र पोषक एवं ऊर्जा उत्पादक आहार होता है। इस कारण प्रकृति की ओर से स्वभावतः दुग्ध में वे सब द्रव्य उपस्थित रहते हैं जिनसे शिशु की वृद्धि के साथ उसकी आवश्यक क्रियाओं को पर्याप्त ऊर्जा मिल सके। इसके साथ रक्षात्मक कार्य के लिए उसमें जल, लवण एवं विटामिन्स विद्यमान रहते हैं जिससे दुग्ध को पूर्णाहार कहा जाता है। आयुर्वेद में दूध के गुणधर्मों में उसे स्निग्ध, धातुवर्धक, ओजवर्धक, वृष्य, स्फूर्तिदायक, बलकारक, बुद्धिवर्धक, जीवनीय एवं रसायन कहा है।

	मातृ दुग्ध	गाय का दूध	बकरी का दूध	भैंस का दूध
प्रोटीन	१.२५	३.५०	४.४	५
वसा	३.५०	४.००	४.६	७.९
दुग्धशर्करा	७.००	४.५०	४.२	४.५
खनिज लवण	.२०	.७५	.८	.८
जल	८७.५५	८७.५०	८६	८०.९

बच्चे द्वारा मां के चूचुक को चूसने से गर्भाशय को स्वाभाविक स्थिति में आने में भी मदद मिलती है। दूध आसानी से हजम हो जाता है और विभिन्न रोगों से उसकी रक्षा करता है।

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है कि पाचन की दृष्टि से माता के दूध का कोई विकल्प नहीं। गाय के दूध में उबला जल मिलाकर प्रोटीन एवं वसा का प्रतिशत कम किया जाता है। इसके बावजूद भी यह माता के दूध के सदृश गुणकारी, सुपाच्य एवं आरोग्यदायक नहीं हो पाता। शिशु को गाय का दूध देना ही पड़े तो उसमें उबला जल मिलाकर दिया जा सकता हैं।

शिशु की आयु	जल गोदुग्ध मिश्रण	एवं प्रोटीन प्रतिशत	वसा प्रतिशत	दुग्ध शर्करा प्रतिशत
०-२ सप्ताह	१:१	१.७५	१.७५	२.४
२-१६ सप्ताह	२:१	२.३	२.३	३.२
४-६ सप्ताह	३:१	२.६	२.६	३.५
६-९ सप्ताह(गोदुग्ध)	३.५	३.५	४.७५	

(९ मास के उपरांत शुद्ध गोदुग्ध दिया जाना चाहिये।)

जल मिश्रित गोदुग्ध में शर्करा की मात्रा कम होने के कारण मिश्री मिलाना चाहिये। क्योंकि ग्लूकोज से कभी-कभी बच्चे को पतले दस्त आने लगते है। आयुर्वेद के अनुसार काली गाय का दूध श्रेष्ठ होता है। सद्यःप्रसूता गाय का दूध भी एक सप्ताह तक नहीं पिलाना चाहिये।

दुग्ध पान में सावधानियां

- दुग्ध पान की मात्रा का निर्धारण शिशु के जन्म की स्थिति से करना चाहिये। जन्म के १२ घंटे बाद शिशु को कम से कम दो बार स्तनपान करावें। दुबले पतले शिशु, जिनका वजन तीन किलो से कम है, को २४ घंटे में ४ बार दूध पिलावें, ३ से ४ कि. वजन वाले को २४ घंटे में ६ बार, तथा ४ कि. से अधिक वजन वाले को २४ घंटे में पांच बार दूध पिलावें। एक बार में १५ मिनट से अधिक स्तनपान नहीं कराना चाहिये और इतने समय मे दोनों स्तनों से दुग्ध पान कराना चाहिये।

- दूध पिलाने के उपरांत मां को खड़ी होकर शिशु को कपड़े में लपेटकर कंधे पर सीधे रखना चाहिये जिससे आमाशय में पहुंची हुई हवा निकल जाय अन्यथा दूध की उलटी हो सकती है।
- माता को अपने स्तनों की भली भांति देखरेख करना चाहिये। चूचुक कटे न हों और न कोई घाव हो, स्तनों में रूक्षता से दरार भी न पड़ी हो। दूध पिलाने के पूर्व दोनों स्तनों को गुनगुने जल से साफ कर लेवें तथा उन्हें कड़े बंधन में न रखें।
- माता को टीबी, फिरंग आदि संक्रामक रोग होने पर स्तनपान न करावें। इसी प्रकार माता को हृदय की व्याधि, वृक्क शोथ, रक्तक्षय, अपस्मार आदि व्याधि होने पर सावधानी से दुग्धपान करावें।
- स्तनपान कराने वाली माता के आहार में स्निग्ध, मधुर, पोषक आहार, फल, हरी तरकारी एवं उचित मात्रा में जल भी दिया जाना चाहिये।
- शिशु को गोद में उठाते समय सावधानी बरतें जिससे उसकी हंसली न उतर जाय।
- शिशु को समय पर सुलावें। शिशु के रोने पर अथवा सुलाने के लिए अफीम आदि नशीली दवाओं का सेवन न करावें।
- जन्म के एक सप्ताह के भीतर शिशु को स्वर्ण भस्म मधु के साथ चटायें। इससे शिशु के शरीर में रोगप्रतिकारक क्षमता का निर्माण होता है।
- शिशु को माता का स्तनपान एक वर्ष तक करावें। ६ माह के बाद माता का दुग्ध कम पड़ने पर गाय का दूध उबालकर एक वर्ष तक देवें।
- शिशु के जन्म के प्रथम मास के उपरांत जन्म घूंटी का सेवन प्रतिदिन अवश्य करावें। इससे अपच नहीं रहता।
- दूध पिलाने वाली बोतल को प्रत्येक बार इस्तेमाल के पूर्व उबालना चाहिये और दूध पिलाने के उपरांत भी उबालकर रख देवें।
- ६ मास तक शिशु को स्नान कराने के पूर्व जैतून के तेल या सरसों के तेल से मालिश करना चाहिये और पश्चात् उबटन कर गुनगुने जल से स्नान करावें।
- जन्मोपरांत शिशु को संक्रामक रोगों से बचाव के लिये ६ विशिष्ट व्याधियों के लिये टीके लगवायें।
- माता के दूध की मात्रा कम होने पर उसके दूध को बढ़ाने का प्रयत्न करें। इसके लिये मधुर रस युक्त पदार्थों का सेवन, द्रव पदार्थों का सेवन, शालि, साठि, दाभ, कुश, काश, सारिवा, खस, ईख की जड़ों का क्वाथ, मुसली, शतावरी, विदारीकन्द केचूर्ण का सेवन करावें।

बालकों का आहार

बाल्यावस्था शरीर की वृद्धि की अवस्था है अतः इस समय शरीर के वृद्धिकारक आहार द्रव्यों का सेवन अधिक हितकर है। अतः आहार में प्रोटीन समुचित अनुपात में होनी चाहिये। एक वर्ष से कम आयु में इसकी मात्रा ३.५ ग्राम, प्रति किलो शरीर भार, १ से ३ वर्ष तक ३.५ ग्राम प्रति किलोभार, ३ से ६ वर्ष तक ३.५ ग्राम प्रति किलोभार, ५ से ७ वर्ष तक ३ ग्राम प्रति किलोभार, ७ से १५ वर्ष तक ३.५ ग्राम प्रति किलोभार, एवं १५ से २९ वर्ष तक २ ग्राम प्रति किलोभार प्रोटीन आहार में देवें। इसमें से १/३ से १/२ भाग प्रोटीन पशु जन्य दुग्ध, पनीर, अंडा, मांस आदि के रूप में देवें।

बालकों के आहार में गेहूं, ज्वार, मक्का आदि अनाज, विभिन्न दालें, ताजी हरी तरकारियां, ताजे फल, दुग्ध, मछली, मांस, तैल, अंडा तथा शक्कर को समुचित मात्रा निर्धारण कर देना चाहिये। अन्नाद बालकों में हितकर एवं सन्तुलित आहार देने की मार्गदर्शक सारणी दी गयी है।

अन्नाद बालकों का सन्तुलित आहार (वजन ग्राम में)

२-३ वर्ष	४-६ वर्ष	७-८ वर्ष	१०-१२ वर्ष	१३-१५ वर्ष	१६-१८ वर्ष	
१५०	२००	२५०	३२०	४३०	४५०	अनाज, गेहूं, चावल
५०	६०	७०	७०	७०	७०	ज्वार, मक्का, दालें
८०	१२५	१२५	१२५	२५०	२७५	हरी तरकारी या सब्जी
५०	५०	६०	६०	३०	३०	फल
५००	४००	५००	४००	५००	४००	दूध, दही
२०	२५	३०	३५	३५	४५	तेल
३०	४०	५०	५०	३०	४०	शक्कर एवं अन्य मधुर द्रव्य
३०	३०	४०	५०	९०	१००	मांस, मछली, अंडा

मांस, मछली, अंडा लेने पर दूध की मात्रा आधी हो जाती है।

जीवनीय
स्वास्थ्य पत्रिका
के
नियमित
पाठक
बनें

शिशुओं का आहार

आपका शिशु आपकी आँख का तारा होता है और उसके समुचित विकास के लिये उचित संस्कार और उचित पोषण अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए यह अनिवार्य है कि मां का आहार भी पौष्टिक और संतुलित हो। हमारे देश में गर्भावस्था के समय मां के आहार पर हमारे विश्वासों, प्रथाओं और निषेधों का बहुत प्रभाव पड़ता है और बहुत से पोषक पदार्थों का सेवन उसके लये निषिद्ध होता है। इनका दुष्परिणाम मां के कुपोषण के रूप में सामने आता है। ऐसी स्त्रियों के बच्चे भी कमजोर पैदा होते हैं। माँ और शिशु की अच्छी सेहत के लिये गर्भवती स्त्री को पहले की तुलना में दिन में सवाया खाना चाहिये। उसे कैल्शियम, प्रोटीन, खनिज लवण, विटामिन्स आदि से युक्त आहार लेना चाहिये जिससे शिशु का उपयुक्त पोषण होगा और उसमें किसी तरह की शारीरिक असंगतियां नहीं होंगी। इसी प्रकार शिशु जन्म के तुरन्त बाद भी माँ को अधिक मात्रा में प्रोटीन और विटामिन से युक्त आहार की आवश्यकता होती है। माँ के आहार में हरी शाक-भाजी, फल और दूध का समावेश रहना आवश्यक है।

नवजात शिशुओं के लिये माँ का दूध श्रेष्ठ होता है। माँ के दूध पर आश्रित बच्चों में मृत्यु-दर और अस्वस्थता-दर ऊपरी दूध पर आश्रित बच्चों से कम होती है।

माँ का दूध बच्चे के लिए पैदा होने से लेकर चार महीने तक की पूरी खुराक है। इसके अतिरिक्त उन्हें अन्य किसी चीज की आवश्यकता नहीं होती। कुछ लोगो को ये भ्रम होता है कि बच्चा पैदा होने के बाद शुरू में जो पीले रंग का दूध होता है उसे नहीं पिलाना चाहिये। वास्तव में यह एक गलत धारणा है क्योकि यह पीले रंग का गाढ़ा दूध बच्चे के स्वास्थ्य के लिये बहुत अच्छा होता है और कमजोर बच्चे भी इस दूध को आसानी से पचा लेते हैं। माँ का दूध शिशुओं की कुदरती खुराक है। जबकि गाय, भैंस और पाउडर का दूध पिलाने के लिये कटोरी, चम्मच और बोतल की आवश्यकता होती है और यदि ये बर्तन साफ नही होंगे तो शिशु रोगग्रस्त हो सकता है। माँ के दूध में जीवाणुओं का सहज प्रवेश नही हो पाता। इसके अतिरिक्त स्तनपान से माँ और शिशु के बीच भावनात्मक संबंध भी स्थापित होता है।

शिशु के छह-सात महीने के होने के साथ ही दूध के अतिरिक्त खाद्य पदार्थ खिलाने की आवश्यकता होती है। कुछ लोग बच्चों को खाने की चीजें काफी देर से देते हैं और ये सिर्फ माँ के दूध पर ही पलते हैं। इस तरह के बच्चों को पूरी खुराक न मिलने से उनका विकास ठीक से नहीं हो पाता। छह-सात महीने के बाद बच्चे को फलों का रस, नमक डालकर उबाली हुयी शाक-भाजियों का पानी, दाल का पानी, टमाटर, गाजर का रस, दलिया आदि देने से वे स्वस्थ और हृष्ट-पुष्ट रहते हैं। वस्तुतः जब शिशु एक वर्ष का हो जाता है तब उसके खानपान की रुचि और मानसिकता स्थिर हो जाती है।

दो से तीन वर्ष तक के बच्चों के आहार में गेहूं की रोटी, दालें, फलियां, चावल, हरी सब्जी और सूप, उबला हुआ आलू, फलों का रस, थोड़ा घी और तेल, अंडा, छाछ आदि सम्मिलित कर सकते हैं।

तीन से पाँच वर्ष तक के शिशुओं के आहार में गेहूं के अतिरिक्त बाजरा, ज्वार, मकई की रोटी, दालें, चावल, फल, गोभी, आलू, बैंगन, दही, छाछ, हरी सब्जियां, थोड़ा मिर्च मसाला, सूखा मेवा, घी, तेल, साबूदाना, गाजर, मूली, टमाटर, नींबू, अंडा और मछली आदि देने से सभी आवश्यक पदार्थ उन्हें मिल जाते हैं।

बच्चे की देखभाल

वैद्य रमाकान्त मणि, कानपुर

बच्चे को स्वस्थ रखने की दृष्टि से निम्न उपाय करने चाहिए।

बच्चे को पोलियो, टिटनस, डिप्थीरिया, खसरा व चेचक के टीके उचित समय पर लगवा कर इन जानलेवा बीमारियों से उसकी पूर्ण सुरक्षा की जानी चाहिए।

स्वस्थ बच्चे अधिकांश समय सोते रहते हैं। अतः उन्हें आरामदेह बिस्तर उपलब्ध कराना चाहिए। मच्छरदानी लगाकर मच्छरों से उसे बचाना चाहिए अन्यथा वह अनेक बीमारियों का शिकार हो सकता है। बच्चे के चेहरे को खुला रखना चाहिए जिससे वह ताजा हवा में सांस ले सके।

बच्चे की नित्य तेल-मालिश कर, गुनगुने पानी से नहला-धुला कर साफ रखना चाहिए।

जहां तक बच्चे के पोषण का सवाल है इसके लिए मां का दूध सर्वोतम है। कम से कम छह महीने तक बच्चे को मां का दूध मिलना चाहिए। दूध पिलाने वाली माताओं को सुपारी, तंबाकू तथा मद्य का सेवन कतई नहीं करना चाहिए। उन्हें चाय और काफी तक का सेवन कम से कम करना चाहिए।

एक औसत भार के बच्चे को हर चार घंटे बाद दूध पिलाना चाहिए। दूध पिलाने के बीच के अंतराल में थोड़े-थोड़े समय बाद बच्चे को उबाल कर ठंडा किया हुआ पानी पिलाना चाहिए। बच्चे को नित्य थोड़ा शहद भी देना चाहिए।

नौ महीने का होने पर बच्चे को आहार में चबाने लायक चीजें भी देनी चाहिए। इसके लिए बच्चे को टोस्ट, बिस्कुट, सब्जियां, फल, थोड़ा आलू, दाल का पानी और दही दिया जा सकता है। उसे आइस्क्रीम, टॉफी, तली हुई चीजें, सूखे मेवे और मिठाइयां नहीं देनी चाहिए। उसे मक्का, मूली, पेस्ट्री आदि भी नहीं देनी चाहिए। मसाले, मिर्च और मांस मछली से उसे दूर रखना चाहिए। बच्चे को पानी खूब पिलाना चाहिए जिससे उसे कब्ज नहीं रहेगा।

शिशु की देखभाल

वैद्य प्रमोद वा. कुलकर्णी, पुणे

आयुर्वेदशास्त्र में केवल रोगों का ही विचार नहीं किया गया है। व्यवहार में कैसे जिया जाए, जीवन कैसे बिताया जाए, शरीर को निरोगी कैसे रखें आदि सब बातों का विस्तार से वर्णन आयुर्वेद में पाया जाता है।

स्नानः बच्चे का जन्म होने के तुरन्त बाद उसको स्नान करवाना चाहिए। इसके लिए सुखोष्ण पानी इस्तेमाल करें। इसके बाद सफेद, साफ सुथरे कपडे से बच्चे को ढक कर रखें पर उसका मुंह खुला रखें। बच्चे को हर दिन नहलाना चाहिए। पानी न ज्यादा गरम न ठंडा लें। नहाने के बाद बच्चा जल्दी ही सो जाता है। नहलाने के लिए साबुन के बजाय शिकाकाई का उबटन इस्तेमाल करने से त्वचा मुलायम एवं स्निग्ध रहती है। शिकाकाई कषाय, खट्टी, वात एवं कफ कम करने वाली एवं तेल की चिकनाई कम करने वाली होने के साथ ही खुजली भी नष्ट करती है। कुछ माताएं बच्चे को सुबह जल्दी स्नान करवाती हैं। इससे बालक को ठंडी होने की संभावना रहती है। बच्चे के सिर पर गुनगुना पानी डालना ही उचित होता है। नहाने के बाद बच्चे को मुलायम, और सूखे कपड़े से पोंछकर टोपी पहनानी चाहिए।

दुग्धपानः बच्चे के जन्म के तीन चार दिन बाद माँ को ठीक से दूध आता है। उस वक्त तक बच्चे को गाय का दूध ऊपर की मलाई निकालकर देवें। स्तनों में दूध आते ही प्रथम थोडा निचोड़कर निकाल देवें, बाद में बच्चे को पिलायें। माँ का दूध ही बच्चे के लिए सबसे अच्छा आहार माना गया है।

नींदः बच्चे को दूधपान करवाने के बाद उसे दाहिनी करवट पर सुलाना चाहिये। बायीं करवट पर सुलाना उचित नहीं होता है। यदि माँ खुद लेटकर, पिलावे तो बच्चा दाहिने बाजू पर आ जाता है। बच्चे को स्तनपान कराते वक्त माँ को नहीं सोना चाहिए। बच्चे के नीचे मुलायम वस्त्र डालकर सुलावें। बच्चे की सोने की जगह पर ज्यादा रोशनी न हो। ज्यादा रोशनी बच्चे की आँखे सह नहीं पाती हैं।

बाल कामला (पीलिया): कुछ नवजात बच्चों को जन्म के कुछ दिन बाद पीलिया जैसी बीमारी होती है। इन दिनों एरण्ड तेल पिलाने से बच्चे का पाखाना साफ होने से पीलिया कम हो जाता है। यह बीमारी माँ के आहार दोष से होने की संभावना रहती है।

कपडा : बच्चे को कपड़ा ढीला, स्वच्छ, गरम और सहज निकाला जा सके ऐसा ही पहनाना चाहिए। कपड़ा धोने के बाद यदि उन कपड़ों को नीम या वच या वायविडंग का धूम देवें तो बच्चे के पास खटमल, मच्छर नहीं आते हैं। बच्चे का बिछौना, चादर और तकिया मुलायम गरम होना चाहिये। बच्चे को ठंडी हवा तुरन्त बाधा पहुंचा सकती है, इसलिये उसको गरम कपड़ा पहनाना चाहिये।

स्तनपान आँठवें मास तक करवाना ही चाहिये। दाँत आ जाने के बाद धीरे-धीरे स्निग्ध, सुखोष्ण आहार देना शुरू करें।

दांत का निकलना प्रायः बच्चों के सब रोगों का कारण होता है। प्रायः खाँसी, सरदर्द, उल्टी, दस्त, जुकाम पाये जाते हैं। बच्चे के दाँत निकलने के तुरन्त बाद ये बीमारियाँ खत्म हो जाती हैं।

प्रायः जन्म के सात-आठ महीने बाद बच्चे के दाँत निकलने शुरू होते दूध के २० दांत निकलते हैं जो जल्दी गिरते हैं। प्रायः दूध के दांत बच्चे के जन्म के बाद जिस महीने में निकलते हैं उतने ही बरस के बाद गिर जाते हैं।

बच्चे के पोषण के लिए माँ का दूध ही सबसे अच्छा आहार है। यदि बच्चे को पेट भर मां का दूध नहीं मिलता तो गाय का दूध भी देवें। मगर कण्डेस्ड मिल्क, कृत्रिम खान-पान बच्चे को देना अनुचित है। बच्चे को दाँत आने से पहले अन्न देना उचित नहीं है। मगर अन्न की शुरुआत करने बाद भी दूध देते रहें।

बच्चे की प्रकृति के अनुसार आहार देवें। अयोग्य आहार से बच्चे दुर्बल बनते हैं। माँ को भी सात्विक आहार लेना चाहिए, वह तीखा या बासी खाना ना खावे।

बच्चे का जन्म होने के तुरन्त बाद उसको तीव्र प्रकाश में रखना अनुचित है। क्योंकि वह तीव्र प्रकाश को सह नहीं पाता है। दस दिन के बाद दृष्टिज्ञान आने लगता है। दूसरे मास के बाद वह आदमी का मुंह देखना शुरू करता है। तीसरे मास के बाद प्रकाश की तरफ या हिलने वाली वस्तु की तरफ देखने लगता है। जो व्यक्ति पहचान वाला हो उसको देखकर हंसने लगता है। पहले दो मास में बच्चे को बिठाना अनुचित है। क्योंकि उसके सर का वजन खुद संभल नहीं पाता है। इससे उसको कुब्जता आने की संभावना रहती है

बच्चें के साथ मधुर शब्दों में, ममतापूर्ण बातचीत करें। यदि उससे चूक हो भी जाय तो तुरन्त गुस्सा न होकर बगैर डाँटे उसकी चूक उसको समझावें। मारना उचित नहीं है। किसी का भय दिखाना, गुस्से से बोलना, भूत का भय दिखाना आदि नहीं करें। बच्चे को खुली हवा में खेलने को भेजें या खुद ले कर जावें। ऐसा किया तो बच्चे निरोगी बनते हैं।

बच्चे का सही पहनावा

उमेश पाण्डे, इन्दौर

हर माँ अपने छोटे से बच्चे को एक सुन्दर खिलौने के रूप में देखना चाहती है। उसकी इस इच्छापूर्ति में सबसे बड़ी भूमिका वस्त्रों की होती है। क्योंकि प्रकृति प्रदत्त शरीर के लिए वस्त्र सुन्दर आवरण होते हैं। सभी वस्त्र बच्चे के स्वास्थ्य के लिए उत्तम नहीं होते, भले ही उनके धारण करने से बच्चा सुन्दर ही क्यों न दिखाई दे। अतः अपने बच्चे को जापानी गुड्डे अथवा गुड्डी की भाँति संवारने वाली माँ यदि निम्नलिखित बातों का ध्यान रखते हुए अपने बच्चे को वस्त्र पहनाएं तो न केवल उनसे बच्चा सुन्दर दिखेगा बल्कि स्वस्थ भी रहेगा।

बच्चों को ग्रीष्म ऋतु में अधिकाधिक सूती, शीत ऋतु में ऊनी और वर्षाकाल में ऊनी अथवा सूती जो भी समयानुकूल लगे वह वस्त्र पहनायें।

रेशमी वस्त्र हालांकि चमकदार, मृदु एवं चिकने होते हैं। तथापि बच्चों को उन्हें नहीं पहनाना चाहिए।

केवल ऊनी वस्त्रों को भी पहनाना हितकर नहीं क्योंकि वे उष्मा के शोषक और कुचालक होते हैं। अतः बच्चे की त्वचा में गड़ते हैं इसी प्रकार ऊनी वस्त्रों को पहनाकर बच्चे को अत्यधिक समय तक धूप में लिटाने से भी उसे तकलीफ हो सकती है।

बच्चे के वस्त्र खुरदरे न हों, खुरदरे वस्त्र बच्चे की कोमल त्वचा के लिये हानिकारक साबित हो सकते हैं। मलमल के वस्त्र श्रेष्ठ हैं।

बच्चे को अत्यधिक तड़कीले-भड़कीले रंग के वस्त्र भी हितकर नहीं। इसी प्रकार उसे ऐसे रंगीन वस्त्र भी नहीं पहनाना चाहिए जिनका कि रंग छूटता हो क्योंकि बच्चे कपड़े को प्रायः मुंह में लेकर चूसते रहते हैं जिससे वह रंग उनके पेट में जाकर हानि पहुंचा सकता है।

विभिन्न रंग अपनी प्रकृति के अनुसार सूर्य की किरणों का भी शोषण करते हैं अतः रंगों का चुनाव एक अहम भूमिका रखता है। इसके लिये ध्यान रखें किः

बच्चों को काले वस्त्र न पहनायें, काला रंग किरणों का पूर्ण शोषक होता है।

लगातार "परपल" रंग के वस्त्र पहनाने से बालक के मस्तिष्क पर बुरा प्रभाव पड़ता है। यह बात प्रयोगों द्वारा सिद्ध हो चुकी है।

नीले वर्ण के वस्त्र बच्चे के बुद्धि तत्व को बढ़ाते हैं और उसे शांति प्रदान करते हैं।

हरा वर्ण बच्चे की नेत्र ज्योति में वृद्धि करता है। प्रारंभिक महीनों में बच्चों को हरे वस्त्र पहनाना लाभकारी होता है।

पीला वर्ण या नारंगी वर्ण बच्चे के लिए अत्यंत ही स्वास्थ्यकर एवं शांतिकारक होता है। किन्तु प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया जा चुका है कि पीले वस्त्र हिस्टीरिया, ग्रसित बच्चों को नहीं पहनाना चाहिए।

श्वेत वस्त्रों का धारण करना भी बच्चों के लिये हितकारी है। किन्तु नेत्र रोग से ग्रसित बच्चे को इस वर्ण के वस्त्र उपयुक्त नहीं।

- चटकीले लाल वस्त्र भी बच्चे में उद्वेग पैदा करते हैं।
- मोतिया गुलाबी, क्रीम कलर अथवा मिश्रित रंगों के वस्त्र बच्चे के लिये सुखदायी होते हैं।

बच्चे के वस्त्र कसे हुए न हों। कसे हुए वस्त्रों के कारण बच्चे के शरीर में रक्त परिसंचरण में व्यवधान उत्पन्न होता है। इसी प्रकार उनको सांस लेने में भी तकलीफ हो सकती है। ये दोनों ही बातें उसके लिये हितकर नहीं।

अनेक माताएं बच्चे को सदैव सिर पर टोपी और पैर में कसे हुए जूते और मोजे पहनाए रखती हैं। ये दोनों ही थोड़ी देर के लिए ही ठीक हैं।

इनका ध्यान रखें

डॉ टी. के. अब्दुल रज्जाक

बच्चे जिन स्वास्थ्य समस्याओं से ग्रस्त हो जाते है उनके समाधान की सर्वोत्तम विधि प्राकृतिक है। परंतु सच्चाई यह है कि जन्म के क्षण से ही बच्चे कृत्रिम पर्यावरण में बढ़ते हैं। वे प्रकृति से तादात्म्य स्थापित कर ही नहीं पाते। आधुनिक औषधों का सेवन भी उन्हें उनकी स्वास्थ्य समस्याओं से मुक्त कर नहीं सकता।

बच्चे अपनी समस्याओं को मुंह से व्यक्त नहीं कर सकते। बच्चे की शारीरिक अवस्था तथा विविध दृश्य लक्षणों से ही अनुभवी चिकित्सक अचूक अनुमान लगा लेते हैं। उनमें से महत्वपूर्ण हैं:

बिना कारण बहुत रोना, पेशाब की अधिकता या दस्त, सर्दी, जुकाम और नाक बहना, शरीर पर ददोरे या चित्तियां और खुजली, शरीर पर सूजन, आंख आना और आंखें खोलने में तकलीफ, उल्टी और सांस लेने मे तकलीफ, पसली चलना, हिचकी, सुस्ती और थकान, कब्ज, बेचैनी, शरीर का भारीपन, दौरे, आंख, चेहरे या शरीर पर लाल, पीला या नीले रंग के धब्बे, अश्रुस्राव, शरीर का अपने आप मोटा होना और पतला होना, कफ आना, सीने का निकल आना, पेट में उभार, खून की कमी, पेशाब और पखाने का रंग बदलना, गुदभ्रंश, छींक। इन लक्षणों को दूर करने के लिए आवश्यक कदम उठाना चाहिए। बड़े बच्चों को उनका प्राकृतिक आहार दिया जाना चाहिए। उसमें फल, सब्जियों, शहद, नारियल, दूध आदि का समावेश होना चाहिए। ये आसानी से पच जाती हैं और इनसे कोई हानि नहीं हो सकती। खीर, गुड़, दही आदि पदार्थों के पेट और आंत में ठीक से न पची हुई स्थिति में रह जाने की संभावना रहती है। ऐसा आहार अफारा और कृमि उत्पन्न करता है जो रक्त और अस्थिसार में प्रवेश करके अनेक परेशानियां उत्पन्न कर सकता है।

कृमियों से दांतदर्द, भूख न लगना, अपच, अतिसार, कमजोरी और रक्ताल्पता उत्पन्न होती है।

दन्तोदय काल में उपचार

उमेश पाण्डे , इन्दौर

शिशु जन्म से ५ –७ माह तक केवल स्तनपान पर ही आश्रित रहता है। इस अवधि के बाद से ही बालक को जो कुछ भी इधर–उधर से प्राप्त होता है उसे वह मुख में डालकर चबाने की चेष्टा करता है। क्योंकि शारीरिक वृद्धि के साथ–साथ ही शिशु के दांत अब निकलने को होते हैं। इस अवस्था में दाँतों का निकलना एक प्राकृतिक क्रिया है और अतः इसमें बालक को किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होना चाहिये। किन्तु कहावत है कि बिल्ली की पीठ पर चोट लगने के समय, बच्चों के दांत निकलते समय तथा मोर की कलंगी उत्पन्न होते समय उन्हें "सर्वांग–पीड़ा" होती है। लगभग ९० से ९५ प्रतिशत बालकों को दाँतो के निकलने के समय कष्टों का सामना करना पड़ता है।

लार अधिक बहती है, उसे रात में बुखार भी आता है तथा गहरी नींद नहीं आती है। प्रायः उसे हरे–पीले अथवा सफेद पतले दस्त होते हैं। दस्त सामान्य से अधिक अर्थात् ६ से १० तक होते हैं। मसूढ़ों में एक विशेष प्रकार की खुजली चलती है जिसके निवारणार्थ स्तनपान के समय वह स्तनों को मसूड़ों से दबाता भी है। कभी–कभी उसे सर्दी–जुकाम, नेत्रपीड़ा अथवा कर्ण पीड़ा का भी सामना करना पड़ता है।

दाँतों के निकलने का समय अत्यंत नजदीक आते समय उक्त विभिन्न उपद्रव न्यूनाधिक जारी रहते हैं किन्तु बालक के मसूड़ों में अत्यधिक खुजली अथवा जलन होने लगती है। उसके मसूढ़े गुलाबी रंग के हो जाते है। यही नहीं वे कुछ फूल भी जाते हैं। ऐसे समय मसूड़ों को दबाने से बच्चे को अत्यधिक पीड़ा होती है। अतः इस अवस्था में बच्चा न तो किसी →

दांत निकलना : कुछ सावधानियां

वैद्य र. म. नानल, मुम्बई

दांत निकलते समय शरीर में अनेक प्रक्रियाएं होती है जिसके कारण कम ज्यादा तीव्रता के विविध उपद्रव उत्पन्न होते हैं। इन्हें दंतोद्‌भेदज रोग कहा जाता है। ये प्रायः जन्म के कुछ माह बाद प्रकट होते हैं।

दांतों की रचना में वात दोष प्रमुख होता है। अर्थात् दांतों की पूर्ण प्राकृत रचना के लिए वायु का पूरी तौर से प्राकृत होना आवश्यक है और वायु के विकृत होने से दांतों में विकार उत्पन्न होते हैं। पित्त के कारण दांत पीले पड़ जाते हैं। कफ के कारण वे सफेद होते हैं और वात के कारण मटमैले।

दांतों की रचना में विशेष रूप से अस्थि धातु का संबंध होता है। दांतों को अस्थि धातु का उपधातु माना गया है। मेद धातु के प्रभाव से इनमें चिकनाहट होती है। अस्थिधातु के उत्तम होने पर दांत मोटे होते हैं। शुक्र धातु की उत्तमता से उनमें रचनात्मक समता रहती है।

अस्थिवह स्रोतस, अस्थिसंस्थान या अस्थिधातु की विकृति से दांतों के विविध रोग उत्पन्न होते हैं। जैसे एक दांत के ऊपर दूसरा दांत निकलना और दांत गिरना। दांतों की विकृति से शरीरगत अस्थिधातु की विकृति का अनुमान किया जा सकता है।

दंतोत्पत्ति की वय

बच्चे की उम्र ७ माह पूरा होने के बाद आठवें महीने के प्रारंभ में दांतों का उगना आयुर्वेद में श्रेष्ठ माना गया है। सातवां एवं आठवां महीना दोनों उपयुक्त है। कई बच्चों के चौथे महीने ही दांत निकलने लगते हैं जिसे अच्छा नहीं माना जाता।

दांत निकलते समय के विकार

दांत निकलते समय मसूड़ों को फोड़कर बाहर आते हैं। इससे कुछ समय तक मुख में घाव की अवस्था रहती है। उसमें किसी प्रकार का संक्रमण हो जाय तो अनेक प्रकार के विकार हो सकते हैं। धूल, मिट्टी आदि से मुख के घाव विकृत हो सकते हैं जिससे उल्टी, लार का बहना आदि विकार उत्पन्न होते हैं।

अस्थिधातु और विष्ठा का निर्माण एक ही कला से होता है। इसीलिए दांत निकलते समय बच्चों को अतिसार हो जाया करता है।

रोकथाम के उपाय

इन विकारों को उत्पन्न होने से रोकना संभव नहीं। इनकी तीव्रता को कम करने के उपाय अवश्य किये जा सकते हैं। पांचवें महीने में जब मसूड़े कड़े होने लगते हैं तब बच्चे को खेलने के लिए हल्दी की गांठ या मुलेठी दी जाय। बच्चे हर चीज को चबाने की कोशिश करते हैं। हल्दी या मुलेठी को चबाने की कोशिश में मसूड़ों के आसानी से फूटने में सहायता होती है। हल्दी या मुलेठी के प्रभाव से मुंह का घाव भर आता है और उसमें विकार नहीं उत्पन्न हो पाता।

दूसरे, दांत निकलना शुरू होने पर दांत एवं मसूड़ों पर तिल के तेल से हल्की मालिश करनी चाहिए।

आहार

छठे महीने के बाद बच्चे को पाचनशक्ति के अनुसार नारियल की मलाई में शहद मिलाकर खिलायें।

बबूल की गोंद को घी में भूनकर, खसखस, सूखा नारियल और शक्कर मिलाकर उचित मात्रा में खिलायें।

दूध, घी, देशी मुर्गी के अंडे का प्रयोग बहुतायत से करायें।

दांत निकलते समय खट्टी चीजों और नमक का सेवन बच्चे को न करायें।

डिब्बाबंद दूध असुरक्षित है

मानव सभ्यता के प्रारम्भ से न जाने कितनी पीढ़ियां मां का दूध पी कर बड़ी हुई हैं। यह प्रकृति द्वारा बच्चे के लिये सम्पूर्ण आहार है जो पोषण के साथ-साथ शिशु के शरीर को रोगों से लड़ने की क्षमता भी प्रदान करता है। यह मां और बच्चे के बीच की *भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक* कड़ी भी है जो बच्चे के सम्पूर्ण विकास के लिये आवश्यक है।

भारतवर्ष में जहां ७०% मातायें अशिक्षित हैं डिब्बे पर लिखे निर्देशों को पढ़ कर उनके अनुसार इसे प्रयोग करना असम्भव है। स्वच्छ जल और सामान्य स्वच्छता का अभाव इसे और घातक बना देता है। पश्चिम बंगाल में किये एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि डिब्बाबंद दूध प्रयोग करने वाली ६३% मातायें इसे बहुत पतला करके प्रयोग करती हैं। विकसित देशों में किये सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि केवल डिब्बाबंद दूध पर पोषित बच्चों में बीमार होने की सम्भावना स्तनपान करने वाले शिशुओं से चार से सात गुना *अधिक है।*

१९६० के दशक से ही पूरी दुनिया और भारत में डिब्बाबंद दूध के अंधाधुंध व्यापार के विरूद्ध और स्तनपान के पक्ष में विभिन्न संगठनों द्वारा आन्दोलन चलाये जा रहे हैं। भारत में भी इनके दबाव में कुछ कानून बने हैं पर इसकी निर्माता कम्पनियों द्वारा आक्रमक प्रचार अभियान अभी जारी है।

(वीहाई द्वारा प्रकाशित फोल्डर से साभार)

→ चीज को मुख में डालता है और न अधिक स्तनपान ही करता है। मसूड़ों में दर्द होने के कारण वह रोता बहुत है।

ये सभी लक्षण स्वाभाविक होते हैं और दाँत निकलने की क्रिया पूर्ण होने के साथ ही स्वतः लुप्त हो जाते हैं। फिर भी बालक की पीड़ा कम करने हेतु निम्न उपचार किए जा सकते हैं।

बच्चे के दाँत निकलने के समय से ही बच्चे के मसूड़ों पर थोड़ा-थोड़ा शुद्ध शहद दिन में १०-१२ बार लगाते रहना चाहिये। ऐसा करने से दाँत आसानी से निकल आते हैं। अतीस, काकडासिंगी और पीपल का अत्यंत महीन चूर्ण करके उस की अति अल्प (एक राई भर) मात्रा शहद के साथ बच्चे को दिन में दो बार चटाने से भी पर्याप्त लाभ होता है।

लगभग २० ग्राम असली चूने के पत्थर को (बिना बुझे चूने को) मिट्टी के एक नये कटोरे में रखें और उसमें ऊपर से लगभग ४०० मि.ली. जल रात में मिला दें। सुबह कटोरे में से ऊपरी स्वच्छ जल को निथार लें। इस निथारे हुए जल में लगभग ६०० ग्राम चीनी डालकर, एक तार की चासनी बना लें। इसे ठंडा करके बोतल में भरकर रख लें। इस शर्बत की १५ बूंदें बच्चे को सुबह शाम चटाने से उसके दांत आसानी से निकल आते हैं। और बच्चे में वमन, दस्त आदि उपद्रव भी नहीं होते हैं।

दांत निकलते समय कभी-कभी बच्चे को तीव्र बुखार घेर लेता है। ऐसे समय लगभग २० मिली दूध में लहसुन की २-३ कली भलीभांति उबाल ठंडा कर लें। इस दूध की हल्की सी मालिश बच्चे के तलुवों, मस्तक एवं पिण्डलियों पर करने से यह बुखार नियंत्रित रहता है।

यह एक निर्विवाद सत्य है कि जिन माताओं के बच्चों के बीच कम से कम ४-५ साल का अंतर होता है उनके दांत बिना किसी कष्ट के निकलते हैं। इसका कारण यह है कि जिन माताओं के बच्चों के जन्म के बीच कम अंतर होता है, उनके रक्त में या शरीर में कैलिशयम की कमी हो जाती है। इस कमी का प्रभाव माता के दूध पर भी पड़ता है। दाँत निकलने की क्रिया के समय यही कैलिशयम की कमी बच्चे के लिये अतीव कष्ट का कारण बनती है। अतः शरीर में प्रकृति प्रदत्त कैल्शियम की मात्रा को बनाये रखने के लिये दो बच्चों के बीच कम से कम ४ साल का अंतर होना चाहिये।

दांत निकलते समय या इससे कुछ पूर्व से ही बच्चे को अंगूर, सेब, अनार आदि फलों का रस देते रहना चाहिये। बच्चे को ऐसे समय मिठाई अथवा गर्म या गरिष्ठ पदार्थ कदापि नहीं देने चाहिये। माता को भी सुपाच्य एवं संतुलित आहार ही ग्रहण करने चाहिये।

५. बालक को मिट्टी आदि न खाने दें।

६. बालक के सिर पर तिल्ली अथवा बादाम का तेल लगावें। गर्मी के दिनों में बालक के सिर पर थोड़ा-थोड़ा पानी भी दिन भर में २-३ बार डालना हितकर है।

७. बालक जिस कमरे में रहता हो वहाँ पर्याप्त स्वच्छता हो तथा हवा एवं सूर्य का प्रकाश उस कमरे में पहंचता हो- इसका ध्यान रखें। अच्छा हो यदि नित्य सूर्योदय के समय बालक को सूर्य दर्शन करावें।

नवजात शिशु में कामला

डॉ. रीता मारवाह एवं डॉ. पवन जीत कौर, लखनऊ

कामला या पीलिया एक ऐसा रोग है जिसमें त्वचा, नेत्र, मुख,नख, मल और मूत्र पीले हो जाते हैं। यह पीलापन रक्त में किसी भी कारण से बिलीरूबिन नामक रंजक द्रव्य की अधिकता होने के कारण होता है। बिलीरूबिन की रक्त में सामान्य मात्रा ०.२ से १.२मिग्रा% होती है। नवजात शिशुओं में मिलने वाला कामला प्रायः प्राकृत एवं अवैकारिक होता है। त्वचा पर पीलेपन का लक्षण तभी मिलता है जब रक्त में बिलीरूबिन की मात्रा लगभग ४ मिग्रा % से अधिक होती है।

कारण

प्रायः रोग के प्रारम्भ होने के दिन के अनुसार नवजात शिशु में कामला के कारण का अनुमान लगाया जा सकता है।

प्रथम दिन–रक्त के वर्ग (ए बी ओ) तथा आर.एच. की विकृति, लाल रक्त कणों के टूटने से संबंधित रोग, गर्भाशय के अंदर गर्भ में संक्रमण आदि के कारण।

दूसरे या तीसरे दिन होने वाला कामला प्रायः प्राकृत एवं अवैकारिक होता है, जो समय से पहले प्रसव, जन्मकालीन श्वासावरोध, शरीर में ताप की कमी , लाल रक्त कोशिकाओं में एन्जाइम्स की कमी, मां के दूध में दोष आदि कारणों से हो सकता है।

चौथे से सातवें दिन रक्त में जीवाणुओं का प्रवेश (सेप्टिसीमिया) सिफिलिस, आदि के कारण।

आठवें दिन से तीसरे सप्ताह तक होने वाला कामला प्रायः सेप्टिसीमिया, यकृत शोथ, औषधियों की विषाक्तता (दर्द निवारक औषधियां, माता द्वारा अधिक औषधि सेवन करने से), पित्त नली में छिद्र न होने के कारण कामला रोग हो जाता है।

प्राकृत कामला प्रायः ७५% बच्चों में पाया जाता है। इस रोग में त्वचा, श्लेष्मल कला (नेत्र का सफेद भाग), जिह्वा के नीचे का भाग आदि का रंग पीला हो जाता है। गर्भ में पित्त के परित्याग का कार्य अपरा करता है, बच्चे के पैदा हो जाने के बाद यह कार्य उसका यकृत करता है। यह कार्य एक एंजाइम की सहायता से होता है। इस एन्जाइम की कमी से बच्चों में प्राकृत कामला हो जाता है।

इस प्रकार का कामला प्रायः तीसरे या चौथे दिन प्रारम्भ होकर एक दो दिन तक बढ़ता है फिर धीरे–धीरे कम होकर एक सप्ताह के अंदर समाप्त हो जाता है। प्राकृत कामला में शिशु को किसी चिकित्सा की आवश्यकता नहीं होती है, शिशु को उचित मात्रा में स्तनपान एवं जल पिलाना चाहिये।

आर.एच. दोष जन्य कामला

इसमें रोग की गंभीरता के अनुसार लक्षण मिलते हैं। साधारण प्रकार में प्रथम दो सप्ताह में तथा साधारण रक्ताल्पता रहती है। गंभीर प्रकार में ४८ घंटे के अंदर गंभीर रक्ताल्पता मिलती है व रोग धीरे–धीरे ठीक हो जाता है। अत्यंत गंभीर प्रकार में २४ घण्टों के अंदर तंत्रिका तंत्र की विकृति के लक्षण, मिलते हैं। पैदा होते समय बच्चा स्वस्थ दिखलाई पडता है, परन्तु शीघ्र ही गंभीर लक्षण मिलते हैं। त्वचा में रक्तस्राव के कारण काले धब्बे मिलते हैं। बच्चे को स्तनपान में कठिनाई, तीव्र ज्वर, पहले पेशियों में शिथिलता फिर कड़ापन होना, एवं आक्षेप आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। रक्त में बिलीरूबिन की मात्रा २० मिग्रा% या इससे अधिक होती है।

रक्त की विकृतिजन्य कामला से बचाव के लिये गर्भावस्था की प्रारम्भिक अवस्था में प्रत्येक स्त्री तथा उसके पति के रक्त का वर्ग तथा आर. एच. का पता लगाना चाहिये।

चिकित्सा व उपचार

प्राकृत कामला में प्रायः चिकित्सा की आवश्यकता नहीं होती है। परन्तु अन्य कारण जन्य कामला में कारण के अनुसार चिकित्सा व्यवस्था उपलब्ध करानी चाहिये।

- शिशु को उचित मात्रा में स्तनपान एवं जल पिलाना चाहिये।
- **धूप स्नान :** शिशु के मुख को धूप से बचाते हुए सूर्य के प्रकाश में लिटाना अति लाभकारी होता है।
- गंभीर कामला में खून की भी आवश्यकता पड़ सकती है।

आयुर्वेदिक औषधियां

- बाल चातुभद्र चूर्ण २ ग्राम, आरोग्यवर्धिनी गोली, लौह भस्म एक रत्ती मिश्रित करके ३ मात्रा बनायें तथा सुबह दोपहर शाम मधु के साथ चटायें।
- लोहासव या पुनर्नवासव आधा–आधा चम्मच सुबह शाम समान मात्रा में जल के साथ पिलायें।

जरा सोचिए

- पहले युद्ध सेनाओं के बीच लड़े जाते थे परन्तु पिछले दशक में हुये युद्धों में सैनिकों से कई गुना अधिक बच्चे मारे गये और अपंग हुये।
- मानव का दीर्घकालीन विकास ऐसा विकास है जो न केवल आर्थिक प्रगति को बनाये रखता है बल्कि इसके लाभों का समान वितरण भी करता है। यह वातावरण को नष्ट करने के बजाय उसे ठीक करता है। यह लोगों को हाशिये पर डालने के बजाय उन्हें शक्ति देता है। यह गरीबों को प्राथमिकता देकर अवसरों और उनके चुनाव के क्षेत्र को बढ़ाता है, उन्हें प्रभावित करने वाले निर्णयों में उनकी सहभागिता प्राप्त करता है। यह विकास निर्धनों, प्रकृति, रोजगार, लोकतंत्र, महिलाओं और बच्चों के पक्ष में है।
- संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम मुक्त बाजार व्यवस्था की आर्थिक नीतियों के प्रति प्रतिबद्धता में गरीबों, सामाजिक रूप से पिछड़े लोगों और वातावरण पर पड़ने वाले कुप्रभावों को अनदेखा कर दिया गया है।**(विश्व में बच्चों की स्थिति, यूनीसेफ रिपोर्ट से साभार)**

बच्चों के सामान्य रोग

उमेश पाण्डे, इंदौर

आयुर्वेद में बालरोग चिकित्सा प्रकरण में बच्चों को पीड़ा देने वाली मातृकाओं – नंदा, सुनंदा, पूतना, मुखमुंडिका, कठपूतना, शकुनिका, शुकरेवती, अरुषका, सूतिका, निऋति, पिलिपिच्छिका और कालिका – का वर्णन मिलता है, जिनसे बच्चे को ज्वर हो आता है, उसे डकार और कै होने लगती है, उसकी मुट्ठियां भिंच जाती हैं, वह अकारण ही रोता है और उसका स्वर बदल जाता है। उसके शरीर से दुर्गंध भी आ सकती है। वह दूध और आहार भी नहीं लेता और हाथ–पैर पटकता है।

इन बाधाओं को दूर करने के लिए बच्चों को मुरामांसी, जटामांसी, बच, कुष्ठ, छैलछबीला, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, कचूर, चंपक पुष्प और मोथा के अधपके क्वाथ से स्नान कराना चाहिए। इससे उनकी सारी बाधाएं दूर होती हैं और उनकी आयु तथा देहकांति बढ़ती है।

अथवा माषपर्णी, मुंडी, और गंधबाला का क्वाथ कर आधा शेष रहने पर उससे बच्चे को नहलायें तथा उसके शरीर पर सप्तपर्ण के हरे पत्ते, हरिद्रा, कुष्ठ और लाल चंदन पानी से पीस कर लेप करें। यह प्रयोग भी समस्त ग्रहबाधा दूर कर देता है।

घरेलू उपाय

१– छोटी हर्र–नवजात शिशु को कभी–कभी नाभि गिरने के बाद पक जाती है। उसमें छोटी हर्र को पानी में गाढ़ा–गाढ़ा घिस कर नाभि पर दिन में दो बार व रात में सोते समय लगा दीजिये। आपको एक दिन में ही फरक जान पड़ेगा। यदि कब्ज की शिकायत हो तो एक छोटी हर्र को सूखा पीस कर गुन–गुने पानी के साथ लें, बच्चों के लिये आधी हर्र दें।

२– नीम की छाल और लौंग– गर्मियों और बरसात में अक्सर फुन्सियाँ निकल आती हैं। लौंग व नीम की छाल को पानी में गाढ़ा घिस कर फुन्सियों पर दिन में तीन बार लगायें एक दिन में आराम आ जायेगा।

३– हींग–अक्सर बच्चों को पेट में दर्द हो जाता है इसके लिये हींग को पीसकर थोड़े से पानी में मिला कर आग पर गाढ़ा पका लें फिर बच्चों के पेट पर नाभि के आस–पास गाढ़े घोल को लगा दें इससे आधे घन्टे के अन्दर ही बच्चे को आराम आ जायेगा।

४– त्रिफला–हर्र, बहेड़ा, आंवला तीनों को समान मात्रा में कूटकर एक साथ साफ डिब्बे में भर लें रोज रात में आधा कप पानी में एक चाय के चम्मच भर भिगो दें सुबह छान कर पानी से आंख धोयें इससे न केवल आखें साफ व चमकती दिखाई देंगी बल्कि उनकी रोशनी भी बढ़ेगी।

५– हल्दी व चीनी–यदि आपको जुकाम के कारण सर में दर्द है और आपको अचानक बाहर जाना पड़े तो जाने के पन्द्रह मिनट पहले लकड़ी का कोयला या उपले के टुकड़े सुलगाकर उस पर पिसी हल्दी, दो चाय के चम्मच और चीनी दो चाय के चम्मच मिला कर डाल दें। जब धुआं उठने लगे तो नाक से उस धुयें को लम्बी सांस लेकर सूंघें थोड़ी देर बाद आपको आराम आ जायेगा और आप बाहर जा सकते हैं।

६– सूखी धनियां– यदि ठन्ड लगने पर अचानक बुखार आ जाये तो सूखी धनियां एक चाय के चम्मच, तुलसी की पत्ती पांच, काली मिर्च मोटी पांच, अगर मिल सकें तो नीबू के दो पत्ते, अमरूद के दो पत्ते, दोनों को कूट लें, अदरक एक छोटा टुकड़ा भी कूट लें-इन सब को एक साथ मिला कर चाय बना लें। इसको पीने से मरीज को लाभ पहुंचेगा।

कोमल त्वचा की देखभाल

आपका शिशु आपकी निर्माणक्षमता का अद्भुत उपहार है और उसकी त्वचा का प्रथम स्पर्श आपके अन्तर्मन में असीम प्यार उत्पन्न कर देता है। शिशु की त्वचा बहुत संवेदनशील होती है और इसकी देखभाल आपको करनी है।

शिशु की त्वचा नर्म, मुलायम और कोमल होती है। त्वचा शरीर के लिये सुरक्षा ढ़ाल का काम करती है और रोग के कीटाणुओं से शरीर को सुरक्षित रखती है। शरीर के तापमान को नियंत्रित करना भी इसका कार्य है। त्वचा पसीने के रूप में बच्चे के शरीर से अनावश्यक पदार्थ बाहर निकाल देती है। इसके अतिरिक्त फेफड़े, गुर्दे और अंतड़ियों की सहायक के प में भी कार्य करती है।

शिशु की मालिश शिशु की त्वचा यदि पपड़ीदार, झुर्रीदार या सूखी है तो चिन्तित न हों। किसी बेबी ऑयल या सरसों के तेल से नियमित रूप से उसकी मालिश कीजिये। ऐसा करने से त्वचा सुकोमल हो जाती है। मालिश सदैव हल्के हाथों से करनी चाहिये। एक बात जो महत्वपूर्ण है वो यह कि मालिश के पश्चात शिशु को तुरन्त स्नान नहीं कराना चाहिये बल्कि जब त्वचा तेल को सोख ले तब स्नान कराना चाहिये।

शिशु का स्नान घर पर बच्चे के स्नान के लिये एक बेबी बाथ टब की आवश्यकता होती है। नहाने का पानी हल्का गर्म (कुनकुना) होना चाहिये। शिशु की त्वचा अत्यंत सूक्ष्म ग्राही होती है। अतः मुलायम साबुन (बेबी सोप) का प्रयोग ही उपयुक्त होता है। सिर की स्वच्छता के लिये मुलायम ब्रश भी इस्तेमाल किया जा सकता है। स्नान के पश्चात शरीर को भली प्रकार से पोंछिये। अधिकतर मातायें शिशु के लिये टेल्कम पाउडर का इस्तेमाल करना पसन्द करती हैं क्योंकि उसकी सुगन्ध अच्छी होती है लेकिन पाउडर कम मात्रा में लगाना चाहिये।

बच्चों में अतिसार

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे, लखनऊ

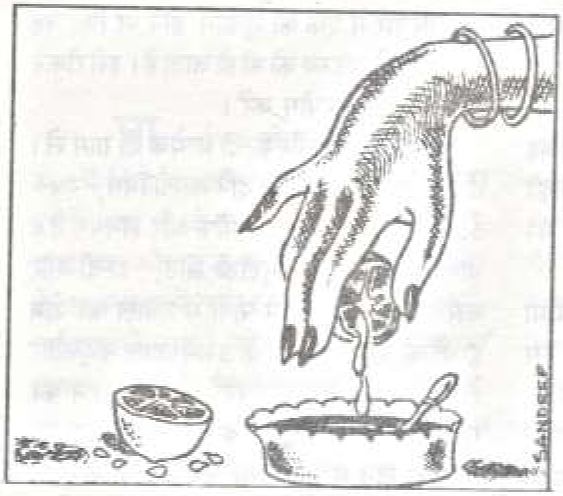

निर्जलीकरण की पारंपरिक चिकित्सा : चीनी, नमक और नींबू का घोल

'अतिसरणात् अतिसारः' या *'अत्यन्तसरणम् अतिसारः'* अर्थात् जिस रोग में अधोमार्ग से मल का अधिक सरण होता है, इसे अतिसार कहते हैं। व्यावहारिक भाषा में उसे जुलाब या दस्त कहते हैं।

स्वभावतः भारी, जिनके पचने में देर लगे, ऐसे पदार्थ, अतिस्निग्ध, अतिरूक्ष, अतिउष्ण, स्थूल, अतिशीतल पदार्थो का भक्षण, विरुद्धाहार, आहार का बिना पचन हुए पुनः खाना, बिना पकाया हुआ अन्न खाना, ऋतु के विपरीत या असमय में आहार लेना, शक्ति से अधिक आहार, स्नेहन-वमन-विरेचन-अनुवासन-बस्ति आदि प्रक्रियाओं की अधिकता, विषबाधा, भय-शोक, दूषित पानी पीना, अतिमद्यपान, प्रकृतिविरुद्ध पदार्थों का सेवन, अतिकाल तक तैरना, मल और मूत्र के वेग का अवरोध और कृमि,इन कारणों से अतिसार होता है।

हृदय-नाभि-गुदा-पेट-पार्श्व में पीड़ा, पेट फूलना, अपचन, सभी अंगों में शिथिलता, अपान वायु का अवरोध, टट्टी न होना ये अतिसार के पूर्वरूप हैं। अतिसार सात प्रकार का है-

वातातिसार, पित्तातिसार, कफातिसार, दोषातिसार, शोकातिसार, आमातिसार और भयातिसार

उक्त प्रकारों के पुनः साम (आंवसहित) और निराम (आंवरहित) तथा सरक्त (खूनी) और रक्त रहित इस प्रकार दो-दो भेद और हैं।

ऊपर दिये गये कारणों में रस, जल, मूत्र, स्वेद, मेद, कफ, पित्त और रक्त ये द्रव धातु क्षुभित होकर जठराग्नि को मंद करते हैं और मलयुक्त होकर वात द्वारा प्रेरित अधोमार्ग से निकलते हैं।

शिशु मां का दूध ग्रहण करते हैं। अतः ऊपर दिये गये अधिकांश कारण उन पर लागू नहीं होते। शिशुओं में मुख्यतया अतिसार निम्न कारणों से होता हैः

१. **स्तन्य दोष** - शिशु का आहार मां का दूध होने के कारण यदि उस दूध में ऊपर दिये कारणों के आधार पर मां के अपथ्य से दोष उत्पन्न हो सकता है और निस्संदेह उसका प्रभाव शिशु पर पड़ता है।

२. **दांत निकलना** - शिशुओं को दांत निकलते समय भी प्रायः अतिसार की पीड़ा होती है।

३. **असात्म्य अन्न** - यदि शिशु को मां के दूध के साथ अन्न भी दिया जा रहा हो तो विरुद्धाहार, अतिभक्षण, अपचन आदि से अतिसार उत्पन्न होता है।

४. **कृमिजन्य** - यदि शिशु के पेट में कीड़े हों तो उससे भी अतिसार होता है।

यदि मां का दूध दूषित हो तो उन कारणों का ज्ञान आवश्यक हो जाता है जिनसे दूध में दोष उत्पन्न हुआ हो । सामान्यतया शिशुओं के उपचार के समय उसकी मां के स्वास्थ्य की ओर भी ध्यान देना आवश्यक है। मां से उपयुक्त पूछताछ से दूध के दोष का कारण पता लग जायगा। तब शिशु के साथ ही माता का उपचार किया जाना आवश्यक है ताकि दूध का दोष समाप्त होकर माता और बच्चा दोनों स्वस्थ हो सकें।

स्तनपान कराने वाली माता को अपने आहार पर पूर्ण नियंत्रण रखना चाहिए। अतिरूक्ष, अतिजड़, अतिशीतल, अतिउष्ण पदार्थों के सेवन से बचना चाहिए। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि भोजन उतना ही किया जाय जो आसानी से पच जाय। साथ ही माता को आरोग्यवर्द्धक और पुष्टिवर्द्धक आहार लेना चाहिए ताकि शिशु के शरीर की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति और शिशु का स्वास्थ्यरक्षण दूध से भलीभांति होता रहे।

कई माताएं स्तनपान न कराकर अपने बच्चों को बाहरी दूध, विशेषकर डिब्बे में आने वाले दूध पिलाती हैं। डिब्बाबन्द दूध के परीक्षण में पाया गया है कि उसमें सीसे की मात्रा निर्धारित सह्य मात्रा से अधिक होती है। सीसे की अधिक मात्रा के सेवन से भी बच्चों में अतिसार आदि रोग ही नहीं, दौरे, बेहोशी और मस्तिष्क विकार उत्पन्न हो सकते हैं। अतः स्तनपान कराना ही बच्चों के लिए सबसे सुरक्षित है।

स्तन्य दूध बच्चों के लिए प्राकृतिक आहार है। यह शारीरिक और मानसिक विकास की दृष्टि से आदर्श और पूर्ण आहार है। इसमें जीवनीय तत्व होते हैं, जो बच्चों को पुष्टि और वृद्धि में सहायक होते हैं। बच्चों को यदि माता के दूध के साथ अन्नांश भी दिया जा रहा हो तो वह सुपाच्य, पुष्टिवर्द्धक,शुद्ध और बच्चे की प्रकृति एवं पचन शक्ति के अनुकूल होना चाहिए।

अतिसार में बार-बार पतले दस्त होने के कारण शरीर से जल अधिक मात्रा में निकलता रहता है। जल का शरीर में निर्धारित मात्रा से कम होना प्राणघातक हो सकता है। इसे निर्जलीकरण कहते हैं। निर्जलीकरण की स्थिति में बच्चा चिड़चिड़ा हो जाता है। उसे प्यास बहुत लगती है। मूत्र की मात्रा कम होने लगती है और मूत्र होना बन्द भी हो सकता है। आंखें गहरी हो जाती हैं और ओंठ सूखने लगते है। ओठों पर बार-बार जीभ फेरने की प्रवृत्ति होती हैं। शरीर में कमजोरी आती है। नाड़ी की गति धीमी हो जाती है। हाथ और पैर ठंडे होने लगते हैं।

निर्जलीकरण की स्थिति में मां का दूध बार-बार पिलाते रहना श्रेयस्कर है। साथ ही जीवनजल (पानी को एक लीटर उबालने के बाद ठंडा करें और एक चम्मच चीनी और चुटकी भर नमक मिलायें) बीच-बीच में चम्मच से पिलाते रहना चाहिए। बच्चे की अवस्था को ध्यान में

बच्चों का जुकाम

वैद्य वी.बी. म्हैसकर, बड़ौदा

आयुर्वेद में जुकाम को प्रतिश्याय कहते हैं। बच्चों को यह रोग प्रायः जाड़ों में और वसंत ऋतु में होता है।

लक्षण नाक से पानी बहता है, छींकें आती हैं। नाक और गले में दर्द होता है। आँखों में भी पानी आता है। सांस ठीक से आती-जाती नहीं। कभी बायीं, कभी दायीं नाक बंद रहती है। बच्चा नाक अपनी मुट्ठियों से मलता है जिससे नाक लाल हो जाती है। उसे बहुत बेचैनी रहती है। ठीक से नींद नहीं आती। साँसे तेज हो जाती हैं। हल्का बुखार रहता है, भूख लगती नहीं, और बच्चे का मन कहीं लगता नहीं। उसे सूखी खाँसी भी परेशान करती है। नाड़ी तेज हो जाती है। सांस की आवाज सूखी और कर्कश हो वात दोष का संकेत कर सकती है। गीली आवाज यदि है तो उसे कफ दोष का प्रभाव समझें। उल्टी में कफ और पित्त उपस्थित रहता है। उल्टी करते ही बच्चे को आराम आ जाता है।

शुरू-शुरू में (पहले दो तीन दिनों में) अडूसे की पत्तियों की चाय फायदेमंद है। पाँच पत्तियां लेकर उन्हें कुचल लें या टुकड़े-टुकड़े कर पानी में उबाल कर कड़क चाय बनायें। ठंडा होने पर छान लें। इसमें दो चम्मच शक्कर मिलाकर दो-दो चम्मच दिन में चार बार पिलायें। यह कफ और पित्त दोषों में हितकारी है। वात की अधिकता में छने हुए उपरोक्त द्रव में मुलेठी का मोटा चूर्ण ३ ग्राम मिला लें।

नाक बंद होने पर तुलसी का स्वरस उपयोगी है। थोड़ी सी पत्तियां कुचल कर ५-७ बूंद रस निकाल कर एक चम्मच शहद के साथ सुबह-शाम दें। कफ की अधिकता में यह प्रयोग अत्यधिक प्रभावी होता है।

त्रिकटु चूर्ण अर्थात समभाग सोंठ, काली मिर्च और पिप्पली का चूर्ण बहुत उपयोगी है। चौथाई ग्राम चूर्ण शहद के साथ दिन में दो-तीन बार दिया जा सकता है। यह कफ के लिए अच्छा है। वात और पित्त के निवारण के लिए इसमें चौथाई ग्राम मुलेठी चूर्ण मिला लें।

प्रतिश्याय में हल्दी चूर्ण भी लाभकारी है। इसे गरम दूध के साथ रात में देने की भारत में परंपरा चली आ रही है। यह कफ निवारक है।

परिवार में एक को जुकाम होने पर फिर वह दूसरे तीसरे सदस्य को भी हो जाता है। इसे रोकने के लिए निम्न प्रयोग करें।

मुलेठी, सोंठ और हल्दी प्रत्येक दो ग्राम लें। तीन दाने लौंग और तीन दाने काली मिर्च, २५-३० तुलसी दल, ३ ग्राम सौंफ और लगभग डेढ़ ग्राम अजवायन लें। मुलेठी, सोंठ, हल्दी और काली मिर्च को दो कप पानी में उबाल कर शेष द्रव्यों को एक-एक करके उसमें डाल कर उतार लें और थोड़ी देर ढका रहने दें। इसे छान कर गुड़ मिला लें। परिवार के सभी सदस्य इस दवा को दिन में तीन-चार बार उम्र के अनुसार एक से तीन चम्मच तक लें।

गरम पानी पीना, हल्का खाना भात, खिचड़ी, मूंग की दाल गरम दूध लेना लाभकारी है।

ठंडा पानी, बरफ, शीतल पेय, खट्टा दही, मट्ठा, इमली आदि से बचें।

गरम कपड़े पहनें। कमरा गरम रखें। एकाध दिन नहाना टाल जायें। खुली हवा में न घूमें।

→ रखते हुए उसे काफी मात्रा में अन्य तरल पदार्थ जैसे शरबत, पतली लस्सी, चावल की मांड, नारियल पानी, छाछ, नींबूपानी आदि देते रहना चाहिए जिससे शरीर में जलांश बना रहे।

बच्चों के अतिसार में निम्नलिखित उपचार किये जा सकते हैं :

- कुटज बीज, जायफल और बेल का मगज दें।
- जामुन की छाल और सोंठ का काढ़ा दें।
- रुद्राक्ष दूध में घिसकर दें।
- शरीर में मां के दूध से हल्का मर्दन करें।
- माजूफल घिसकर दें।
- सोंठ और कालीमिर्च का काढ़ा दें।
- ईसबगोल की भूसी दें (आंव में विशेष लाभकारी)।
- सोंठ का पानी घिसकर समभाग गुड़ और घी मिलाकर चटायें (आंव के लिए)।
- सोंठ का कल्क घी डालकर पकायें। घी बचने पर उतार लें। उस घी का सेवन करें।
- अदरख के रस से नाभि पर हल्का मर्दन करें।
- आम की गुठली का मगज दही में पीसकर दें (आमातिसार)।
- आम के पत्तों का स्वरस २ भाग, शहद १ भाग, घी १/२ भाग और दूध १ भाग मिलाकर दें (रक्तातिसार)।
- गूलर का निर्यास ४-५ बूंद बताशे में रखकर दें।
- गूलर की जड़ का रस पिलायें।
- प्याज अच्छी तरह छीलें और बारीक कर दही के साथ खिलायें।
- खसखस (पोस्तादाना) दही में पीसकर खिलायें।
- घी में जायफल और सोंठ घिसकर दें।
- पुदीने का रस पिलायें।
- बेल का मगज दें।
- बेल की और आम की छाल का काढ़ा शहद और चीनी मिलाकर दें।
- मेथी के पत्तों का रस मिश्री डालकर दें।
- मेथी के बीज पीसकर दही में मिलाकर दें।
- हरें, सोंठ और गुड़ समभाग लेकर उसमें नीम का रस मिलाकर गोलियां बनायें और दें।

दांत निकलने के समय अतिसार

- सोंठ और जायफल घिसकर दूध के साथ दें।
- खड़ी हलदी चबाने के लिए दें।
- चंदन का टुकड़ा चबाने के लिए दें।
- नागर मोथे का काढ़ा दें।

कृमिजन्य अतिसार के लिए

- नीम के पत्ते हींग के साथ खिलायें।
- केसर और कपूर दूध में डालकर पिलायें।
- पुदीने का रस पिलायें।
- बेल के पत्तों का रस दें।
- वायविडंग का काढ़ा गुड़ डालकर दें या वायविडंग का चूर्ण शहद के साथ दें।
- गुरुच का काढ़ा दें।

ये कुछ घरेलू उपाय हैं जो बालकों के अतिसार में उपयोगी हैं। रोग की अवस्था को देखते हुए घरेलू उपचार प्रारंभ करें। यदि कोई लाभ न दिखाई दे तो तत्काल चिकित्सक का परामर्श लें क्योंकि उपेक्षा से अतिसार गंभीर रूप धारण करता है।

बच्चों के पेट में कीड़े

प्रायः उष्ण प्रदेश के निवासियों के उदर में कीड़े या कृमि पड़ जाते हैं. इसी कारण हमारे यहां भी जो लोग स्वास्थ्य के नियमों से, शुद्ध जल और शुद्ध पेय की महत्ता से अनभिज्ञ हैं, उनके उदर में कृमि अवश्य होते हैं। ये कृमि कई प्रकार के होते हैं, जो मनुष्य के मल में बराबर निकलते रहते हैं और उन्हें आसानी से देखा जा सकता है। कुछ कृमि ऐसे भी होते हैं जिन्हें देख पाना कठिन होता है।

आज मनुष्य सम्यक् आहार-विहार का यथावत् पालन न कर दूषित आहार एवं पेय आदि का सेवन करता है। बालक मिष्टान्न द्रव्यों को अधिक ग्रहण करना चाहता है। एक तो बाल्यावस्था में शरीर में स्वाभाविक ही श्लेष्मा की वृद्धि होती है, दूसरे दूषित जल, मिष्टान्न आदि का सेवन, जिससे वह जल्द ही विभिन्न व्याधियों से ग्रसित हो जाता है।

लक्षण

कृमि होने पर निम्नलिखित लक्षण प्रायः मिलते है-

ज्वरोविवर्णता शूलं हृद्रोगः सदनं भ्रमः।
भक्त द्वेषातिसारश्च संजातकृमिलक्षणम्।।

ज्वर या हरारत का होना, शरीर का पीला पड़ जाना, पेट में दर्द, दिल में धक्-धक् होना, चक्कर आना, खाना अच्छा न लगना तथा यदा-कदा दस्त होना आदि इसके लक्षण हैं।

आयुर्वेदीय ग्रंथों में कृमिरोग का विस्तृत वर्णन मिलता है। मानव शरीर में दो प्रकार के कृमि पाये जाते है-बाह्य एवं आभ्यन्तर। आभ्यन्तर कृमियों के पुरीषज, श्लेष्मज तथा रक्तज ये तीन भेद हैं, जिनमें पुरीषज व श्लेष्मज कृमि को आन्त्रगत कृमि के अन्तर्गत समावेश कर सकते हैं। बालकों में मुख्यतः आन्त्रगत कृमि पाया जाता है।

उदर कृमि कई प्रकार के होते हैं।

सूत्र कृमि- सूत जैसे छोटे-छोटे कीड़े दल बांधकर मलद्वार के पास निवास करते हैं। ये कभी-कभी मूत्र नली या योनि के पास भी पहुंच जाते हैं जिससे खुजली तथा जलन होती है। ये छोटे-छोटे कीड़े (चुन्ने) बच्चों को अधिक होते हैं एवं बच्चों को तकलीफ भी बहुत देते हैं। गुड़ या चीनी अधिक खाना इस रोग का मुख्य कारण है। नींद में सोते-सोते दांत चबाना, नाक के अग्रभाग को और गुदा द्वार को बार-बार खुजलाना, सांस के साथ दुर्गंध आना, हाजमे की खराबी, कै, पतले दस्त, बुखार, शरीर में खून कम हो जाना आदि इसके प्रधान लक्षण हैं।

गण्डूपद कृमि- केंचुएं जैसा लम्बा और पतला कीड़ा छोटी आंत में रहता है।कभी-कभी पाक स्थली की राह से चढ़कर मुंह से निकल जाता है। पेट में दर्द, नींद में चौंकना, नाक और गुदा में खुजली, पेट फूलना, बेहोशी, भूख, अरुचि, कमजोरी, शरीर का जीर्ण होना, मुंह में पानी आना, कै आदि इसके लक्षण हैं। इस कीड़े की लम्बाई ४ से १२ इंच तक होती है।

स्फीत कृमिः फीते जैसा लम्बा कीड़ा उदर के भीतर होता है। इसकी लम्बाई ३१ से ६२ मि.मि. तक होती है। यह कभी-कभी मल के साथ गिर भी जाता है। यह आकार में चपटा, गांठदार और रंग में सफेद होता है। सूतकृमि नर (२.५ मि.मि.) मादा (८.१३ मि.मि.) लम्बे सूत जैसे होते हैं। स्फीत कृमि मांस खाने वालों को ही होते हैं।

अंकुश मुख कृमि- हुक वर्म एक अन्य कृमि है, जो छोटी आंत में चिपक जाता है व मनुष्य का रक्त पीता रहता है, जिसके कारण इस कृमि रोग से पीड़ित रोगी पीला पड़ जाता है, उसे रक्तक्षय भी हो जाता है। रक्त में लौह की कमी हो जाती है। मल के साथ इस के अण्डे बाहर आते हैं। उनमें इल्लियां निकल कर बालकों या मनुष्यों के पैरों के फटे भागों से शरीर में प्रवेश कर जाती हैं। वहां से वे ऊतकों से होकर छोटी आंत में पहुंच कर पूर्ण कृमि बन जाते हैं एवं चिपक कर खून पीते हैं। जिन क्षेत्रों में यह रोग हो, वहां नंगे पैर मलत्याग के लिए जाने से लोगों को बचना चाहिए, बराबर कब्जियत की शिकायत होना, मिठाई, गुड़ या अन्य मीठी चीज खाना, मंदाग्नि, कच्चे और सड़े फलों को खाना, दूषित मांस खाना आदि कारण होने से उपरोक्त कृमि पैदा होते हैं।

उदर कृमि की चिकित्सा

उदर कृमि के रोगी को मीठा दलिया खिलाकर सुबह मामूली जुलाब दे देना चाहिए, कृमि रोगी को पेट खूब साफ रखना चाहिए। नीचे लिखी दवाओं की खुराक पूरी उम्र एवं बच्चों के लिए अलग-अलग दी गई है। बच्चों को दवा का चौथा भाग ही देना चाहिए, यदि फायदा न हो तो दवा की खुराक को धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए।

औषध चिकित्सा में पलाशघनवटी, विडंग चूर्ण, कम्पिल्लक चूर्ण, कृमिकुठार रस, कृमिमुद्गर रस, चिंचा भल्लातक वटी, कृमिघ्न चूर्ण, छुहारादि चूर्ण, वचादि चूर्ण को रोगी व रोगानुसार देना चाहिए।

कृमिघ्न औषधियों को गुड़ के साथ खिलायें जिससे कृमि गुड़ के प्रति आकृष्ट होकर कोष्ठ में आ जायेंगे तथा गुड़ के साथ औषधियों के खाने से वे मर जायेंगे।

- सुबह उठते ही २५ ग्राम गुड़ खा कर १५ मिनट आराम करें। इससे पेट में सब कीड़े एक जगह जमा हो जाएंगे, फिर १ ग्राम खुरासानी अजवाइन ठंडे पानी के साथ खायें, इससे सब कीड़े गुदा द्वारा बाहर निकल जाएंगे व पेट के छोटे-छोटे कीड़े एकदम नष्ट हो जाएंगे।
- २५ से ३५ ग्राम तक गुड़ खा कर १५ मिनट विश्राम करें। बाद में कबीला या वायविडंग का चूर्ण गर्म जल के साथ खाएं। दोनों एक साथ मिलाकर भी खा सकते हैं। मात्रा ३ ग्राम से १० ग्राम तक हो। इससे पेट के कीड़े मर जाएंगे। कबीला और वायविडंग पेट के कीड़ों की परीक्षित दवा है।
- प्याज का रस पिलाने से बच्चों के उदर के कीड़े (चुन्ने) मर जाते हैं।
- पलाश (ढाक) बीज का चूर्ण कृमि रोग में बहुत लाभकारी है। मात्रा ३ से ६ ग्राम।

शेष पृष्ठ ४५ पर

बच्चे का पेट दर्द : कारण व उपचार

डा. रवीन्द्र प्रकाश, डा. किरन प्रकाश, कानपुर

शिशुओं और बच्चों में पेट दर्द की शिकायत होना आम बात है. जब बच्चों को पेट में दर्द होता है तो वे रोते हैं, चीखते हैं, क्योंकि वे बोल नहीं सकते ।

छोटे बच्चों के पेट में दर्द होने के मुख्य कारण कब्ज आंतों में सूजन, गैस के कारण पेट फूलना, आंतों का उलझ जाना, किसी प्रकार का संक्रामण रोग, गुर्दे या पेशाब की थैली में किसी प्रकार का विकार होना, पेशाब का रुक जाना, जलन होना, पेशाब की थैली में पथरी होना, लिवर में दर्द होना इत्यादि होते हैं।

कब्ज यानी पेट साफ न होना दूसरी बीमारियों का जन्म दे सकता है। जिनमें एक है पेट का दर्द, ऐसी स्थिति में इस बात का ध्यान देना चाहिए कि कहीं बच्चा अपने घुटनों को अपने पेट के पास तो नहीं ले जा रहा है या शरीर को आगे–पीछे तो नहीं कर रहा । अगर उसका पेट दबाने पर कड़ा है तो बच्चे को कब्ज अवश्य है और इस कारण से उसके पेट में दर्द हो रहा है। ऐसे समय में प्रायः घरेलू इलाज के तौर पर पेट को सेंक कर, हींग का पानी नाभि के चारों ओर लगा देने से या सरसों के तेल को गरम करके मालिश कर देने से बच्चे को आराम मिल जाता है।

बच्चे को जो दूध दिया जाता है उसमें पानी मिलाकर खूब उबाल कर देना चाहिए। बहुत लोग दूध में पानी मिलाते ही नहीं हैं । नवजात शिशु को सिर्फ मां का ही दूध देना चाहिए। शिशु के लिए इससे अच्छा और कोई आहार नहीं है। ५–६ माह की उम्र हो जाने पर बच्चे को मां के दूध के अलावा, उबली हुई सब्जी, अन्न आदि भी देना चाहिए। ऐसे समय में खान–पान का ध्यान न रखने पर कब्ज हो जाता है। कब्ज होने के साथ मल भी बहुत सख्त हो जाता है और सूख जाता है। टट्टी मुश्किल से होती है। गुदा से रक्त तक निकल आता है। ऐसी स्थिति में सबसे अच्छा उपाय है कि ग्लिसरिन की बत्ती बच्चे की गुदा के अन्दर सरका दें। इससे मल चिकना हो जाता है और आसानी से निकल जाता है और पेट में रुकी गैस भी निकल जाती है। इस प्रकार के कब्ज में होम्योपैथिक की एल्युमिना ३०, नक्स वोमिका ३० या ओपियम ३० दवा की चार–चार गोली तीन तीन घन्टे पर रोग के लक्षणानुसार बच्चे को देना चाहिए। निम्न दवाएं भी उपयोगी हैं।

नक्स वोमिका – कब्ज रहने, बार–बार पाखाने की चेष्टा या हाजत, किन्तु पाखाना खुलकर न होने, पेडू में दर्द रहने, बच्चे की आंत उतर जाने कभी सूखी कभी पतली दस्त होने पर दें।

ब्रायोनिया – कब्ज के कारण टट्टी बिल्कुल न होने पर दें।

लाइकोपोडियम – कब्ज, की इच्छा होती है परन्तु पेट में वायु और दर्द होने पर।

ओपियम – मल में छोटी–छोटी काले रंग की गांठें निकलने, आंत और खासकर मलद्वार के एकदम सुन्न रहने, ऊपरी पेट में वायु होने के कारण कष्ट अधिक होने और पेट में दर्द रहने पर दें।

एल्यूमिना – बोतल का दूध पीने वाले बच्चों को जबरदस्त कब्ज रहने, पाखाने के समय बहुत कांखने पर मल कड़ा और गांठ दार होने जिसमें आंव लिपटी हो, कभी–कभी गुदा से रक्त आने पर ऐल्युमिना दें।

दस्त – अपच होने से, खराब पानी पीने से या दूध से संक्रमण होने से बच्चे के पेट में दर्द के साथ–साथ दस्त भी होने लगता है। प्रायः दूध को ठीक से न उबालने से या दूध की बोतल को ठीक से साफ करने से उबले हुए दूध को बहुत देर बाद ठण्डा ही पिलाने आदि कारणों से इन्फेक्शन हो जाने की सम्भावना रहती है और इस प्रकार बच्चे को आन्त्रशोथ हो जाता है। जिसके कारण आंतो की क्रिया बढ़ जाती है और बच्चे को दस्त होने लगते हैं । कभी–कभी ५–५ या १०–१० मिनट या आधे घन्टे के अन्तराल से भी दस्त होने लगते हैं।

गेस्टेरोइण्टराइटिस इसे अमाशयान्त्र शोथ भी कहते है यह एक तीव्र रोग है। स्थिति की तीव्रता तब बनती है जब खाते ही उल्टी और दस्त शुरू हो जाए साथ–साथ पेट में दर्द भी होने लगे। ऐसी स्थिति में बच्चे को मूंग की दाल का पानी, उबाल कर ठण्डे किए गए स्वच्छ जल में नमक, शक्कर और नींबू का रस मिला कर तैयार किया गया " जीवन रक्षक घोल", चावल के मांड़ का पानी बराबर देते रहना चाहिए। रोग ग्रस्त बच्चे को लक्षणानुसार निम्न होम्योपैथिक औषधि दी जा सकती है ।

एलो साक्रोटइना – अनजान में ही पेशाब करते समय या वायु निकलने के साथ पाखाना हो जाने तलपेट और मलद्वार में हमेशा भारीपन बना रहने नाभि के चारों ओर दर्द रहने पाखाना होने के पहले और होते समय मरोड़ होने और पाखाना हो जाने के बाद दर्द बन्द होने की शिकायत में।

आर्सेनिक एलबम – बदबूदार पतली दस्तः शरीर में दाह, ठन्डा पानी पीने से पेट में दर्द बढ़ जाने। दस्त होने या पित्त मिश्रित वमन होने पर। बर्फ या आइसक्रीम से दस्त हुई हो तो यह दवा बहुत फायदा करती है।

क्रोटान टिग्लियम–दस्त पिचकारी की तरह गहरी पीली या हलकी पीली होने, पेट में दर्द होने और गरम पानी पीने से दर्द बन्द होने पर।

पोडोफाइलम – हरा या पीला कभी–कभी आंव के साथ मल, बहुत बदबूदार बिना किसी दर्द के और बहुत ज्यादा होने पर शरीर बिल्कुल सिकुड़ जाने, पेट के मरोड, पाखाने के पहले पेट बहुत जोर गड़गड़ाने पर।

वेरेट्रम एलबम – बच्चे को बहुत ज्यादा मात्रा में चावल के धोवन की तरह दस्त होने, तेज प्यास, मिचली और जरा हिलने–डोलने पर ही वमन सुस्ती और कमजोरी, माथे पर ठण्डा पसीना आने पर।

खसरा: एक राष्ट्रव्यापी बालव्याधि

वैद्य रमेश म. नानल, बंबई

भारत में २५% से भी अधिक बच्चे खसरे के शिकार होते हैं। देश में बालमृत्यु का यह एक प्रमुख कारण है। यह क्षय, खाँसी और दस्त इन तीनों रोगों की उग्रता को बढ़ा देता है। खसरा अपने आप में भले ही जानलेवा न हो, परंतु दस्त, खाँसी और क्षय की उग्रता को बढ़ाने की अपनी क्षमता के कारण इसे घातक माना गया है। आधुनिक चिकित्सा में इसकी कोई अचूक दवा नहीं है। खसरा प्रतिबंधक टीकों का प्रचार-प्रसार विशेषतः विकासशील, अविकसित देशों में ही बड़े पैमाने पर हो रहा है। इससे सचमुच कितना लाभ हो रहा है यह संदिग्ध है। खसरे का टीका लगवाने के बाद खसरा होने के उदाहरण समाज में बहुत हैं।

खसरा एक संक्रामक रोग है। वसंत, शरद आदि ऋतुओं और ऋतुओं के संधिकाल में यह अधिक होता है। प्रायः यह ८ से १० दिनों में परिपक्व होकर शांत हो जाता है। कभी-कभी बालक की अशक्तता, कुपोषण, गलत उपचार, प्रतिकूल ऋतु के प्रभाव से, अथवा रोग की प्रबलता से विविध उपद्रवों का निर्माण करता है। भारत में उपयुक्त सभी कारणों की प्रबलता के कारण यह एक "प्राथमिक राष्ट्रीय समस्या" बन गया है। इसे हिन्दी में खसरा, मराठी में "गोवर" और अंग्रेजी में "मीजल्स" कहते हैं। इसका आयुर्वेदीय नाम रोमांतिका है।

चरकसंहिता में रोमांतिका के लक्षण निम्नवत् बताये गये हैं:

क्षुद्रप्रमाणाः पिडकाः शरीरे। सर्वांगगा सज्वरदाहतृष्णाः।
कंडूयुताः सारूचिरप्रसेका रोमान्तिका- पित्तकफात् प्रदिष्टाः।।

कफ और पित्त विकार से बुखार, जलन, प्यास, खुजली, अरुचि और लार बहने के साथ-साथ सारे शरीर में राई से भी छोटी फुंसियों के प्रादुर्भाव को रोमान्तिका कहते हैं।

रोग के कारण

यह एक छूत का रोग है जो हवा, पानी, स्थान और काल (मौसम) के विकृत होने से उत्पन्न होता है और तीव्र गति से फैलता है। पित्त एवं कफ को अत्यधिक बिगाड़ देने वाले खट्टे, अति नमकीन, क्षारयुक्त आहार एवं जल का नित्य सेवन करने वालों को यह रोग उग्र रूप में और आसानी से हो जाता है। कुपोषण, बासी या दूषित अन्न व जल और शरीर की प्रतिरक्षा शक्ति की कमी भी खसरे की उत्पत्ति में सहायक होती है।

ज्वर के बाद उत्पन्न होने से यह संक्रामक होता है। इसीलिए आरंभकाल में यह अधिक संक्रामक रहता है। बाद में संक्रामकता कम हो जाती है।

पूर्वरूप

रोग की उत्पत्ति से पूर्व उत्पन्न होने वाले लक्षणों को रोग का पूर्वरूप कहते हैं। खसरे की पूर्वसूचना देने वाले लक्षण निम्न हैं:-

- सर्दी, जुकाम, छींकें आना,
- नाक और आँखों से पानी बहते रहना,
- तेज बुखार,
- नाक एवं गले में जलन,
- तेज प्यास,
- जी मिचलाना, उबकाई,
- मुंह के अंदर श्लेष्मल झिल्ली पर सफेद दाग,
- सारे बदन में खुजली,
- धूप और रोशनी अच्छी न लगना,
- आँखों का लाल रहना।

रोग के लक्षण

शुरू-शुरू में एक-दो दिन मसूढ़ों पर लाल फुन्सियां उभर आती हैं। तीसरे-चौथे दिन सिर या कान के पास में और फिर गर्दन, छाती, पीठ, हाथ, पैर इस क्रम से सर्वांग में प्रकट हो जाती है। ज्वर पहले हल्का रहता है। फुन्सियों के निकलते समय ज्वर तेज रहता है। सात या आठ दिन बाद ज्वर नहीं रहता।

गंभीर लक्षण

निम्न लक्षणों के प्रकट होने पर रोग घातक रूप ले सकता है:

- तेज बुखार होने पर बेहोशी,
- बार-बार पतले दस्त होना,
- नाक से, थूक से या मलद्वार से खून आना,
- अत्यधिक खांसी के कारण सांस लेने में कष्ट होना,
- दौरे आना,
- फुन्सियों के स्थान पर घाव होना।

उक्त लक्षणों के होने पर विशेषज्ञ की सलाह लेनी चाहिए।

सावधानियां

रोगी को दूसरों के संपर्क से बचायें। फुन्सियों के मिटने तक रोगी को स्नान न करने दें। रोगी के पहनने ओढ़ने व बिछाने के कपड़ों को नित्य बदलें। उन्हें नीम या करंज के पानी से धोकर इनके सूखे पत्तों का धूप दें। रोगी को ठंडी हवा, ठंडे पानी और तेज हवा से बचायें। खुजली अधिक होने पर बहेड़े या रीठे के काढ़े से हल्की मालिश करें। खुजली में घी, नारियल का तेल या करंज का तेल भी लाभ करता है।

बेर की गुठली, जामुन की गुठली पीस कर लेप करने से जलन शांत होती है। फुन्सियां अच्छी तरह से निकल कर पक जायें इस उद्देश्य से गर्म पेय देने चाहिए। ८-१० दिन बाद

गुनगुने पानी से स्नान करायें। आँखों पर तेज रोशनी या कड़ी धूप न पड़े इसका ध्यान रहे। जीभ को हमेशा साफ रखें। नीम या बबूल से दातून करें। प्यास अधिक होने पर धनिये की चाय, मुनक्के का घोल, चंदन या खस का पानी, शक्कर का शर्बत थोड़ा-थोड़ा पिलाया जा सकता है।

शरीर में जलन अधिक होने पर केले के डंठल का रस, औदुंबर, जल (गूलर की जड़ का पानी जो पंसारी के यहां मिलता है), गुलाब जल, कच्चे नारियल का पानी आदि का सेवन लाभकर है।

फुन्सियों को उभारने के लिए तुलसी या सहिजन की पत्तियों का रस प्रतिदिन प्रातःकाल दो-तीन दिन तक देना चाहिए। तेज बुखार की स्थिति में इस प्रयोग को न करें।

आहार के लिए परवल, लौकी, पत्ता गोभी, मूंग की पतली दाल, गूंग की पतली खिचड़ी या भात दें। चौलाई, बैंगन, पालक, करेला, तीन चार दिन बाद दिया जाय। अनार, मुनक्का, मीठी मुसंबी, गंडेरी, सेब, अंगूर का सेवन करायें।

यह रोग पित्त एवं कफ से होता है। इसलिए विरेचन कराने से लाभ होता है। इसके लिए त्रिफला चूर्ण, कंपिल्लक चूर्ण, ताजा गोमूत्र या भरपेट दूध पिलायें। ३० मि.ली. नारियल का तेल या घी की पिचकारी गुदाद्वार से देने से भी लाभ होता है। एक-एक चम्मच पटोल, अनंतमूल, नागरमोथा और कुटकी का चूर्ण लेकर पाव भर पानी में काढ़ा बनायें। छानकर सुबह-शाम ७ दिनो तक पिलायें। यदि दस्त होने लगे तो कुटकी की मात्रा आधी कर दें।

पेठे का स्वरस ६ चम्मच प्रतिदिन सवेरे एक चम्मच शहद के साथ पिलाने से जलन, प्यास और कब्ज में लाभ होता है।

मूंग की दाल को अनारदाने और थोड़ी मात्रा में त्रिफला चूर्ण मिलाकर पकावें और गरम भात में घी डालकर दाल के साथ खिलायें।

रोकथाम

रोग का प्रसार शुरू होने से पहले निम्न उपाय करने चाहिएः-

छूत से बचें। पानी उबाल कर पियें। पके बैंगन के बीजों का काढ़ा बनाकर खाली पेट पियें। सुबह-शाम परिपाठादि क्वाथ या अरिष्ट ३० मि.ली. की मात्रा में लें। पीने के पानी में तुलसी या नीम की पत्तियां डालकर रखें। पत्तियां रोज बदलें।

तेज बुखार रहने पर

- तुलसी की १०० पत्तियां और २ बड़े चम्मच अजवायन को एक बाल्टी में उबालें। उसमें घुटनों तक पैर डुबाकर कंबल ओढ़ कर बैठना चाहिये। इससे पसीना छूट कर बुखार उतरता है।
- माथा अधिक गरम हो तो ठंडे पानी की पट्टी रखें।
- पेट यदि बहुत गरम हो और टट्टी-पेशाब बंद हो जाये तो नाभि एवं उसके आसपास ठंडी पट्टी, काली मिट्टी या चंदन का लेप करें। नाभि में घी, नारियल का तेल या चंदन का तेल लगायें।

पाठकों के अनुभव

हमें जीवनीय के पाठकों के सुझाव व अलोचना के पत्र समय समय पर मिलते रहते हैं। कुछ पत्रों को हम अपने स्थायी स्तम्भ 'पाठकों के पत्र' में प्रकाशित कर देते हैं। लेकिन कुछ पत्र कभी-कभी बहुत अच्छी जानकारी और अनुभव संजोये रहते हैं। इस प्रकार का एक पत्र व पाठक के सुझाव हम इस पत्रिका में प्रकाशित कर रहे हैं। डा. कमल प्रकाश को जीवनीय का यह अंक उपहार में भेजा जा रहा है।

'औषधि तथा शल्य चिकित्सा का इतिहास उतना ही पुराना है जितना मानव का, किन्तु इस विषय में हमारी पूरी जानकारी न होने के कारण हम लाभ से वंचित ही रह जाते हैं। प्राचीन काल में हमेशा लहसुन, तुलसी, बेल, अश्वगंधा, शंखपुष्पी, दूर्वा, हरड़, सुदर्शन, अदरक, हल्दी, कालीमिर्च, गिलोय इत्यादि हमेशा प्रयोग में लाए जाते रहे हैं। इसके अलावा लोकोक्ति में महाकवि घाघ ने सैकड़ों वनौषधि के प्रयोग बताए हैं। जैसे गर्मी में शंखपुष्पी का शर्बत लू शान्त करता है। दूब का शर्बत पेट के रोग का शमन करता है। हरड़ से किसी भी औषधि की गुणवत्ता बढ़ती है। गिलोय सत्व लेने से बुखार में आराम होता है। हल्दी के उबटन से चर्म रोग शान्त होते हैं। तुलसी व नींबू का रस मिलाकर लगाने से सिफलिस जैसे रोग का उपचार होता है। अदरक व पान का रस लेने से खांसी में आराम होता है।

बरगद, पीपल और नीम तीनों ही दांतों, मसूड़ों के विकार दूर करते हैं और तीनों शीतल, कषाय, सूजन मिटाने वाले तथा स्थिरता लाने वाले हैं। इसी प्रकार हरड़ प्रत्येक मनुष्य के लिए मां के समान हितकारी है। हरड़ दस्त कारक है तथा अग्नि को प्रदीप्त करता है।

खसरा: रोकथाम व होम्योपैथिक इलाज

डा. पी. अली, केरल

खसरे को प्रायः बचपन की बीमारी माना जाता है, यद्यपि यह किसी भी उम्र में हो सकता हैं। यदि इसमें कोई जटिलता न हो तो यह बीमारी साधारण रहती है, किंतु जटिलता के होने पर घातक सिद्ध हो सकती है। इसीलिए इसे लोग छोटी प्लेग भी कहते हैं। खसरे की उत्पत्ति विषाणु से होती है, जिसमें बुखार आता है। यह छूत की बीमारी है। इसमें सारे शरीर पर फुन्सियां निकल आती हैं। श्वसन मार्गों की श्लेष्मल झिल्ली क्षुब्ध हो जाती है और जुकाम हो आता है।

प्रसार की विधि

संक्रमित व्यक्तियों के नाक की रेंट और गले के स्राव व्याधि के स्रोत होते हैं। संक्रमित व्यक्तियों की खांसी या छींक से निकली फुहार के फैलाव से अथवा उनकी नाक या मुंह से निकली फुहार से प्रदूषित वस्तुओं के सेवन से यह रोग फैलता है। यह रोग एक से दो सप्ताह तक प्रायः दस दिनों का होता है।

संक्रामकता काल

खांसी की अवस्था में यह अत्यधिक संक्रमणशील होता हैं। यह स्थिति प्रायः ५ से ९ दिनों तक, फुन्सियों के निकलने से ४ दिन पहले से निकलने के ५ दिन बाद तक रहती है।

खसरे के दो प्रकार हैं, साधारण या दुर्दम।

लक्षण

यह सर्दी, पेशियों के दर्द और सिर दर्द के साथ शुरू होता है। नाक बहती है, छींकें आती हैं, आंखें लाल होती हैं और आंखों को धूप अच्छी नहीं लगती। ज्वर हो आता है। इसे प्रतिश्याय काल कहते हैं जो तीन से पांच दिनों तक रहता है। दूसरी अवस्था 'उदभेदन काल' है जिसमें छोटे-छोटे मसूर के आकार की फुन्सियां, पहले माथे पर, फिर चेहरे पर और फिर नीचे सारे शरीर पर उभर आती हैं। यह अवस्था दो दिनों में पूरी हो जाती है। इन फुन्सियों का रंग लाल या नीला-लाल होता है। इनमें प्रायः खुजली भी रहती है। हल्की खांसी और दस्त भी हो सकती है। फुन्सियां निकलने के तीसरे या चौथे दिन से बुखार, खांसी और जुकाम धीरे-धीरे गायब होने लगते हैं। छठे दिन से पपड़ियों का गिरना शुरू होता है।

दुर्दम खसरा

यह बिरले ही होता है। पर जब होता है तो टायफाइड, फुफ्फुसी उपद्रव और रक्तस्राव के लक्षणों के साथ होता है। श्लेष्मा तथा सीरमी कलाओं के नीचे रक्तसंचय हो सकता है। शरीर के विभिन्न छिद्रों से रक्तस्राव हो सकता है।

स्वरयंत्रशोथ, श्वसनी शोथ, न्युमोनिया, कर्णशोथ और कुक्कुर खांसी हो सकती है। यदि फुन्सियों की समाप्ति के बाद बहुत समय तक अतिसार बना रहता है तो हमें न केवल जलशोफ की बल्कि आंत्रयोजनी में गुलिकाओं के बनने, प्रलेपक ज्वर और क्षय की भी आशंका करनी चाहिए। यदि खांसी और बुखार बना रहता है और सांस बहुत तेज चलती है जिससे गाल लाल हो जाते हैं तो हम न्युमोनिया का पूर्वानुमान कर सकते हैं। यदि तेज सांस के साथ ज्वर का पुनरागमन होता है और कमजोरी और मवाद के साथ खांसी आती है तो हमें फेफड़े की व्याधि का पूर्वाभास हो जाना चाहिए।

निदान

निदान करते समय महामारी के प्रसार, आंखों के विशिष्ट लक्षणों, ज्वर की निरंतरता और पेशी दर्द का विचार करना चाहिए। चिकित्सक को विचार कर लेना चाहिए कि चकत्ते या फुन्सियां औषध सेवन से उत्पन्न तो नहीं हैं। पेनिसिलीन, ऐंपिसिलीन आदि भी खसरे जैसी फुन्सियां उगा सकती हैं। ऐसी दुविधा के उपस्थित होने पर मुखीय श्लेष्मा की जांच कर लेनी चाहिए। खसरे की प्रतिश्याय अवस्था में, चर्वणक दांतों के ठीक सामने छोटे-छोटे नीले-सफेद धब्बे, जिनके चारों ओर लाल घेरा होगा देखे जा सकते हैं इन्हें 'कोप्लिक के धब्बे' कहते हैं।

उपचार

बिस्तर पर आराम करना और फुन्सियां उभारने के लिए ताप का सेवन कराना चाहिए। जब तक पपड़ियां सारी की सारी गिर न जायें तब तक शरीर को ठंड से बचाने का हर संभव प्रयत्न करना चाहिए।

होमियोपैथिक चिकित्सा

होमियोपैथी में खसरा रोकने के और खसरे के इलाज की प्रभावशाली दवाएं अनेक हैं। यह एक तथ्य है कि होमियो पैथी के आविष्कार से खसरे की महामारी की गंभीरता पहले का दसवाँ हिस्सा रह गयी है।

ऐकोनिटम नेपेलस : बच्चों में आलस्य, तीव्र नाड़ी गति, आँखों में लाली, पुतलियों में फैलाव, चेहरा लाल और दौरे की प्रवृत्ति रहने पर दें।

ब्रायोनिया : दर्द के साथ सूखी खांसी, प्यास और कब्ज़ के साथ फुन्सियों के धीरे-धीरे उभरने पर दें। यह औषधि फुन्सियों को उभारने और श्वसन अंगों को सुरक्षित रखने में बहुत कारगर है।

रस टोक्सिकोडेन्ड्रान : खसरे में खुजली, पेशी दर्द और बेचैनी की अवस्था में अक्सर इसे देते हैं। सीने की हड्डी के नीचे गुदगुदाने से खांसी का दौर शुरू होना इस दवा को देने के लिए सबसे उपयुक्त लक्षण है।

पल्सेटिला, आर्सेनिकम, मरक्यूरियस, सल्फर, फासफोरस, जेल्सेमियम और वेराट्रम प्रायः दी जाने वाली औषधियां हैं। क्रोटालस, लैक्सिस, आर्सेनिकम या फासफोरस दुर्दम खसरे में लक्षणानुसार दी जानी चाहिए। कैंफर उन खतरनाक रोगियों के लिए मुफीद है जिनके चेहरे का रंग उड़ा होता है और शरीर की चमड़ी नीली-लाल पड़ जाती है और प्रमस्तिष्कीय उपद्रव भी होते हैं।

रोकथाम

सफाई इसकी रोकथाम में सबसे महत्वपूर्ण बिन्दु है। संपूर्ण रोग काल में मोरबिल्लिनम दी जानी चाहिए। पल्सेटिला भी दी जा सकती है।

आहार

बच्चे को संपूर्ण रोग काल में बहुत ही हल्का तरल आहार देना चाहिए। समुचित औषध एवं पथ्य देने पर बच्चा १० दिनों में रोग मुक्त हो जाता है।

भैंगेपन से बचाव

भैंगेपन में दोनों आंखें अलग-अलग दिशाओं में देखती सी लगती हैं। किसी की दोनों आंखों की पुतलियां नाक की तरफ घूमी होती हैं तो किसी की बाहर की ओर। इससे चेहरा भी थोड़ा अजीब सा लगता है। भैंगापन प्रायः रेटिना से दिमाग तक संदेश ले जाने वाली तंत्रिकाओं की वजह से होता है या आंखों के परस्पर तालमेल को प्रभावित करने वाली तंत्रिकाओं की गड़बड़ी की वजह से होता है। कभी-कभी आंख की मांसपेशियों में गड़बड़ी भी इसका कारण हो सकती है।

देखने की प्रक्रिया के दौरान किसी भी चीज से आने वाला प्रकाश आंख के लेंस पर पड़कर इस तरह मुड़ता है कि आंख के पर्दे (रेटिना) पर एक स्पष्ट छवि बनती है। स्पष्ट छवि के लिए एक जरूरी बात यह है कि किसी भी एक बिन्दु से आने वाली प्रकाश की सारी किरणें रेटिना के एक ही बिन्दु पर पहुंचें।

जब रेटिना पर यह छवि बन जाती है, तो रेटिना के पीछे उपस्थित तंत्रिकाएं यह संदेश दिमाग तक पहुंचाती हैं। दोनों आंखों में वस्तु की अलग-अलग छवि बनती है। दिमाग में इन दोनों छवियों को एक दूसरे पर आरोपित करके एक छवि बनाई जाती है। हमें वस्तु की गहराई व दूरी का अहसास होता है।

भैंगेपन में दोनों आंखें एक ही चीज पर केंद्रित नहीं होतीं। तब यदि दिमाग में इन छवियों को एक-दूसरे पर आरोपित किया जाता है तो एक धुंधली सी छवि बनती है। तब दिमाग में एक अजीब सी कार्यवाही अपने आप होती है। दिमाग इन दो छवियों में से एक पर गौर करना बंद कर देता है। याने वास्तव में एक ही आंख से बनने वाली छवि का इस्तेमाल होता है। दूसरे शब्दों में व्यावहारिक तौर पर एक आंख निष्क्रिय हो जाती है। ऐसी स्थिति में, जब एक ही आंख से छवि बने, तब गहराई या दूरी का अहसास नहीं हो पाता।

तीन माह की उम्र तक बच्चे में किसी वस्तु पर फोकस करके स्पष्ट छवि बनाने की क्षमता नहीं होती। तब बच्चे की आंखें सिर्फ प्रकाश व गति का अहसास कर पाती हैं। तीन माह के बाद ही धीरे-धीरे छवियों में पैनापन आने लगता है। इस स्थिति में यदि एक आंख कमजोर हो या किसी कारणवश लेंस में धुंधलापन हो तो वह इधर-उधर भटकने लगती है। यह स्थिति भैंगेपन में परिवर्तित हो सकती है।

छः माह की उम्र तक बच्चे में यह सामर्थ्य आ जानी चाहिए कि वह दूर की चीजों पर लगातार और पास की चीजों पर थोड़ी देर के लिए आंखें टिका सके।

भैंगापन उसे कहते हैं जब दोनों आंखों में परस्पर तालमेल नहीं हो पाता। एक आंख या कभी-कभी दोनों आंखें अंदर की ओर देखती हैं या बाहर की ओर घूम जाती हैं या ऊपर-नीचे देखती हैं। छोटी उम्र में इसका सफल इलाज ज्यादा आसानी से संभव हो पाता है। जल्द जांच हो जाने से अन्य कई व्याधियों से भी बचा जा सकता है।

भैंगेपन के लक्षण

बच्चों की आंख के विकास में स्कूल-पूर्व वर्षों का बहुत महत्व है। इन वर्षों में बच्चों की आंखों के परस्पर तालमेल और उनकी चपलता पर ध्यान देना जरूरी है। अन्य कुछ गौरतलब-बातें हैं- सिर का झुकाव, थके हुए बच्चे की आंखों का न टिक पाना, धूप पड़ने पर एक आंख बन्द करने की आदत, आंखें रगड़ना, अत्यधिक पलक झपकाना, देखते समय चीजों को आंख के बहुत पास रखना वगैरह। यदि आपके बच्चे में इनमें से कोई सा भी लक्षण हो तो उसकी आंखों की जांच तुरन्त करवाएं। छोटे बच्चों में दृष्टि संबंधी दिक्कतें होना मामूली बात है।

पांच-छः वर्ष की उम्र आते-आते बच्चों की दृष्टि एक औसत वयस्क के स्तर की होती है। यानी वे करीब २० फुट की दूरी से एक निश्चित आकार के अक्षर पढ़ पाते हैं। आंखों की कोई विकृति यदि ७ साल की उम्र तक बनी रहे, तो उसके स्थाई होने का खतरा बढ़ जाता है। भैंगेपन से नजर तो कमजोर होती ही है, साथ में व्यक्तित्व के विकास पर भी प्रतिकूल असर पड़ता है।

भैंगापन कई कारणों से हो सकता है, जैसे: जन्म के समय लगी चोट, विरासत, मांसपेशियों के जुड़ाव में गड़बड़, चश्मे की जरूरत, बुखार व अन्य बीमारी।

उपचार

भैंगेपन के उपचार का प्रमुख लक्ष्य यह होता है कि सामान्य दृष्टि बहाल हो जाए और दोनों आंखों का परस्पर तालमेल हो सके। परस्पर तालमेल नहीं होने से दूरी व गहराई का अहसास नहीं हो पाता। भैंगेपन के उपचार हेतु, चश्मे, पट्टी, आंख की ड्रॉप्स, शल्य चिकित्सा और आंखों के व्यायाम का प्रयोग नेत्र चिकित्सक की सलाह से करना चाहिए।

चश्मे की मदद से दूर दृष्टि या वक्र दृष्टि का उपचार किया जा सकता है। कई बार इतने से ही भैंगेपन का भी सुधार हो जाता है। ऐसा प्रायः एक वर्ष की उम्र के बाद जारी रहने वाली दिक्कतों में किया जाता है।

पट्टी लगाना छोटी उम्र में ज्यादा कारगर होता है। इसमें अच्छी वाली आंख को तब तक ढ़ककर रखा जाता है जब तक कि तिरछी आंख सीधी न हो जाय। छः माह के शिशु के मामले में यह अवधि मात्र १-२ सप्ताह की होती है। बड़े बच्चों में ज्यादा समय लगता है सात साल के बच्चे को तो एक साल तक पट्टी लगाना पड़ सकता है। स्वस्थ आंख को ढककर रखने पर दूसरी आंख पर दबाव पड़ता है कि वह सक्रिय हो। यदि साथ-साथ चश्मा भी जरूरी हो तो पट्टी के ऊपर ही लगाया जा सकता है।

दूसरी विधि में आंख के मरहम या ड्रॉप्स का इस्तेमाल किया जाता है। इस मरहम या ड्रॉप्स के द्वारा एक आंख की दृष्टि को अस्थाई रूप से धुंधला बना दिया जाता है। तब कमजोर वाली आंख सक्रिय होने को मजबूर हो जाती है।

यदि ये उपाय नाकाम रहें, तो शल्य क्रिया का सहारा भी लिया जाता है। इसमें आंख की मांसपेशियों को दुरुस्त करने का प्रयास होता है। यह आपरेशन काफी मामूली सा होता है। मांसपेशियों को इस ढंग से पुनर्व्यवस्थित किया जाता है कि आंख ठीक जगह पर स्थिर हो जाए। ऑपरेशन बड़ी उम्र में भी हो सकता है।

बच्चे को अंधत्व से बचाएं

मेरी आंखों का तारा, मेरा राजदुलारा, परंतु क्या आप अपने राजदुलारे की आंखों की रोशनी के लिए भी इतने ही जागरूक हैं? नहीं, तो अब संभल जाइए।

- विश्व में हर वर्ष करीब पांच लाख बच्चे अंधे हो जाते हैं और कुछ ही सप्ताह बाद इनमें से करीब तीन लाख बच्चे मर जाते हैं।
- विकासशील देशों में प्रत्येक एक हजार की आबादी के पीछे औसतन १२ व्यक्ति नेत्रहीन हैं।
- हमारे देश में अंधापन एक जटिल समस्या है, भारत में हर तेरह मिनट में छह वर्ष से कम उम्र का एक बच्चा नेत्रहीन हो जाता है तथा दूसरे की नेत्र ज्योति आंशिक रूप से चली जाती है, इनमें से ७० प्रतिशत बच्चे मर भी जाते हैं।

इस प्रकार भारत में अंधे व्यक्तियों की संख्या एक करोड़ से भी अधिक हो गई है, मुख्य रूप से इस का प्रभाव ग्रामीण क्षेत्रों, गंदी बस्तियों तथा निरक्षर लोगों में अधिक है।

शिशु की आंखों की बनावट में मा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, गर्भावस्था के दूसरे माह में इसकी रचना होती है, मां के स्वास्थ्य पर बच्चे का स्वास्थ्य निर्भर है, जब शिशु जन्म लेता है तो वह नौ माह का तो हो ही जाता है, अतः गर्भवती महिलाओं को पौष्टिक आहार लेना चाहिए जिसमें हरी पत्तेदार सब्जियां और फलों का समावेश हो, जहां तक संभव हो गर्भावस्था के प्रारंभिक काल में कोई दवा न लीजिए, जन्म के तत्काल बाद बच्चे को अपना दूध पिलाइए, मां के दूध में विटामिन 'ए' प्रचुर मात्रा में होता है जो बच्चों की नेत्रज्योति के लिए उपयुक्त है।

अंधत्व के कुछ कारण

आंखों की कुछ बीमारियां, जिनमें नजर का कमजोर होना शामिल है, उम्र के साथ- साथ आती है, लेकिन जरूरी है कि बच्चों को बचपन से सफाई की बातें सिखाई जाएं, ताकि वे कोई गंदी चीज अपनी आँखों तक न ले जाएं।

आंखें स्वस्थ रखने के लिए जरूरी है कि न तो अत्यधिक तेज रोशनी में पढ़े और न ही कम रोशनी में, क्योंकि दोनों अवस्था में बच्चों की आँखों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

अंधत्व से बचाने हेतु सावधानियां

गर्भवती महिलाओं को हर माह अपने स्वास्थ्य का परीक्षण कराते रहना चाहिए, सुजाक एक ऐसा रोग है जिसकी वजह से प्रसव के समय जन्म नली में स्थित जीवाणु शिशु की आंख में प्रविष्ट हो जाते हैं, परिणामस्वरूप नवजात शिशु की आंखें सूजी हुई और लाल रहती हैं।

उम्र के हिसाब से बच्चों के नेत्रों में देखने समझने की शक्ति का विकास होता है, आठ सप्ताह का हो जाने पर बच्चे द्वारा मां को पहचानना चाहिए, तीन माह का हो जाने पर बच्चा किसी वस्तु पर दृष्टि स्थिर करने योग्य तथा मां को देखकर मुस्कराना चाहिए, छः माह का हो जाने पर माता-पिता को देखना चाहिए कि शिशु की आँखे भैंगी तो नहीं है? नौ माह का हो जाने पर आपके द्वारा उसके निकट लाई गई वस्तुएं देखने के योग्य होना चाहिए।

पोषक आहार भी एक जरूरत है

विटामिन 'ए' की कमी का प्रभाव मुख्यतः आंखों पर पडता है, ६ से १६ वर्ष तक के बच्चे अधिक असुरक्षित रहते हैं, इनकी आंखों तथा जान की रक्षा करने के लिए जरूरी है कि रोजाना ३० ग्राम विटामिन 'ए' मिले, विटामिन 'ए' की कमी कुपोषण की वजह से होती है, जिसका सीधा प्रभाव आंखों पर पडता है, इससे रतौंधी, कार्निया तथा कंजक्टिव सूख जाता है और अंततः कॉनिया से रक्तस्राव शुरू हो जाता है, विटामिन 'ए' की कमी से वे सूखी आंख की बीमारी से ग्रसित हो जाते है, यह एक ऐसी बीमारी है जिसमें दिखाई देना बंद हो जाता है जैसा कि स्पष्ट है कि आंखों को विटामिन'ए' प्रचुर मात्रा में चाहिए, लेकिन बार-बार दस्त लगने या खसरा लगने से भी बच्चों में विटामिन 'ए' की मात्रा घट जाती है और इसका सीधा प्रभाव नेत्र ज्योति पर पड़ता है।

संक्रामक रोगों से सावधानी बरतें

बच्चों की आंखों की आम बीमारियों में लाल आंखें सर्वाधिक संक्रामक है, यह बीमारी एक हाथ से दूसरे हाथ में जाने वाली वस्तुओं से फैलती है जैसे रुमाल या तौलिया, यह रोग अकस्मात हो जाता है जिसमें आंखे लाल हो जाती हैं तथा पलकों में सूजन आ जाती है, आंखों से पीले रंग का चिपचिपा द्रव्य निकलता है तथा आंखें खोलने में कठिनाई का अनुभव होता है, इस बीमारी से बचने के लिए जरूरी है कि एक ही तीली या उंगली से सभी को काजल या सुरमा न लगाएं, रुमाल व तौलिए भी स्वच्छ व अलग-अलग होने चाहिए, साफ पानी से दिन में कई बार आंखें धोनी चाहिए।

बच्चे को यदि आंखों का कोई संक्रामक रोग हो जाए तो उसका तौलिया आदि अलग रखें तथा उसे अन्य बच्चों से अलग रखें तथा उसे अन्य बच्चों से अलग सुलाएं, संक्रामक नेत्र रोगों वाले बच्चे को स्कूल नहीं भेजना चाहिए, अन्यथा यह रोग दूसरे बच्चों को भी लग सकता है।

यदि बच्चों की आंखों की पलकों के किनारे में लाली और सूजन दिखाई दे, उसकी आँखों में बार- बार गुहेरी होने लगे, वह आँखों को लगातार या कभी-कभी सिकोड़ने लगे और उसकी आँखों में टेढ़ापन दिखाई दे तो समझ लीजिए कि उसे नेत्र संबंधी कोई रोग है ऐसी स्थिति में तत्काल नेत्र रोग विशेषज्ञ से संपर्क करना चाहिए।

बच्चों को उनकी आंखों के प्रति सचेत रहने की हिदायत देनी चाहिए, ऐसा कोई खेल बच्चों को न खेलने दें जिससे आँखों को नुकसान पहुंचने की संभावना हो, बच्चों को समझाएं कि आंखों में खुजली होने पर वे उन्हें हाथों से मसले नहीं, वरन् साफ पानी से धो लें, आंखें मसलने से कई परेशानियां बढ़ सकती हैं।

बाल पक्षाघात या पोलियो माइलाइटिस

बाल पक्षाघात या पोलियोमाइलाइटिस, जिसे संक्षेप में पोलियो कहते हैं, एक गंभीर राष्ट्रीय समस्या है। इसकी पूर्ण रोकथाम भी संदिग्ध है क्योंकि जिन बच्चों को पोलियो का टीका लग चुका था, उनमें से भी कई बच्चे पोलियो के शिकार हुए हैं। यह पांच वर्ष से नीचे के बच्चों में प्रायः हो जाता है।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के अनुसार पोलियो केंद्रीय स्नायु संस्थान की व्याधि है, जो एक विषाणु (वायरस) के संक्रमण (इन्फेक्शन) से होती है। इसमें सुषुम्ना और मस्तिक में शोथ होता है, जिससे लकवा हो जाता है।

लक्षणः बाल पक्षाघात से पीड़ित बालक का निचला अंग निष्क्रिय हो जाता है जिससे वह चलने-फिरने में असमर्थ हो लाचार हो जाता है। बच्चे के पैर दुर्बल, रूखे-सूखे तथा टेढ़े-मेढ़े हो सकते हैं। उसका विकास रुक जाता है। उसे आलस्य घेर लेता है। मस्तिष्क रोग से ग्रस्त होने के कारण उसका बौद्धिक विकास भी रुक जाता है। बालक स्वयं खड़ा भी नहीं हो पाता।

चिकित्सा : वात व्याधि होने के कारण बाल पक्षाघात की चिकित्सा अंदरूनी एवं बाहरी स्नेहन है। जैसे सूखी लकड़ी भी तेल लगाने से नरम होकर झुक जाती है उसी प्रकार बाल पक्षाघात से पीड़ित शुष्क धातुओं में स्नेहन से मृदुता उत्पन्न होती है। अंदरूनी स्नेहन से कोष्ठ में मृदुता आती है जिससे उसमें वात-व्याधियों का निवास ही असंभव हो जाता है।

बाह्य स्नेहन : स्नेहन का अर्थ तेल लगाना है। इसके लिए नारायण तेल, पंचगुण तेल, बला तेल, महामाष तेल या सैंधवादि तेल से रोगी की सुबह-शाम १५-१५ मिनट मालिश की जानी चाहिए। मालिश से वात का शमन होता है, पोषण प्राप्त होता है और दर्द भी कम होता है। इनके अतिरिक्त अश्वगंधा तेल, विष्णु तेल, सिद्धार्थक तेल, महाकुक्कुट मांस तेल भी मालिश के लिए प्रयोग किये जा सकते हैं।

स्वेदन : स्नेहन के बाद दशमूल क्वाथ से ५ मिनट तक प्रतिदिन स्वेदन कराना चाहिए। इसके लिए रोगी को सहने लायक दशमूल के गरम काढ़े में ५ से १५ मिनट तक कमर तक बैठाते हैं।

आभ्यंतर स्नेहन : इसके लिए रोगी को घी या तेल पिलाते हैं। अश्वगंधा घृत, छागलाद्य घृत, नकुलाद्य घृत, हंसाद्य घृत, दशमूलादि घृत, अथवा ऊपर लिखे तेल सुबह-शाम ५ ग्राम की मात्रा में २०० मि.ली. गुनगुने दूध के साथ पिलाते हैं।

आहार-विहार

रोगी को गरम पानी का ही प्रयोग करना चाहिए। शौच क्रिया, दांत साफ करने आदि नित्य कर्म में और पीने में भी। दंत मंजन के लिए त्रिफला ३ भाग, त्रिकुट ३ भाग, जायफल १ भाग, बबूल की छाल १ भाग, नमक १ भाग का महीन चूर्ण प्रयोग करें।

दंत मंजन के बाद सारे शरीर पर विशेष रूप से रोग स्थान पर हलके हाथ से नीचे से ऊपर हृदय की ओर तेल मालिश करें। मालिश के पंद्रह मिनट बाद आंख, हृदय, प्रजनन अंग आदि कोमल अंगों को छोड़कर सारे शरीर का सेंक करें। इसके बाद बदन पोंछकर निष्क्रिय व निर्बल अंगों में गति उत्पन्न करने के लिए हल्का व्यायाम करायें।

इसके १५ मिनट बाद वातशामक द्रव्यों के क्वाथ जैसे दशमूलादि क्वाथ, महारास्नादि क्वाथ आदि गरम जल में मिला कर शरीर की मालिश करते हुए रोगी को बंद कमरे में नहलायें। इसके बाद बदन पोंछकर ही रोगी को बाहर आने दें। स्नान के बाद रोगी को औषधि सेवन कराने के बाद दूध पिलायें। दूध के साथ उपयुक्त घी या तेल भी पिलायें। नाश्ते में बच्चे को ५० ग्राम बादाम पाक, अश्वगंधा पाक, शतावरी पाक दे सकते हैं या घी मिलाकर दलिया, खिचड़ी दे सकते हैं।

नाश्ते के चार घंटे बाद रोगी को खाना खिलायें जिसमें गेहूं की घी चुपड़ी रोटी, शालि या साठी चावल का भात घी-शक्कर के साथ, अरहर, कुलथी या मसूर की दाल, परवल, सहिजन, गोभी, आलू, घुइयां, सूरण, सेम, मटर, ग्वार फली, भिन्डी, करमकल्ला, लौकी, तोरई, कद्दू, ग्वारपाठा, पालक, मेथी, गाजर, मूली, शलजम आदि सब्जियां और अदरक, लहसुन, पुदीना, धनिया, हींग, जीरा आदि का सेवन करायें।

भोजन के तत्काल बाद २०० मि.ली. की मात्रा में द्राक्षासव, दशमूलारिष्ट, कुमार्यासव, अश्वगंधारिष्ट, सारस्वतारिष्ट, बलारिष्ट, लोहासव या पंचकोलासव में दुगुना पानी मिलाकर सेवन करायें।

इसके बाद रोगी को ३-४ घंटे विश्राम कराना चाहिए। इसके बाद रोगी को २०० ग्राम पपीता, चीकू, अनन्नास, सेब, नासपाती, संतरा, शहतूत, अंगूर, मुसंबी आदि फल खिलायें। फल पर चित्रकादि चूर्ण, अजमोदादि चूर्ण, दाडिमाष्टक चूर्ण या हिंग्वष्टक चूर्ण बुरक दिया जाय तो और भी लाभकारी होगा। कभी-कभी सत्तू भी खिलाया जा सकता है।

फलाहार के दो घंटे के बाद, दूध, चाय या काफी १०० मिली. पीने को दें। रात का भोजन दिन के भोजन जैसा ही हो।

सूखा रोग की सरल चिकित्सा

वैद्य ब्रज बिहारी मिश्र, लखनऊ

यक्ष्मा रोग से पीड़ित व्यक्ति जिस प्रकार रस रक्तादि समस्त धातुओं के सूखने से अत्यन्त क्षीण हो उपचार के अभाव में मृत्यु को प्राप्त होता है उसी प्रकार बालकों के सूखा रोग जिसे बाल शोष भी कहते हैं का यदि समय से सही उपचार न किया गया तो बालकों की मृत्यु का कारण बन जाता है।

आयुर्वेद के अनुसार जो बालक दिन में ज्यादा सोते हैं, शीतल जल या कफवर्धक पदार्थ या दुग्ध का अधिक सेवन करते हैं, उनमें श्लेष्मा की वृद्धि होने से रस अवरुद्ध हो जाते हैं जिसके परिणामस्व रूप ज्वर, अरुचि, प्रतिश्याय, कास आदि श्लैष्मिक विकृतियां उत्पन्न होने से बच्चा शुष्क होने लगता है। रस धातु का निर्माण सार रूप में नहीं होता, मल रूप कफ अधिक बनता है फलतः पोषणाभाव होता है। सम्पूर्ण देह दुर्बल हो जाती है, अस्थिपन्जर मात्र शेष रहता है तथा बालक के नेत्र, मुख जैसे अंग श्वेत व स्निग्ध हो जाते हैं। इस रोग से ग्रस्त बालकों के उदर तथा शिर बड़े हो जाते हैं।

आधुनिक चिकित्सक इस रोग की उत्पत्ति का कारण विटामिन डी एवं कैल्सियम की कमी तथा पाचन विकृति को मानते हैं। उनके अनुसार इस रोग के कारण बालक सूखता जाता है, अकारण रोता है, कमर पतली हो जाती है, पतले दस्त आते हैं, दोनों चूतड़ सूखते जाते हैं तथा चर्म में झुर्रियां पड़ जाती है। रोग की सरल पहचान बताते हुये आधुनिक चिकित्सक कहते हैं यदि बालक दिन प्रति दिन क्षीण होता जाय उसके शरीर का तापमान ९८.४ डिग्री से कम रहे तथा शरीर की त्वचा सूख कर अस्थिपन्जर मात्र शेष रहे तो समझ ले कि बालक को सूखा रोग हो गया है।

अनुभूत चिकित्सा

बालक के लिए स्वास्थ्य वर्धक आहार एवं स्वास्थ्यवर्धक वातावरण अति आवश्यक है। बालक को सुख आनंद में रखना चाहिए।

अण्डा चढ़ावें- एक कम्बल के टुकड़े पर ताजा मुर्गी का अण्डा फोड़ कर रख दें। पीड़ित बालक को नंगा करके अण्डे के ऊपर बिठावें। गुदा के छिद्र से अण्डा द्रव बड़े वेग से बालक के अन्दर खिंच जावेगा। जब तक बालक पूर्ण स्वस्थ न हो जावे तब तक प्रतिदिन प्रातः काल एक अण्डा उपर्युक्त विधि से चढ़ाते रहें। प्रायः एक मास में सूखा रोग अच्छा हो जाता है रोग के अच्छे होने पर बालक के गुदा मार्ग से अण्डा चढ़ना स्वयं बंद हो जाता है। अण्डे के द्रव का गुदा मार्ग से चढ़ना रोग का सूचक है। उसका न चढ़ना सूखा रोग से मुक्ति या रोग न होने का द्योतक है। अतः यह विधि रोग के उपचार के साथ साथ उसके परीक्षण की सरल विधि भी है।

कुमार कल्याण रस

यथा नाम तथा गुण ।यह बालकों के समस्त रोगों विशेषकर बालशोष अर्थात सूखा रोग में आधी गोली यह रस २ रत्ती गोदंती भस्म के साथ शहद से चटाने या माता के दूध के साथ देने से रोग को शीघ्र नष्ट कर क्षीण काय बालक को पूर्ण स्वस्थ एवं सबल बना देता है। तीन वर्ष से अधिक आयु के बालक को एक गोली की पूर्ण मात्रा दोनों समय देनी चाहिए। सोना, मोती, रससिद्ध आदि कीमती चीजों से तैयार इस रस का यदि कोई सेवन न करा सके तो वह प्रवाल भस्म १ ग्राम, मोती सीप भस्म २ ग्राम, शंखभस्म ३ ग्राम, कौड़ी भस्म ४ ग्राम, कछुवे की पीठ की भस्म ५ ग्राम, गोदंती भस्म ६ ग्राम तथा वंशलोचन १० ग्राम कूट पीस मिला कर एक शीशी में भर ले। इसे तीन वर्ष के नीचे की आयु के बालकों को २५० मि.ग्रा. की मात्रा में दिन भर में तीन बार शहद या दूध से दें। बड़ी उम्र के बालकों को ५०० मि.ग्रा. तीन बार शहद से दें। तथा अरविंदासव २ चम्मच चाय वाले समान जल मिला कर बालक को भोजनोपरांत पीने को दें। सूखा रोग से पीड़ित बालक को बला तैल, चंदनादि तेल, लाक्षादि तेल में से किसी एक तेल की मालिश करें। तेल की मालिश से बड़ा लाभ होता है।

पथ्यापथ्य

अपथ्य आहार विहार से माताओं का स्तन्य (दूध) दूषित हो जाता है। दूषित दूध पीने से बालक रोगी हो जाता है अतः दूषित स्तन्यपान की अपेक्षा बकरी या गाय का दूध बालक को देने से वह स्वस्थ रहता है। बालक का दिन में अधिक सोना एवं शीतल जल का सेवन भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। बालक को स्वच्छ वायु एवं सूर्य की धूप का सेवन कराना चाहिए तथा पौष्टिक बलवर्धक पदार्थ या दूध, अण्डा, मांस रस फलों का रस आदि पिलाने से सूखा रोग से बचा जा सकता है।

पृष्ठ ३७ का शेष

- पलाश बीज के घनसत्व की गोलियां गण्डू पद कृमि निकालने की अचूक दवा मानी गई है।

कृमि मुद्गर रस

शुद्ध पारद १, शुद्ध गंधक २, अजमोदा ३, विडंग ४, शुद्ध विष मुष्टि कुचला ५, पलाश बीज ६, भाग कूट कर कपड़े से छान लें १२१.५० मि.ग्रा.

पथ्यापथ्य

पथ्य-पुराना गेहूं, जौ, चावल, मूंग, अरहर, परवल, नीम की कोमल पत्ती, सरसों का तेल, अजवायन, मगरैल, लहसुन, हींग, मधु, तिक्त कटु रस प्रधान अन्न, गरम पानी आदि।

अपथ्य-दूध, गुड़ घृत मधुरान्न, पत्रशाक, ठंडा पानी, कांजी दिन में सोना आदि।

बच्चों में मानसिक विकलांगता

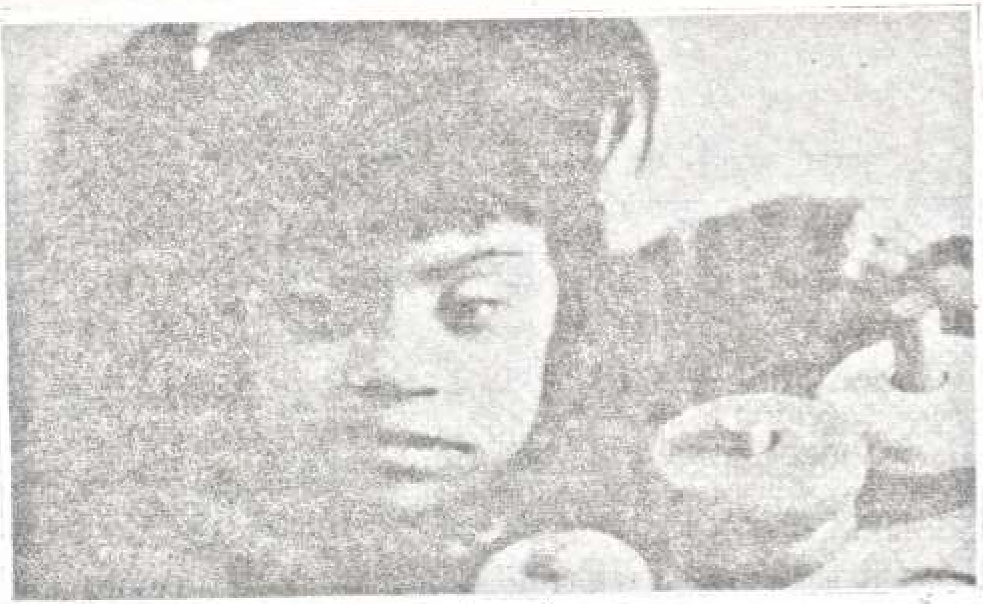

मानसिक विकलांग बच्चों का प्रशिक्षण

मानसिक विकलांगता एक ऐसी स्थिति है जिसमें मानसिक और शारीरिक वृद्धि रुक जाती है। ऐसे बच्चे को दूसरे बच्चों की तरह चलने खाने और बोलने में कठिनाई होती है। पांच वर्ष का मानसिक विकलांग बच्चा व्यवहार और अन्य क्रियाकलापों में तीन वर्ष या एक वर्ष या उससे भी छोटे बच्चे की तरह हो सकता है। मानसिक विकलांग बच्चे उचित प्रशिक्षण से बेहतर विकास कर सकते हैं। यह प्रशिक्षण जितना शीघ्र प्रारम्भ किया जाय उतना ही बेहतर होगा।

मानसिक विलांगता रोग नहीं है और यह पूरी तरह से ठीक नहीं हो सकती है। मानसिक रोग और मानसिक विकलांगता में अन्तर है। मानसिक रोग उचित चिकित्सा से ठीक हो जाते हैं। मानसिक विकलांगता के बारे में समाज में कुछ गलत भ्रांतियां फैली हैं जैसे बड़े होने या विवाह के बाद ये ठीक हो सकते हैं।

बच्चों में मानसिक विकास के निश्चित सोपान होते हैं। माता पिता को बच्चों के विकास को ध्यान से देखना चाहिये। नीचे एक चार्ट दिया जा रहा है यदि दूसरे कालम में दी जा रही आयु तक बच्चे का निश्चित विकास नहीं होता है तो माता पिता को तुरन्त डाक्टर से यह जानने के लिये सम्पर्क करना चाहिये कि बच्चा मानसिक विकलांग तो नहीं है।

यदि बच्चा मानसिक विकलांग हो तो उसे पुनर्वास विशेषज्ञ से बच्चे के प्रशिक्षण के बारे में जानकारी प्राप्त करनी चाहिये।

मानसिक विकलांगता से बचाव

बच्चों में मानसिक विकलांगता के कई ज्ञात और अज्ञात कारण हो सकते हैं। सबसे सामान्य कारण बच्चे के दिमाग में चोट लगना है यह जन्म से पहले, जन्म के समय अथवा जन्म के बाद हो सकता है।

जन्म से पहले बच्चे के दिमाग में चोट के कारण- गर्भावस्था में पौष्टिक भोजन नहीं लेना , वायरस संक्रमण विशेषतः जर्मन मीजिल्स या मधुमेह, मेनिनजाइटिस, क्षय अथवा यौन रोग , लकवे के साथ तेज बुखार , गर्भस्थ शिशु के लिये हानिकर किसी औषधि का सेवन , एक्स रे करवाना विशेषता गर्भ के प्रारम्भिक काल में, दुर्घटना अथवा मानसिक धक्का, अधिक शराब पीना बच्चे के दिमाग में क्षति होने का कारण हो सकता है। इसके अतिरिक्त माता पिता में वंशानुगत विकार , मां अथवा पिता के मानसिक विकलांग होने, मां की आयु बहुत कम अथवा अधिक होने और निकट रक्त संबंधियों में विवाह की स्थिति में भी बच्चे के मानसिक विकलांग होने की संभावना होती है।

मां को गर्भावस्था में ऐसे कोई काम नहीं करने चाहिये जिसमें दुर्घटना की संभावना हो जैसे भारी बोझ उठाना, फिसलन वाली जमीन पर चलना या संकरे स्टूल पर चढ़ना आदि।

विकास के सोपान	सामान्य	विलम्बित आयु सीमा
बच्चा माँ को पहचानता है	१ से तीन महीना	चौथा महीना
मुस्कराना	१ से ४ महीना	छठा महीना
करवट बदलना	४से ५ महीना	छठा महीना
बच्चे का पेट नीचे कर बल समतल पर लिटाने पर वह सिर स्थिर कर लेता है।	२से ६ महीना	छठा महीना
बिना किसी सहारे के बैठना	५ से १० महीना	बारहवां महीना
बिना किसी सहारे के खड़ा होना	९ से ४ महीना	अठारहवां महीना
ठीक से चलना	१० से२० महीना	बीसवां महीना
पा-पा, माँ-माँ बोलना	१० से १२ महीना	तीसरा वर्ष
दो तीन वाक्य बोलना	१६ से ३० महीना	चौथा वर्ष
स्वयं भोजन करना	२से ३वर्ष	चौथा वर्ष
नाम बताना	२से तीन वर्ष	चौथा वर्ष

यदि गर्भिणी ठीक से पौष्टिक भोजन न करे तो गर्भस्थ शिशु का विकास धीमा हो सकता है तथा स्वयं गर्भिणी के स्वास्थ्य पर भी प्रभाव पड़ता है। अतः उसे अधिक चावल, रोटी, मक्का, रागी, बाजरा, तेल और घी लेना चाहिये। विशेषतः उसे अधिक मात्रा में दाल और हरे पत्ते वाली सब्जियां अवश्य लेनी चाहिये।

कुछ औषधियां गर्भिणी और उसके गर्भस्थ शिशु के लिये हानिकारक होती हैं। बहुत सी महिलाओं को गर्भ के प्रारम्भिक कुछ महीनों में समस्यायें होती हैं जिसे मार्निंग सिकनेस कहते हैं। इसे दूर करने के लिये औषधियां लेना खतरनाक है। गर्भिणी को यथासंभव औषधियां नहीं लेनी चाहिये। उसे बिना डाक्टर की सलाह के कोई दवा अपने आप नहीं लेनी चाहिये। कुछ दवायें गर्भस्थ शिशु में मानसिक विकलांगता पैदा कर सकती हैं। मिर्गी तथा मानसिक रोगों की औषधियां हानिकारक होती हैं।सभी गर्भिणी महिलाओं को आयरन और फोलिक एसिड की गोलियां अवश्य लेनी चाहिये।

महिलायें १४ वर्ष से ५० वर्ष की आयु तक गर्भ धारण कर सकती है परन्तु १८ वर्ष से कम और ३५ वर्ष (विशेषतः ४० वर्ष) से अधिक आयु को महिलाओं को गर्भ धारण करने से बचना चाहिये। इस आयु में गर्भ धारण करने से मानसिक अथवा शारीरिक विकलांगता होने की संभावना होती है।

भारत के कुछ लोगों में निकट रक्त संबंधियों में विवाह का प्रचलन है। ऐसे विवाह से उत्पन्न बच्चे मानसिक या शारीरिक विकलांग हो सकते है।

जन्मजात मानसिक विकलांगता के कारण

बच्चे का जन्म किसी चिकित्सालय में अथवा किसी प्रशिक्षित स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता द्वारा कराया जाना चाहिये। जन्म के समय कठिनाई होने से मानसिक विकलांगता हो सकती है। यदि निम्न लक्षण हों तो बच्चे के जन्म में कठिनाई हो सकती है –

यदि गर्भिणी को २४ घंटे से अधिक दर्द हो और बच्चे का जन्म न हो ; गर्भ में बच्चे की असामान्य स्थिति ; बच्चे के सिर का बड़ा होना ; मां के शरीर से अधिक रक्तस्राव ; औजारों के गलत प्रयोग से गर्भस्थ बच्चे के सिर में चोट; समय से पहले जन्म ; बच्चे के सिर के अन्दर रक्तस्राव ; बच्चा रोए नहीं और उसका चेहरा और शरीर सफेद या नीला हो जाय ; बच्चे के गर्दन के चारों ओर गर्भ नाल का फंस जाना ; प्रसूति दर्द बढ़ाने के लिये औषधियों का प्रयोग अथवा बच्चे का रंग पहले दिन या छः दिन के बाद पीला होना।

उपरोक्त समस्यायें सामान्य हैं पर यदि प्रसव प्रशिक्षित दाई द्वारा नहीं कराया जा रहा हो तो ये गम्भीर रूप ले सकती हैं।

यदि बच्चा जन्म के समय रोये नहीं तो उसे सिर नीचे करके लिटायें और उसकी पीठ को साफ कपड़े से रगड़ें तथा उसके मुंह और नाक को साफ करें। यदि आवश्यकता हो तो कृत्रिम श्वसन करायें।

यदि बच्चे का जन्म गर्भावस्था के ३७वें सप्ताह से पहले हो तो उसके दिमाग के अविकसित होने के कारण तथा उसके कम भार, कम प्रतिरोध क्षमता और सांस लेने में दिक्कत के कारण मानसिक विकलांगता हो सकती है। ऐसे बच्चे के दिमाग में रक्तस्राव भी हो सकता है।

यदि किसी महिला को पहले मानसिक विकलांग या असामान्य या जुड़वें हुये हों अथवा समय से पहले प्रसूति दर्द हो अथवा उसे कोई पुरानी या गंभीर बीमारी हो या उसे पैरों में सूजन, रक्तस्राव, कम या अधिक आयु में गर्भावस्था, दुर्घटना, अथवा गर्भ में बच्चे की असामान्य स्थिति हो तो उसे किसी स्वास्थ्य केन्द्र या चिकित्सालय में ही प्रसव कराना चाहिये।

जन्म के समय होने वाली अन्य गड़बड़ियां

डाउनस सिन्ड्रोम– यह एक वंशानुगत गड़बड़ी है। कभी–कभी यह २० वर्ष से कम अथवा ३५ वर्ष से अधिक की माताओं में देखने को मिलती है।

इस सिन्ड्रोम से ग्रस्त बच्चे का चेहरा और सिर गोल होता है, आँखें ऊपर की ओर तिरछी होती हैं, छोटी चपटी नाक, मोटी जबान, हथेली पर केवल एक रेखा, छोटी और मोटी उंगलियां तथा हथेलियों की त्वचा खुरदुरी पाई जाती है।

सेरिब्रल पैल्सी– यह गर्भावस्था, जन्म के समय अथवा जन्म के बाद बच्चे के दिमाग में हुये किसी संक्रमण अथवा चोट के कारण होती है। इसमें बच्चे को बैठने या सिर सीधा रखने में अक्षमता, खड़े होने या चलने में अक्षमता, मांसपेशियों का कड़ा और अचल होना, खाने और पीने में कष्ट होना, घुटनों का एक दूसरे में रगड़ना, उंगलियों के बल चलना, दूध पीने में अक्षमता तथा सीखने में धीमा होना ।

लघु सिर कभी–कभी बच्चे का सिर सामान्य की अपेक्षा बहुत धीरे बढ़ता है इसे लघु सिर कहते हैं। इससे ग्रस्त बच्चा मन्द बुद्धि होता है और उसके हाथ पैर कमजोर और लचकदार होते हैं जिससे उसे चलने फिरने में दिक्कत होती है।

सिर शोथ कभी–कभी बच्चे का सिर बहुत बड़ा होता है और तेजी से बढ़ता है उसे सिर शोथ कहते हैं। इससे मानसिक विकलांगता हो सकती है। उसके लक्षणों में आंख की पुतली का नीचे की पलक के पीछे छिप जाना तथा अन्धापन हो सकता है।

मानसिक विकलांगता से बचाव

- बच्चे को चार छः महीने तक यथेष्ट स्तनपान करायें और इसके पश्चात बच्चे को दूसरे पौष्टिक खाद्य खिलायें। यह कम से कम दो वर्ष तक बहुत आवश्यक है।
- बच्चे को बीमारियों के संक्रमण से बचाने के लिये पोलियो, टिटनेस, खसरा, ट्यूबरकुलोसिस,डिप्थीरिया और कूकर खांसी आदि के टीके लगवा लें।
- यदि बच्चे को तेज बुखार और दौरे आते हों तो स्वास्थ्य कार्यकर्ता से संपर्क करें ।बच्चे के हाथ पैर और सिर को गीले कपड़े से ठंडा रखें।
- यदि बच्चे में जन्म के बाद कोई असमान्यता है तो उसे डाक्टर के पास ले जाय ।
- सभी प्रकार के जहरीले पदार्थ बच्चे की पहुंच से दूर रखें।
- बच्चे को दिमागी ज्वर से पीड़ित व्यक्ति के पास न जाने दें।
- यदि बच्चा दूसरे बच्चों की अपेक्षा सुस्त हो तो इस बात का पता करें कि कहीं बच्चा मानसिक विकलांग तो नहीं है।

(वीहाई द्वारा प्रकाशित पुस्तिका से साभार)

बच्चों द्वारा बिस्तर गीला करना

डा. अयोध्या प्रसाद अचल, गया

नवजात शिशु द्वारा मूत्र–त्याग उसकी एक सहज एवं स्वाभाविक प्रतिवर्त प्रतिक्रिया होती है।उस पर उसका कोई बस नहीं होता। एक सीमा तक जब मूत्राशय भर जाता है तो उसमें से मूत्र स्वतः निकल जाता है। यह मूत्र सोते–जागते किसी भी हालत में और कहीं भी निकल जा सकता है। प्रायः सोते समय बिस्तर में पेशाब निकल जाने को ही बिस्तर गीला करना या "बेड–वेटिंग" की संज्ञा दी जाती है।

बच्चा जैसे जैसे बडा होने लगता है उसके अंग–प्रत्यंगों मे वृद्धि के साथ ही साथ परिपक्वता भी आने लगती है। धीरे–धीरे वह अपने इन अंगों की माँस पेशियों पर नियन्त्रण प्राप्त करने लगता है। यही मूत्र–जनन संस्थान के साथ भी घटित होता है। ३ साल की उम्र से लेकर ५ साल की उम्र तक लगभग ८० प्रतिशत बच्चे इस क्षमता को प्राप्त कर लेते हैं। ५ साल के बाद भी यदि यह आदत बनी रहे तो इसे किसी न किसी विकृति का सूचक मानना चाहिए। अधिक दिनों तक बने रहने पर बच्चे में स्नायु–दौर्बल्य, खून की कमी, कमजोरी आदि शारीरिक विकार भी उत्पन्न हो सकते हैं।जैसे–जैसे बच्चा मूत्र– जनन संस्थान से सम्बन्धित मांस पेशियों पर नियन्त्रण प्राप्त करता जाता है वह न केवल पेशाब को रोकने बल्कि उसे इच्छानुसार त्यागने में भी समर्थ होता जाता है। इसके लिए बच्चे को काफी कोशिश करनी पड़ती है।

अनैच्छिक मूत्र–त्याग के कारण

अनैच्छिक मूत्र–त्याग की दो प्रकार की स्थितियां देखने में आती हैं– एक तो वे जिनमें बच्चा शुरू से ही बिस्तर पर पेशाब करता चला जाता है और दूसरी वे जिनमें बच्चे प्रारम्भिक अवस्था में तो यह नियन्त्रण प्राप्त कर लेते हैं पर बाद में किसी कारणवश वह यह नियन्त्रण खो देते हैं और पुनः बिस्तर पर पेशाब करने लगते हैं। किसी किसी में तो काफी बड़े हो जाने पर भी यह आदत बनी रहती है।

अनैच्छिक मूत्र–त्याग के कारणों को तीन प्रधान वर्गों में बांटा जा सकता है–

- गलत आदतें,
- शारीरिक विकृतियां
- मानसिक तनाव।

नीचे इन पर संक्षेप में प्रकाश डाला जा रहा है।

गलत आदतें– अन्य आदतों के समान ही मल–मूत्र त्याग करने की सही आदतें भी बच्चे को सिखाना पड़ती है। यह काम माता–पिता या अभिभावकों का है। इसमें बड़े परिश्रम और धैर्य की जरूरत होती है।कुछ अभिभावक इस ओर उचित ध्यान नहीं देते। देते भी हैं तो गलत ढंग से। इसका कारण बाल स्वभाव या बालमन की जानकारी का अभाव,उनकी अपनी गलत आदतें, धारणाएं या कुण्ठाएं भी हो सकती हैं। कुछ अपने हठ या नासमझी से परिस्थिति को और भी बिगाड़ देते हैं। फलतः बालक की आदतें सम्भलने के बजाय और भी बिगड़ जाती हैं।

शारीरिक विकृतियां:– कभी–कभी अनैच्छिक मूत्र त्याग का कारण मूत्र संस्थान या संलग्न अंगों की विकृतियां भी होती हैं,तथा मूत्राशय या मसाने की कमजोरी,गुर्दों की खराबी,क्षारीय पदार्थों अथवा स्रावों की अनावश्यक वृद्धि के कारण इन अंगों में उत्पन्न अत्यधिक उत्तेजना या संवेदनशीलता,पेट की गडबड़ी विशेष रूप से पेट में कीड़े आदि।

मानसिक तनाव– ऐसे बच्चों में जो पहले तो अपनी इस आदत पर काबू पा लेते हैं पर बाद में कारणवश पुनः बिस्तर गीला करने लगते हैं, मानसिक तनाव ही प्रमुख कारण होता है। इस तनाव को उत्पन्न करने वाली मनोवैज्ञानिक स्थितियां प्रायः निम्न होती हैं–

चिन्ता, असुरक्षा की भावना, अभिभावकों के प्रति अचेतन आक्रामकता अथवा अवज्ञा का भाव, जैविक अथवा संवेगात्मक अपरिपक्वता मूत्र–त्याग सम्बन्धी आनन्द की अनुभूति, किसी प्रकार की मनोस्नायु विकृति।

इनमें से कोई एक अथवा अनेक मनोवैज्ञानिक कारक मिलकर भी इस विकृति को उत्पन्न कर सकते हैं।

एक उदाहरण अपने मां–बाप की सबसे पहली और अकेली सन्तान होने के कारण नेहा को भरपूर प्यार मिल रहा था। उसने ढाई साल की उम्र में ही बिस्तर पर पेशाब करना बन्द कर दिया। इसी बीच माँ को दूसरी सन्तान होने वाली थी। पिता ने अपनी अत्यधिक व्यस्तता के कारण नेहा की माँ को और उसे दादा–दादी के पास भेज दिया। वहां भी नेहा जब तक मां के साथ रही स्वस्थ रही। जब माँ दूसरे बच्चे के प्रसवार्थ अस्पताल चली गई तो नेहा पुनः बिस्तर पर पेशाब करने लगी। इसी बीच पिता छुट्टी लेकर घर पहुंचे। नेहा उन्हीं के पास सोने लगी। उसने पुनः बिस्तर पर पेशाब करना बन्द कर दिया। दूसरा बच्चा हो जाने के बाद माँ उसे लेकर घर आई।लड़का होने के कारण दूसरे बच्चे की ओर लोग अधिक ध्यान देने लगे। नेहा पुनः बिस्तर पर पेशाब करने लगी। माँ–बाप ने अपनी गलती महसूस कर नेहा की तरफ भी समुचित ध्यान देना शुरू कर दिया। नेहा ने पुनः बिस्तर पर पेशाब करना बन्द कर दिया। स्पष्ट है कि नेहा की समस्या पूर्णतः मनोवैज्ञानिक थी। उसमें चिन्ता और असुरक्षा दोनों का प्रभाव था। वह पहला मौका था जब वह मां–बाप दोनों से इतने दिनों के लिए अलग हुई थी। दूसरे,दूसरी सन्तान लडका होने के कारण स्वभावतः वह घर के सभी लोगों के आकर्षण का केन्द्र बन गया और नेहा अपने आप को उपेक्षित अनुभव करने लगी। बाद में जब पुनः उसे वही प्यार मिलने लगा तो उसकी सारी चिन्ता दूर हो गई और वह अपने आप को सुरक्षित अनुभव करने लगी।

उपचार

उपचार की व्यवस्था निदान के अनुरूप ही होनी चाहिए। अगर उसका यह रोग किसी गलत आदत के कारण है तो आवश्यक प्रशिक्षण

देकर धीरे-धीरे उसे रास्ते पर लाना चाहिए। अगर उनका यह रोग मां-बाप या अभिभावकों की असफलता या उपेक्षा के कारण है तो बच्चे से पहले अभिभावकों का ही इलाज होना चाहिए। जब तक खुद मां-बाप के द्वन्द्वों का निदान नहीं हो जाता बच्चे पर किया गया सारा परिश्रम व्यर्थ जायेगा। मान लीजिए मां-बाप को देर तक सोने की आदत है। बच्चे प्रायः ब्राह्म-मुहूर्त में जाग जाते है। जागने के बाद पेशाब लगना स्वाभाविक है। ऐसे में यदि मां-बाप आलस्यवश न उठें और बच्चे को ठोंक-पीटकर जबरदस्ती सुलाने की कोशिश करें तो वह निश्चय ही बिस्तर पर पेशाब करना शुरू कर देगा।

अगर बच्चे की यह आदत किसी शारीरिक विकृति या रोग के कारण है तो उसका भली प्रकार निदान कर पहले मूल रोग का ही उपचार करना चाहिए। मूल रोग के दूर हो जाने पर यह आदत अपने आप छूट जायेगी। शायद ही उसका अलग से इलाज करने की जरूरत पड़े।

और अगर यह रोग मनोवैज्ञानिक कारणों की उपज है तो बालक के जीवन-चक्र(केस-हिस्ट्री) का भली प्रकार अध्ययन कर अभिभावकों के सहयोग से उन कारणों को दूर करने की कोशिश करनी चाहिए जिन्होने उसके संवेगों को विकृत और मानसिक जीवन को तनावपूर्ण बना दिया है। बालक को उसकी इस आदत के लिए कभी भी मारना, डराना, धमकाना, या धिक्कारना नहीं चाहिए। उसकी निन्दा या आलोचना भी नहीं करनी चाहिए। मां-बाप को उसकी इस आदत के लिए उसके सामने अपने को परेशान या चिन्तित भी नहीं दिखलाना चाहिए। उपचार में प्रमाद या उतावलापन नहीं करना चाहिए। ठीक इन सबके विपरीत बालक को उचित अंशों में प्यार, पोषण और सुरक्षा देनी चाहिए। उसे रचनात्मक कामों या खेलों में लगाने की कोशिश करनी चाहिए। उसकी इस आदत को धैर्य, सावधानी और समझदारी से दूर करने की कोशिश करनी चाहिए।कभी-कभी अभिभावकों की अनावश्यक चिन्ता और तत्परता परिस्थिति को और भी बिगाड़ देती है।

इस आदत से ग्रस्त एक बालक के माता-पिता ने तय किया कि बालक को रोज पेशाब कराके ही सुलाया जाय। बालक जल्दी सो जाता तो उसे जबर्दस्ती उठाकर पेशाब करने पर मजबूर किया जाता । इस पर भी उसकी आदत संभलते न देख बीच में उसे एक बार और जगाकर पेशाब कराया जाने लगा। होते-होते नौबत यहाँ तक आ पहुंची कि मां-बाप ने दो-दो घंटे बाद उसे उठाना शुरू किया। पर सब बेकार गया। बालक की आदत सुधरने के बजाय और बिगड़ती गयी।

एक केस में चिकित्सक का आदेश था कि बालक को अपरान्ह के बाद कोई तरल पदार्थ न दें। माँ-बाप ने चिकित्सक के आदेश का दृढ़ता से पालन करना शुरू किया। बालक इस आकस्मिक परिवर्तन के लिए तैयार न था। शाम को उसे दूध पीने की आदत थी। कोशिश करने पर भी वह अन्य चीजों को लेने के लिए तैयार न हुआ। एक तरफ विकित्सक का आदेश और दूसरी तरफ बालक की जिद। घर में कोहराम मचने लगा। इस कशमकश में रोग और भी जटिल रूप धारण करने लगा।

स्पष्ट है कि उक्त दोनों ही केसों में बच्चों के मां-बाप ने अनावश्यक तत्परता और असावधानी के कारण बालक के मानसिक तनाव को और भी बढ़ा दिया। मानसिक तनाव से पीड़ित बालक के मन के गुप्त गहवरों में छिपी कुण्ठाओं को जब तक दूर नहीं किया जाता वह पूर्णतः स्वस्थ नहीं हो सकता। ऐसे केसों में मनश्चिकित्सक का सहयोग अधिक आवश्यक है।

खेलों से मानसिक विकास

माता-पिता यह चाहते है कि उनका बच्चा पढ़ने में सबसे आगे निकल जाये। इस अपेक्षा के कारण वे बच्चे की अन्य रुचियों की तरफ ध्यान ही नहीं दे पाते। इसके बहुत गलत परिणाम होते हैं। बच्चा कुंठित हो जाता है या दब्बू स्वभाव का हो जाता है। उसकी प्रतिभा विकसित नहीं हो पाती।

माता-पिता को चाहिए कि सबसे पहले वे बच्चों की रुचियों को पहचानें उन्हें खेलने का, खुलकर बातचीत करने का मौका दें। उनकी प्रतिभा को दिशा दें। और तब खेल ही खेल में उसे बताएं कि उसे खेल के साथ-साथ पढ़ना भी चाहिए। बच्चों के लिए पढ़ना-लिखना जितना जरूरी है उतना ही खेलना भी। खेलों से बच्चों का शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास भी होता है और उनके व्यक्तित्व में निखार भी आता है। खेल भी दो प्रकार के होते हैं शारीरिक एवं मानसिक। झूला, सी-सा, रस्सी कूदना आदि बच्चों के शारीरिक खेल हैं। इनसे बच्चों का खेल-खेल ही में शारीरिक व्यायाम भी हो जाता है। इस तरह के खेल-खेलना बच्चों के लिए बहुत जरूरी है। शारीरिक व्यायाम से पाचन शक्ति ठीक रहती है, जिससे शरीर का विकास भलीभाँति होता है। साथ ही ये सभी खेल आपस में मिल बैठकर खेले जाते हैं, इससे बच्चों में एक साथ मिलकर प्रेम से खेलने की भावना बलवती होती है। उनके व्यावहारिक ज्ञान में भी वृद्धि होती है। खेलते हुए ही वे यह भी समझ जाते हैं कि अपने से बड़ों से उन्हें कैसे बात करनी है अपने से छोटों से कैसा व्यवहार किया जाता है। कुछ खेल बच्चे घंर में बैठकर भी खेलते हैं जैसे-लूडो, सांप-सीढ़ी, बिल्डिंग ब्लाक्स आदि। इन सभी खेलों से बच्चों का मानसिक विकास होता है। किसी चीज को याद रखने की उनकी क्षमता बढ़ती है। जोड़ना, घटाना, हिसाब लगाना बच्चे खेल ही खेल में सीख जाते हैं। प्रत्येक खेल में प्रतिस्पर्धा की भावना होने से बच्चों में एक दूसरे से आगे बढ़ने की प्रवृत्ति आती है।

बच्चे कुछ खेल खिलौनों के माध्यम से खेलते हैं अतः बच्चों को उनकी पसन्द के खिलौने दिलवाना भी बहुत जरूरी है।

बच्चों के लिए खेलना बहुत जरूरी है। पढ़ाई से जहां किताबी ज्ञान में वृद्धि होती है वहीं खेल उनमें रचनात्मक भाव को बढ़ाते हैं। उनमें सृजनात्मकता को जन्म देते हैं। छोटे-छोटे बिल्डिंग ब्लाक्स से बच्चे घर जहाज आदि का निर्माण करते हैं।

बच्चे खिलौनों से भावनात्मक स्तर पर सम्बन्ध रखते हैं। खिलौने टूट जाने पर उनकी यह भावना मुख्य रूप से परिलक्षित होती है। बच्चे आज भी गुब्बारे को पा कर उतना ही आनन्दित होते हैं जितना पहले होते थे।

बच्चों के अधिकार

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने २० नवम्बर १९८९ को बच्चों के अधिकारों पर एक प्रस्ताव पारित किया। इस प्रस्ताव पर १५० से अधिक देशों ने हस्ताक्षर किये हैं। बच्चों की आवश्यकताओं पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता १९२४ में बाल अधिकारों की जेनेवा घोषणा और २० नवम्बर १९५९ को महासभा द्वारा पारित प्रस्ताव में व्यक्त की गई थी। विश्व के सभी देशों में बहुत से बच्चे अत्यंत कठिन परिस्थितियों में रह रहे हैं जिन पर विशेष ध्यान देने के लिये यह प्रस्ताव पारित किया गया।

भारतवर्ष इस प्रस्ताव पर हस्ताक्षर करने वाले सर्वप्रथम देशों में से एक है। भारत सरकार ने संविधान के नीति निर्देशक सिद्धान्तों के अनुच्छेद ३९ और उपरोक्त प्रस्ताव की भावनाओं के अनुरूप एक राष्ट्रीय बाल नीति की घोषणा अगस्त १९७४ में ही की थी। जिसमें बालकों के पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक विकास के लिये जन्म के पूर्व से बढ़त की पूरी उम्र तक पर्याप्त सेवायें प्रदान करने की प्रतिबद्धता व्यक्त की है। नई आर्थिक नीतियों, ढांचागत समायोजन, रोजगार के घटते अवसर और लगातार बढ़ती मंहगाई ने इन घोषणाओं के जमीनी क्रियान्वयन पर प्रश्न चिन्ह लगा दिये हैं।

संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव की मुख्य बातें निम्न हैं-

समझौते में शामिल देश बच्चे के माता-पिता अथवा कानूनी अभिभावक की जाति, वर्ण, लिंग, भाषा धर्म राजनीतिक तथा सामाजिक विचारों, संपत्ति, विकलांगता, जन्म और हैसियत के किसी भेदभाव के बिना बच्चे के अधिकारों का सम्मान करेंगे और उन्हें सुनिश्चित करेंगे। माता-पिता अथवा अभिभावक द्वारा व्यक्त विचारों या विश्वासों के कारण बच्चे से कोई भेदभाव नहीं करेंगे न दंडित करेंगे।

बच्चों के कल्याण के लिये सभी उपयुक्त विधायी तथा प्रशासनिक उपाय किये जायेंगे तथा बच्चे से संबद्ध सभी कार्यों, चाहे वे निजी, कल्याण संस्थाओं या सरकारी एजेंसियों द्वारा किये जायं, बच्चे के सर्वोत्तम हितों पर पहले ध्यान दिया जायगा।

बच्चों की देखभाल और उनके कल्याण के कार्य, विशेषकर सुरक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में निर्धारित मानकों के अनुरूप होंगे। इसके लिये सभी देश उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग करेंगे तथा अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग करेंगे।

समझौते में शामिल सभी देश बच्चे के जीने का अधिकार जन्मजात मानते हैं और बच्चों के जीवित रहने तथा विकास को सुनिश्चित करेंगे। वे माता-पिता, परिवार, समाज तथा अन्य व्यक्तियों के ऐसे दायित्वों और अधिकारों का सम्मान करेंगे जिससे बच्चे अपने अधिकारों को प्राप्त कर सकें।

सभी देश जन्म के बाद बच्चे के पंजीकरण, उसे नाम और राष्ट्रीयता प्रदान करने तथा माता-पिता द्वारा उसकी उचित देखभाल सुनिश्चित करेंगे। राष्ट्रीयता से विहीन बच्चों पर विशेष ध्यान दिया जायगा।

समझौते में शामिल देश यह सुनिश्चित करेंगे कि माता-पिता की इच्छा के खिलाफ बच्चा उनसे अलग न किया जाय केवल उस परिस्थिति को छोड़कर जब सक्षम अधिकारी न्यायिक प्रक्रिया द्वारा ऐसा करना बच्चे के सर्वोत्तम हित में माने। ऐसा माता अथवा पिता द्वारा दुर्व्यवहार और उपेक्षा, मानसिक-शारीरिक उत्पीड़न की स्थिति में संभव है। ऐसे बच्चे को माता और पिता से नियमित आधार पर व्यक्तिगत संबंध रखने का अधिकार होगा। यदि माता-पिता अलग-अलग देशों में रहते हों तो भी मान्य कानूनी प्रतिबंधों को मानते हुये बच्चे का यह अधिकार माना जायगा। परिवार के पुर्नमिलन के लिये माता-पिता अथवा बच्चे द्वारा देश छोड़ने के आवेदनों पर सभी देश सकारात्मक, मानवीय और तुरंत कार्यवाही करेंगे।

सभी देश बच्चों को गैर कानूनी तरीके से विदेश भेजे जाने की घटनाओं को रोकने के लिये कदम उठायेंगे और इसके लिये द्विपक्षीय और बहुपक्षीय समझौते करेंगे।

बच्चे की आयु तथा परिपक्वता के अनुरूप उसके विचारों को पर्याप्त महत्व दिया जायगा। उसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार होगा । यद्यपि इस पर कानून और अन्तर्राष्ट्रीय मान्यताओं के आधार पर कुछ प्रतिबंध लगाये जा सकते हैं।

समझौते में शामिल देश बच्चे के विचारों, अंतरात्मा और धर्म की आजादी के अधिकार को सुनिश्चित करेंगे तथा माता-पिता अथवा कानूनी अभिभावकों के बच्चे को दिशा देने के अधिकारों और कर्तव्यों का सम्मान करेंगे। कानूनी प्रतिबन्धों के साथ संगठन बनाने की आजादी तथा शांतिपूर्ण तरीके से बच्चों के एकत्र होने के अधिकार को स्वीकार करेंगे।

सभी देश बच्चों के सामाजिक, आध्यात्मिक और नैतिक हित तथा शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देने में जन संचार माध्यमों की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करते हैं। वे बाल पुस्तकों के प्रकाशन को बढ़ावा देने तथा अल्पसंख्यक और आदिम वर्ग के बच्चों की आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान देते हुये सूचना सामग्री के आदान प्रदान क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग करेंगे।

समझौते में शामिल देश माता-पिता और कानूनी अभिभावकों को उचित सहायता देंगे ताकि बच्चे के सर्वोत्तम हितों की उनकी बुनियादी चिन्ता और जिम्मेदारी की पूर्ति हो सके।

सभी देश बच्चों को सभी प्रकार की शारीरिक और मानसिक हिंसा, चोट अथवा अपमान, उपेक्षा अथवा उपेक्षाजनक व्यवहार, दुर्व्यवहार अथवा शोषण जिसमें यौन शोषण शामिल है, से बचाने के उपाय करेंगे तथा इस उद्देश्य से सामाजिक कार्यक्रम बनायेंगे और न्यायिक कार्यवाही सुनिश्चित करेंगे।

अस्थाई अथवा स्थाई रूप से पारिवारिक वातावरण से वंचित बच्चे सरकार की ओर से विशेष संरक्षण और सहायता के अधिकारी होंगे।

जीवनीय शिशु

समझौते में शामिल वे देश जो गोद लेने की प्रथा को मान्यता देते हैं यह सुनिश्चित करेंगे कि इस प्रक्रिया में बच्चे के सर्वोत्तम हितों पर सर्वोपरि ध्यान रखा जायगा और केवल सक्षम अधिकारी द्वारा प्राधिकृत होने पर ही उसे मान्य समझा जायगा। दूसरे देश में गोद दिया जाना तब ठीक समझा जायगा जब बच्चे के अपने देश में उसकी देखभाल नहीं की जा सके।

यदि कोई बच्चा शरणार्थी का दर्जा दिये जाने की मांग करता है तो उसे उचित संरक्षण तथा अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार अथवा माननीय प्रसंविदाओं के आधार पर सहायता दी जाय। शरणार्थी बच्चे के माता पिता अथवा परिवार का पता लगाकर पुनर्मिलन की व्यवस्था करना संबंधित देश की जिम्मेदारी है।

सभी देश मानसिक अथवा शारीरिक विकलांग बच्चों की आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देकर उनकी समाज में सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करेंगे और इस उद्देश्य से शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य और पुनर्वास की सुविधायें यथासंभव निःशुल्क प्रदान करेंगे और इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये विकलांग बच्चों के चिकित्सकीय, मनोवैज्ञानिक और कार्य संबंधी उपचार में उपलब्ध जानकारी का आदान प्रदान करेंगे। उस दिशा में विकासशील देशों की आवश्यकता का विशेष ध्यान रखा जायगा।

समझौते में शामिल देश शिशु तथा बाल मृत्यु समाप्त करने के उद्देश्य से स्वास्थ्य संबंधी प्राथमिक देखभाल, बीमारी और कुपोषण को दूर करने, पर्याप्त पौष्टिक भोजन और साफ पेय जल उपलब्ध कराने तथा पर्यावरण प्रदूषण को दूर करने के प्रयास करेंगे। इस उद्देश्य से बच्चों के माता-पिताओं को बाल स्वास्थ्य, पोषण, स्तनपान, स्वच्छता और पर्यावरण की शुद्धि, दुर्घटनायें रोकने के उपायों तथा परिवार नियोजन की जानकारी दी जायगी।

सभी देश बच्चों के लिये हानिकारक परंपरागत प्रथाओं को समाप्त करने के सभी प्रभावी और उचित उपाय करेंगे।

सभी देश सामाजिक बीमा सहित सामाजिक सुरक्षा से लाभ उठाने के हर बच्चे के अधिकार को मान्यता देगे तथा उन्हें लागू करेंगे।

समझौते में शामिल देश प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बना कर बच्चों के शिक्षा के अधिकार को मान्यता देंगे। वे सामान्य और व्यावसायिक शिक्षा सहित उच्च शिक्षा को सुलभ बनायेंगे। बच्चों की नियमित उपस्थिति सुनिश्चित करने तथा पढ़ाई के बीच में स्कूल छूट जाने की दर को कम करेंगे। सभी देश वैज्ञानिक और तकनीकी जानकारी और शिक्षण के आधुनिक तरीकों की जानकारी के आदान-प्रदान के लिये अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग को प्रोत्साहन देंगे। शिक्षा का उद्देश्य बच्चे के व्यक्तित्व, प्रतिभाओं तथा मानसिक और शारीरिक योग्यता पूर्ण विकास अन्य सभ्यताओं के प्रति सम्मान की भावना का विकास तथा मानव अधिकारों, मूलभूत स्वतंत्रताओं और संयुक्त राष्ट्र घोषणा पत्र के प्रति सम्मान का विकास है। बच्चे को देश के सभी राष्ट्रीय और धार्मिक समुदायों, आदिवासियों के बीच समानता, शांति, सहिष्णुता, स्त्री-पुरुष समानता और मैत्री के साथ-साथ समाज के प्रति जिम्मेदारी को भावना के लिये तैयार करना चाहिये।

सभी देश बच्चे के आराम करने, खेलने, उम्र के अनुसार मनोरंजन करने, तथा सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेने के अधिकार को मान्यता देते हैं।

सभी देश आर्थिक शोषण, जोखिम भरे और शिक्षा में बाधा डालने वाले तथा शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, नैतिक या सामाजिक विकास के लिये हानिप्रद कार्यों से संरक्षण के बच्चे के अधिकार को मान्यता देंगे। वे रोजगारों की विभिन्न श्रेणियों के लिये न्यूनतम आयु निर्धारित करेंगे, रोजगार के घंटों और परिस्थितियों के बारे में विधान बनायेंगे और उनका क्रियान्यवयन सुनिश्चित करेंगे। वे नशीले पदार्थों के अवैध उपयोग और उसकी तस्करी में बच्चों को लगाये जाने से रोकेंगे।

समझौते में शामिल सभी देश यौन शोषण और यौन दुर्व्यवहार यथा अवैध यौन कार्य, वेश्यावृत्ति, अश्लील कार्यों आदि में बच्चों के शोषण से उन्हें बचायेंगे।

सभी देश बच्चों के अपहरण, बिक्री ओर व्यापार को रोकने के सभी कदम उठायेंगे।

समझौते में शामिल देश अठारह साल से कम व्यक्तियों को किसी भी अपराध के लिये मृत्युदंड या आजीवन कारावास नहीं देंगे। बच्चे को गिरफ्तारी, नजरबंदी और कारावास के दंड कानून के अनुसार यथासंभव कम से कम अवधि के लिये होंगे तथा इस दौरान बच्चे की उम्र के अनुरूप आवश्यकताओं का ध्यान रखा जायगा, मानवता और सम्मान का व्यवहार किया जायगा तथा पत्र व्यवहार और परिवार से मिलते रहने का अधिकार होगा। जब तक बच्चा कानूनन दोषी सिद्ध नहीं हो जाता, तब तक उसे निर्दोष माना जायगा तथा उसे उपयुक्त कानूनी और अन्य सहायता दी जायगी। बच्चे को किसी भी न्यायिक निर्णय की स्थिति में पुनः समीक्षा का अधिकार होगा तथा उसे गवाही देने, प्रतिपक्षी गवाहों की जांच करने और अपनी ओर से गवाह पेश करने के लिये बाध्य नहीं किया जायगा। यदि बच्चा न्यायालय में प्रयुक्त भाषा नहीं समझ सकता तो उसे दुभाषिये की निःशुल्क सुविधा दी जायेगी। सभी देश ऐसी न्यूनतम आयु का निर्धारण करेंगे जिससे कम आयु के बच्चों से दंड विधान के उल्लंघन की क्षमता नहीं है।

समझौते में शामिल सभी देश सशस्त्र संघर्ष की स्थिति में बच्चों से संबद्ध कानूनों का सम्मान करेंगे और इस बात का व्यावहारिक उपाय करेंगे कि पन्द्रह वर्ष से कम आयु के बच्चे लड़ाइयों में सीधे हिस्सा न लें। वे पन्द्रह वर्ष से कम केबच्चों को सेना में भर्ती नहीं करेंगे।

बेटी वो पौधा है जिसको
रोशनी ना जल मिले
ऐसा है वो फूल जो खिल
सकता है पर ना खिले

कमला भसीन

भारतीय संविधान और राष्ट्रीय शिशु नीति

भारतीय संविधान में लिपिबद्ध है कि सरकार की नीति ऐसी होगी कि जिससे मजदूर स्त्री-पुरुषों तथा कोमल वय के बच्चों के स्वास्थ्य और शक्ति का दुरुपयोग न हो और नागरिकों को आर्थिक मजबूरियों के तहत अपनी उम्र और शक्ति के अनुसार अनुपयुक्त व्यवसायों में न प्रवृत्त होना पड़े। बच्चों को स्वतंत्रता और सम्मान के साथ स्वस्थ तरीके से बढ़ने के अवसर और सुविधाएं उपलब्ध करायी जायेंगी और बचपन तथा जवानी को शोषण एवं नैतिक और भौतिक परित्याग से बचाया जायेगा।

उक्त वचनबद्धता के दृष्टिगत १९७४ में भारत सरकार ने राष्ट्रीय शिशु नीति निर्धारित की जिसके अंतर्गत सरकार ने बच्चों को जन्म से पहले तथा बाद में उनके बढ़ने की उम्र में उनके पूर्ण दैहिक, मानसिक और सामाजिक विकास के लिए पर्याप्त सेवाएं उपलब्ध कराने की घोषणा की। यह भी निर्णय लिया गया कि सरकार इन सुविधाओं का क्रमशः इस प्रकार विस्तार करेगी कि उपयुक्त समय के अंदर ही देश के सभी बच्चे इन सुविधाओं से लाभान्वित हो अपना संतुलित विकास कर सकें। राष्ट्रीय शिशु नीति की मुख्य विशेषताएं निम्न हैं:-

- बच्चों के लिए पोषाहार की योजनाएं।
- १४ वर्ष तक के बच्चों के लिए निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा।
- स्कूलों, सामुदायिक केन्द्रों तथा अन्य ऐसे केंद्रों में खेल-कूद, व्यायाम तथा मनोरंजन और सांस्कृतिक तथा वैज्ञानिक गतिविधियों को प्रोत्साहन।
- समाज के कमजोर तबकों के बच्चों के लिए विशेष सहायता।
- बच्चों को क्रूरता, उपेक्षा और शोषण से बचाया जायेगा।
- १४ वर्ष से कम उम्र के बच्चों को किसी भी खतरनाक व्यवसाय में अथवा भारी-भरकम कार्य करने की अनुमति नहीं दी जायेगी।
- विकलांगता, मानसिक मंदता आदि विकारग्रस्त बच्चों को विशेष उपचार, शिक्षा और पुनर्वास की सुविधा दी जायेगी।
- बच्चों में, विशेष रूप से कमजोर तबकों के बच्चों में, प्रतिभाशाली बच्चों की खोज करके, उन्हें सहायता और प्रोत्साहन दिया जायेगा।

चूल्हा चौका चारदीवारी बचपन में सौंपे गये
ढेर जिम्मेदारियों के जबरन ही थोपे गये

कम उमर में शादी की गाड़ी में ये जोती गईं
बच्चियाँ बन बन के मायें ज़िन्दगी खोती गईं

बदनीयत से भी डरें और हर नज़र से ये डरें
फरियाद ये किस से करें गर हाथ अपनों के बढ़ें

(कमला भसीन की पुस्तक "हमारी बेटियाँ इंसाफ की तलाश में" से साभार)

बच्चों का असामान्य व्यवहार

सामान्यतया बच्चे बिना किसी कारण के कोई काम करते हैं परन्तु कभी-कभी किसी अन्तर्निहित कारण से उनके व्यवहार में असामान्यता आ जाती है। असामान्य व्यवहार की स्थिति में बच्चे को सजा देने, उससे बात चीत बन्द रखने, उसे किसी वस्तु का प्रलोभन देने अथवा डराने से वे असामान्यतायें और मजबूत होती हैं। इनके स्थान पर बच्चे को समझा बुझा कर प्यार से इस असामान्य व्यवहार का अन्तर्निहित कारण दूर करने का प्रयास करना चाहिये। पिता अथवा माता के डर से बच्चा उस समय तो बात मान लेगा परन्तु बाद में वही शैतानी फिर करेगा।

खाना न खाने की समस्या

भोजन के समय बच्चे अपनी मां को पागल कर देते हैं क्योंकि मां की पकाई कोई चीज उन्हें पसन्द नहीं आती है। अक्सर माता पिता इस बात को लेकर बहुत परेशान रहते हैं कि उनका बच्चा कुछ खाता नहीं इसीलिये छोटा है और बढ़ता नहीं या दूसरे बच्चों की तरह उसे भूख नहीं लगती। इसका कारण अधिक दूध पिलाना भी हो सकता है। यानी बच्चा एक वर्ष का है और दिन भर में एक लीटर दूध पी लेता है तो उसके भोजन की ६० % आवश्यकता उसी से पूरी हो जाती है। उसे अधिक ठोस आहार देने के लिये पहले उसे दी जाने वाले दूध की मात्रा कम करनी होगी।

कभी भी भोजन के समय को बच्चे के लिये परेशानी वाला न बनने दें। न ही उसे डरा कर, धमकी देकर या प्रलोभन देकर जबरदस्ती भोजन कराने का प्रयास करें।

नींद की समस्या

छोटे बच्चे जब तक खूब थक नहीं जाते तब तक सोते नहीं है। अक्सर माता-पिता की यह शिकायत होती है कि बच्चा ठीक से सोता नहीं। बच्चे के सोने का समय निश्चित होना चाहिये तथा इसमें बार-बार परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिये। यदि बच्चा सोते में उठ जाता है या बिस्तर से उतर कर दूसरे बिस्तर की ओर चल देता है। उसे चुपचाप फिर सुला देना चाहिये। ऐसे समय बच्चे को डांटने मारने से उस पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

झूठ बोलना, गाली देना

अधिकांश बच्चे कभी न कभी सजा से बचने के लिये अथवा कोई लाभ प्राप्त करने के लिये झूठ बोलते हैं। छोटे बच्चे सच्चाई और कल्पना के बीच अधिक अन्तर नहीं करते हैं और उन्हें सच्चाई और ईमानदारी का महत्व भी नहीं मालूम होता है। ऐसी स्थिति में माता-पिता से बच्चे के निकट संबंध और सीधी बातचीत बहुत महत्वपूर्ण है। एक बार बच्चा सच बोलने की आवश्यकता समझ ले तो फिर वह झूठ नहीं बोलता।

अक्सर बच्चे घर के किसी सदस्य या आसपास के परिवेश से गाली देना सीख लेते हैं। वास्तव में बच्चे इसके पीछे छिपे अर्थ को नही जानते हैं। यदि कोई व्यक्ति गुस्से में गाली देता है तो बच्चा यह समझता है कि गुस्से में इस शब्द का प्रयोग किया जाता है और उसे दोहराता है। गाली देने पर बच्चे को कभी भी डांटें फटकारें नहीं और उसे गाली न देने के लिये प्रलोभन भी न दें बल्कि उसकी इस बात पर ध्यान न दें तथा घर में बातचीत ठीक से करें।

गुस्से के दौरे

बच्चों में डेढ़ से दो वर्ष की आयु में जब बच्चे बहुत से काम करना सीखते हैं तो उन कामों को ठीक से न कर पाने के कारण वे निराशा और क्रोध से भर जाते हैं। ऐसी स्थिति में वे जमीन पर लोट जाते हैं, हाथ पैर पटकने लगते है और अपना सिर पटक देते हैं तथा चिल्लाने लगते हैं। माता-पिता उस स्थिति में कभी-कभी स्वयं गुस्सा हो जाते हैं तथा बच्चे को पीट देते हैं। यदि बच्चे को थोड़ी देर के लिये अकेला छोड़ दिया जाय तो वह स्वयं ठीक हो जाता है। यदि बच्चा कई लोगों के सामने ऐसा व्यवहार करे तो उसे अकेले में ले जाकर चुप करायें। कभी भी बच्चे को डरायें नहीं और न ही किसी प्रकार का प्रलोभन दें, बड़े होने पर बच्चों में इस प्रकार गुस्से के दौरे स्वयं समाप्त हो जाते हैं।

बच्चों का कोमल मन

नवजात शिशु का मस्तिष्क फोटोग्राफ के नये, संवेदनशील प्लेट के समान होता है जिस पर अभी किसी तरह की छाप नहीं पड़ी है। बहुत से माता-पिता यह खयाल करते हैं कि बचपन में तो दिमाग पर कोई असर ही नहीं होता, बिलकुल कोरा बना रहता है; पर वे भूलते हैं; क्योंकि मस्तिष्क की संवेदनशील प्लेट पर जीवन का आरंभ होने के साथ ही छाप पड़ने लगती है। ये छाप बच्चे का जीवन बना-बिगाड़ सकती हैं।

बहुत से लोग जिस कमरे में बच्चा है उसी में बैठकर आपस में भोड़ी बातें कहा करते हैं और झगड़ते तथा आशब्दों का भी प्रयोग करते हैं। जरा खयाल कीजिये कि इस समय उस संवेदनशील प्लेट पर कैसी छाप पड़ती रहती है।

इस प्रकार की खराबियों से अपने बच्चे की रक्षा कीजिये, प्रत्येक बुरे शब्द से उसको बचाइये। और उसके जीवन के प्रथम वर्ष में शांति और सामंजस्य के अलावा उसके संवेदनशील प्लेटपर कुछ भी अंकित न होने दीजिये। जो माताएं समझदारी के साथ अपने बच्चों को प्यार करती हैं वे यह भी करती हैं।

आप किस प्रकार का बच्चा तैयार करना चाहते हैं ? क्या आप ऐसा बच्चा चाहते हैं जो झगड़ालू, बदमिजाज, बदजबान और बेरहम हो या ऐसा बच्चा चाहते हैं जो दयालु विवेकशील और कोमल स्वभाव का हो ? यह आपकी ही पसंदकी बात है; आप ही बच्चे के भविष्य के निर्माता हैं अगर आप बच्चे को बढ़िया बनाना चाहते हैं, ऐसा बनाना चाहते हैं जो सामाजिक हो, समाज के कल्याण के लिए कार्य करनेवाला हो, जाति और वंशको आगे बढ़ानेवाला हो, तो उसके जीवन के प्रथम वर्ष से ही उसकी ओर से खूब सावधान रहिये- उसकी उपस्थिति में कोई कटु या बुरा शब्द मुंह से न निकल पाये और आपके दिमाग से भी कोई बुरा विचार न निकले।

दादी मां के नुस्खे

शिशु रक्षा

वैद्य बदलू राम रसिक, लखनऊ

दादी मां : प्रसन्न रहो बेटी, आज तो तुम नई बड़ी कापी लेकर आई हो । मालूम होता है कि कुछ विशेष बात पूछना चाहती हो।

सरस्वती : हां दादी मां गांव में अनेक बच्चे बीमार रहते हैं कई प्रकार के रोग हो जाते हैं इसलिए उनके लिए आप हमें बतायें कि किस प्रकार बच्चों के स्वास्थ्य की रक्षा की जा सकती है।

दादी मां : लिखो, पहले तो गर्भवती स्त्री को गर्भ के समय बड़ी सावधानी बरतनी चाहिए । जैसे सिरका, अचार, मिर्चा, खट्टी चीजें, मिट्टी आदि नहीं खाना चाहिए। यह सब खाने के बाद बच्चे के पैदा होने के बाद उसे कामला, कब्ज, चर्मरोग आदि हो जाता है।

गर्भवती स्त्री को सादा भोजन, रोटी, दाल चावल, सब्जी, दूध दलिया आदि खाना चाहिए।

बच्चे के पैदा होने के बाद उसे शहद असली चटा देना चाहिए तथा बकरी का दूध देना चाहिए । शहद चटाने से बच्चे को चेचक नहीं होती है यह अनुभव सिद्ध है।

बहुत से बच्चों को पैदा होने के बाद साफ टट्टी नहीं होती है या २-२ दिन नहीं होती है । ऐसी दशा में बच्चों को छोटी हरड़ पानी में घिसकर पानी में मिला कर चम्मच से पिला देनी चाहिए इस से टट्टी साफ होने लगती है। बहुत से बच्चे पैदा होने के बाद दूध बहुत छोड़ते हैं ।बार बार दूध पीने के बाद कै कर देते हैं । ऐसे मामले में बच्चे की माता को रोज सबेरे १ चम्मच अजवाइन देना चाहिए। इससे माता के दूध का भारीपन दूर हो जाता और बच्चे को दूध पचने लगता है। अगर फिर भी बच्चा कै करना न बंद करें या दस्त न बंद हों तो चौकिया सुहागा असली खरीद कर उसे पीस कर तवे को आग पर रखकर गरम होने पर उस पर सुहागे का चूरन छिड़क कर चम्मच से चला दें सुहागा फूल जाएगा । तवे को उतारकर ठंडा होने पर इस सुहागे को २-२ रत्ती पानी या मां के दूध में मिला कर दिन में ४ बार पिलाने से रोग दूर हो जाता है । ४-५ दिन बराबर पिलाना चाहिए और अगर बच्चे के दांत निकलने के समय दस्त या कै आती हो तो सुहागे को ४-५ रत्ती दिन में ४ बार पानी में घोल कर देने से ३-४ दिन में दस्त व कै आना बंद हो जाता है दांत भी आसानी से निकल आते हैं यह योग भी हजारों बच्चों पर अनुभूत है।

बच्चों को मां का दूध ही पिलाना चाहिए यह बड़ा गुणकारी होता है। कुछ माताओं को शारीरिक निर्बलता या रक्त की कमी के कारण स्तनों में दूध कम आता है। ऐसी माताओं को सतावर ५० ग्राम, जीरा २० ग्राम, मजीठ २० ग्राम तीनों को कूट पीस छान कर ३-३ ग्राम सवेरे शाम फांकने से दूध की वृद्धि अवश्य होती है इसे फांक कर दूध अवश्य पीना चाहिए यह भी अनुभूत योग है।

बहुत से बच्चों को सूखा रोग हो जाता है अर्थात उनके शरीर का मांस सूखने लगता है ज्वर, खांसी तथा पतले दस्त भी आने लगते है। यह रोग बहुधा उन बच्चों को होता है जिनकी माताएं बच्चे के ५ ६ मास के होते होते संभोग कराने लगती हैं और साथ ही बच्चे को अपना दूध पिलाती हैं। ऐसे बच्चों को सूखा रोग अवश्य होता है इस लिये बच्चों की माताओं को चाहिए कि कमसे कम १ वर्ष तक संभोग रत न हों तो बच्चे को सूखा रोग नहीं होगा। बहुत बार बच्चों में रक्त की कमी ज्वर आने पर दूध न पचने के कारण सूखा रोग हो जाता है। ऐसे बच्चों को, नागर मोथा, अतीस,काकरा सिंगी, छोटी पीपल, चारों को १०-१० ग्राम लेकर कूट पीस छानलें इस में, कपर्द भस्म ५ ग्राम, सीप भस्म ५ ग्राम मिलाकर रखलें इसे २-२ ग्राम दिन में चार बार मधु के साथ चटाने से १ महीने में सूखा रोग ज्वर, खांसी रक्त की कमी दूर हो जाती है। सूखा रोग के बच्चे को जाड़ों मे सरसों का तेल गरमी में तिलका तेल रोज सबेरे लगाना चाहिए। बच्चों के १ साल तक तेल की मालिश अवश्य सवेरे करनी चाहिए।

शंखपुष्पी तेल - शंखपुष्पी १ किलो को पीपल की लाख २५० ग्राम दोनों को ४ लीटर पानी में पकायें जब चौथाई रह जाया तो उसे उतार कर ठंडा करके छान लें इस पानी में ५०० मि.ली. तिल का तेल डालकर पकालें जब तेल जल जाय तो उतार कर छान लें इस तेल के लगाने से बच्चों का शरीर पुष्ट होता है । ज्वर कमजोरी तथा सूखा रोग दूर हो जाता है यह भी अनुभूत है।

मुखपाक - बहुत से बच्चों को मुंह में छाले हो जाते हैं जिसके कारण बच्चा दूध नहीं पी सकता है। मुंह से लार गिरा करती है। मुंह का यह रोग २ कारणों से होता है पहले तो बच्चों को मीठी चीजें खिलाने और दूसरे गर्मियों के मौसम में या रसोई से निकलकर मां बिना स्तनों का पसीना पोंछे बच्चे को दूध पिला देती है पसीना खट्टा होता है इस लिये बच्चों के मुंह में छाले पड़ जाते है इसलिए हर माता को बच्चों को दूध पिलाने के पहले आंचल को पोंछ लेना चाहिए। मुंह के छालों में- रसौत असली १० ग्राम लेकर थोड़े पानी से एक कप में भिगो देना चाहिए २ घंटे भीगने के बाद रसौत को महीन कपड़े से छान कर इसी पानी को बच्चे के मुंह में लगाना चाहिए अगर इसके लगाने से मुंह न ठीक हो तो इसी में १ चम्मच भुना हुआ चौकिया सुहागा मिला देने के बाद मुंह में लगाने से मुंह बिलकुल ठीक हो जाता है।

आखों के रोग - गरमी के मौसम में बच्चों की आंखें लाल हो जाती हैं पपोटे सूज जाते है आखें बंद हो जाती है इसके लिये रसौत २० ग्राम फिटकरी ५ ग्राम दोनों को २ कप पानी में भिगो कर पकालें उबलने के बाद उतार कर ठंडा होने के बाद छान लें और १ शीशी में भर दें। इसे आंख में डालने से सूजन लाली आदि दूर हो जाती है। कभी-कभी कई दिन आखें बंद रहने पर काली पुतली पर सफेद दाग पड जाता है जिसे

रोग और शनिग्रह

पं. काशीनाथ गोपाल गोरे, लखनऊ

शनि ग्रह स्वभावतः क्रूर है। इसकी अधोदृष्टि होती है। क्रूर और पापग्रह होने के कारण इसकी प्रकृति तीक्ष्ण है। यह आयु, जीवन, मृत्यु का कारण, विपत्ति और दुःख का कारक ग्रह होने के कारण विभिन्न रोगों का भी जनक है। तुलाराशि और स्वनवांश में यह बली तथा मेष एवं शत्रुनवांश में सुप्त होता है अतः अत्यन्त फल देता है। इसका प्रभाव शनैश्चरअर्थात् धीमा चलने वाला होने के कारण धीरे–धीरे और लम्बे समय तक रहता है। अतः शनि के प्रभाव से क्रानिक रोग होने की संभावना अधिक होती है। इसकी प्रकृति शीत और संकोचवृत्ति है अतः इससे उत्पन्न रोगों में शैत्य और संकोच की प्रधानता होती है। यह वायुगुणयुक्त, तमस्वरूप, आवासी, कृश है। कषाय रस शनि से प्रभावित है। इसका वर्ण काला है। इसकी धातु लोहा है। बुध और शुक्र इसके मित्र, गुरु सम, सूर्य–चंद्र व मंगल शत्रु हैं।

शनि से उत्पन्न होने वाले रोगों में शैत्य, निराशा, संकोच, बाधा, पुराने विकार, संधिशूल, बधिरता, पंगुता, त्वचारोग, क्षय, अस्थिसंबंधी विकार प्रमुख हैं।

मेष में – होने पर शनि मस्तक, पेट, यकृत संबंधी कष्ट, दन्तशूल, बधिरता, मस्तिष्क संबंधी विकार उत्पन्न करता है।

वृषभ में – गले संबंधी रोग, गंडमाला, डिप्थीरिया, स्वरभंग, अन्नवाहनलिका संबंधी रोग और कर्ण रोग उत्पन्न करता है।

मिथुन में – राजयक्ष्मा, न्यूमोनिया, खांसी, श्वास, फुप्फुस संबंधी विकार, कंधों और हाथ में विकार, श्वास–प्रश्वास संबंधी कष्ट उत्पन्न करता है।

कर्क में – पाचन संस्थान संबंधी दोष, वायु विकार, पेट दर्द, दमा, गर्भाशय संबंधी रोग, स्तन में कर्क रोग उत्पन्न करता है।

सिंह में – हृद्रोग, कामला, रीढ़ की हड्डी व यकृत संबंधी रोग, वातरक्त पैदा करता है।

कन्या में – मलबद्धता, आमविकार, पेट दर्द, पाचन संबंधी विकार उत्पन्न करता है।

तुला में – मस्तक विकार, मूत्रसंस्थान संबंधी कष्ट, रक्त दोष, कमर दर्द उत्पन्न करता है।

वृश्चिक में – पैर में सूजन, दर्द, मूत्रावरोध बवासीर, भगंदर, मूत्राश्मरी, गर्भाशय संबंधी रोग पैदा करता है।

धनु में – वातरक्त, गृध्रसी, पैरों में सूजन और दर्द, संधिशूल क्षय, श्वास, कास, मज्जासंस्था संबंधी विकार उत्पन्न करता है।

मकर में – संधिशोथ, संधिशूल, त्वचारोग, अपचन, घुटने में कष्ट पैदा करता है।

कुंभ में – रक्ताल्पता, पैर भरना, पृष्ठवंश के विकार, रक्तसंस्था में कष्ट, नेत्ररोग, पैर में सूजन और दर्द उत्पन्न करता हैं।

मीन में – राजयक्ष्मा, पैर में दर्द, संधिशोथ और शूल, ठंडक से विभिन्न कष्ट पैदा करता है।

माडा कहते हैं अगर आंख में माड़ा पड़ जाय तो माता का दूध १ सप्ताह रोज दो बार आंख में डालने से रोग दूर हो जाता है फिर भी अगर माड़ा न ठीक हो तो बरगद के पत्ते पर बरगद के कल्लों को तोड़ कर उसका दूध इकट्ठा करें जब ५ बूंद दूध इकट्ठा हो जाय तो उसमें आधा बताशा डालकर अंगुली से चलाकर बताशे को गला दें यह दूध माड़ावाले बच्चों या बड़े की आंख में लगाने से ८–१० दिन में माड़ा ठीक हो जाता है यह हजारों बार का अनुभूत है।

बच्चों की कांच निकलना–बहुत से बच्चों को बहुत दिन तक टट्टियां आने से या कड़ी टट्टी होने से कांच निकलने लगती हैं। घृतकुमारी या घीकुंवार ताजी लेकर उसे छीलकर उसका लुआबदार पानी कांच पर लगाकर कांच को अंदर कर देना चाहिए मगर पहले गुदा द्वार को पानी से धोकर साफ कर लेना चाहिए। घृतकुमारी का रस १ छोटा चम्मच बराबर पानी मिलाकर बच्चों को दोनों समय पिलाने से १०–१५ दिन में कांच का निकलना बंद हो जाता है।

बच्चों के पेट के कीडे – बहुत से बच्चे मिट्टी खाने के आदी हो जाते है वह सोते में पेशाब कर देते हैं। दांत किटकिटाते हैं। ऐसी स्थिति में बाइभरंग २५ ग्राम पलास के बीज २५ ग्राम पीस कर रख लें और ५ ग्राम चूरन लेकर २ कप पानी में आग पर उबालें जब पानी चौथाई रह जाये, उतार कर ठंडा होने पर छान लें और सबेरे तथा शाम को आधा आधा काढ़ा बच्चों को पिला दें। ५ दिन पिलाने के बाद पेट के कीड़े दूर हो जायेगें।

बच्चों के पतले दस्त आना – १ महीने से ६ महीने तक के बच्चों को मीठा अतीस लाकर साफ पत्थर या पीढ़ा पर थोड़ा पानी डालकर रगड़ लें और चम्मच में उठाकर बच्चों को पिला दें गर्मी के मौसम में यह तुरंत फायदा करता हैं। जाडों के मौसम में जायफल असली लेकर पत्थर या पीढ़ा पर पानी के साथ रगड़ कर दिन में ३–४ बार पिलाने से दस्तों का आना बंद हो जाता है।

बच्चों के ज्वर आने पर – अतीस, काकरासिंगी, नागरमोथा, छोटी पीपल को बराबर लेकर कपड़छन करके रख लें। इसे मां के दूध या शहद के साथ बच्चे को देने से खांसी बुखार नाक से पानी आना आदि ठीक हो जाता हैं। बच्चों को स्वस्थ रखने के लिए माताओं का कर्तव्य है कि वह बच्चे को अपना दूध तीन तीन घंटे पर पिलायें या गाय का दूध भी तीन तीन घंटे पर ही पिलाएं। ऐसा करने से बच्चों को कोई बीमारी नहीं होती है। बच्चे के रोने पर थोड़ी थोड़ी देर में दूध देने से दस्त आने लगते हैं या कै होने लगती है।

बच्चों को रोज़ तेल की मालिश करके आंख में काजल लगा कर कपड़े पहना कर खाट पर लिटा देना चाहिए। ऐसा करने से बच्चा अपने आप हाथ पैर फेंक कर इधर उधर लुढ़क कर स्वस्थ रहता है। जो माताएं हर समय बच्चों को गोद लिए रहती है उनके बच्चे गोद लेने के आदी हो जाते हैं और देर में बढ़ते हैं। देखो बेटी सरस्वती आज हमने तुम्हें बच्चों के स्वास्थ्य के संबंध में बहुत कुछ लिखा दिया है। जाओ और गावों में इसी का प्रचार करो।

सरस्वती – अच्छा दादी मां अब जा रहे हैं। चरणस्पर्श।

मकोय

वैद्य एस. ए. खान, लखनऊ

यह एक सुपरिचित पौधा है जो सभी जगहों पर बगीचों, खेतों, पुराने भवनों के आसपास की खाली भूमि पर पाया जाता है। यह दो प्रकार की होती है एक काली मकोय जिसमें फल पकने पर काले होते हैं; दूसरी मकोय लाल मकोय कहलाती है जिसके फल पकने पर लाल रंग के हो जाते हैं। इस पौधे को पहचानने वाले किसी भी व्यक्ति से पूछकर इसकी पहचान की जा सकती है। एक बार पौधा देख लेने पर सदैव याद रहने वाला पौधा है। दोनों प्रकार की मकोय के गुण समान हैं। काली मकोय अधिक पाई जाती है और औषध में इसका उपयोग अधिक होता है।

मकोय के विभिन्न भाषाओं में नाम

हिन्दी –मकोय, मकुइया; **संस्कृत**– काकमाची; **अंग्रेजी**–गार्डेन नाइटशेड; **फारसी**– अगूरेशिफ; **पंजाबी**– काकमाच, मको; **गुजराती**–पीलुडी; **बंगला**–**गुड़कामाई;** **मराठी**–कामोणी; **लैटिन**– सोलानम मेनिआटम

मकोय के गुण

मकोय वातकफशामक व उष्ण है। रेचक होने के कारण पित्त का भी निर्हरण व शमन करती है। विपाक में मधुर व रस कटुतिक्त है।

औषधीय गुणः इसका सब से अधिक प्रभाव जिगर पर होता है। यंकृत, पित्ताशय, आमाशय, हृदय, आँतों आदि के शोथ पर इसका विशेष असर होता है। सर्वांग शोथ पर भी यह लाभकारी है। कब्ज को हटाने वाली है जो जिगर की क्रिया ठीक न होने के कारण हो। यह रक्तशोधक रसायन, शुक्रवर्धक है। बादी बवासीर हृदय रोग, गले की सूजन व त्वचा के रोगों में लाभदायक है।

मात्रा– चूर्ण ४ से ६ ग्राम, स्वरस– २५मि.ली. से ६० मि.ली. गरम करके फाडा हुआ रस– १०० से १२५ मि.ली. गाढ़ा घन क्वाथ २ ग्राम दिन में तीन बार दें।

मकोय का औषधीय उपयोग

यकृत शोथः– यकृत में शोथ होने पर मकोय की पत्तियों या पचांग का स्वरस ५० से ६० मि.ली. निहार मुंह दें या स्वरस को उबाल कर फाड़कर छाना हुआ क्वाथ १०० से १२५ मि.ली. दें। इससे रेचन होकर और मूत्र की मात्रा बढ़कर जिगर की सूजन समाप्त हो जाती हैं। जिगर की क्रिया भी सुधरती है।

जिगर की पुरानी सूजन व कब्ज में इसका शाक खिलाना चाहिये या पत्तियों का स्वरस प्रातः शाम २५–२५ मि.ली. उक्तवत देना चाहिये। स्वरस देते समय उसमें थोड़ा सा कालीमिर्च का चूर्ण मिला लें।

शरीर की सूजन : में इसका स्वरस शरीर पर मलते हैं तथा स्वरस पिलाते हैं या शाक खिलाते हैं। साथ ही पुनर्नवामन्डूर मधु से दें तो और अच्छा लाभ होता है।

(४) हृदय रोगः– शोथ जन्य हृदय रोग जिसमें हृदय का आकार बढ़ा हुआ होता है तथा शोथ भी होता है तो हृदयार्णव रस के साथ मकोय का उपयोग स्वरस या शाक के रूप में करने से अति लाभकर होता है।

मकोय के उपयोग में सावधानी

आयुर्वेद में मकोय का रस एवं मधु मिलाकर खाने का निषेध है। जैसे मधु और घी को समान मात्रा में मिलाकर खाने का निषेध है। अतः मधु और मकोय रस मिलाकर एक साथ प्रयोग न करें। यदि दोनों का प्रयोग करना ही हो तो दोनों के प्रयोग के बीच में १–२ घंटे का अन्तर कर देना चाहिये।

लेखकों के लिये

"जीवनीय" में प्रकाशन हेतु लेख या अपने अनुभव भेजते समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि रचना टाइप की हुई हो या उसकी लिखावट साफ–सुथरी व कागज के एक ओर ही हो। कृपया हाशिये की पर्याप्त जगह भी छोड़ें। भेजी गयी रचना मौलिक होनी आवश्यक है। रचनाओं पर निर्णय लेने में आठ से दस सप्ताह का समय लगता है अतः इस विषय पर बार–बार पत्र–व्यवहार न करें। अपनी रचना के साथ कृपया टिकट लगा एक लिफाफा अवश्य भेजें जिस पर आपका सही पता भी लिखा हो। अन्यथा रचना अस्वीकृत होने की स्थिति में वापस करने की कोई ज़िम्मेदारी हम नहीं ले सकेंगे।

पता – जीवनीय प्रकाशन,

ई-III/ २४९, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ–२२६०२०

वच

एस. ए. खान, लखनऊ

वच एक बहुवर्षीय पौधे की जड़ (कंद) है जो दो प्रकार का होता हैः–

भारतीय वच – इसे घोड़वच भी कहते हैं। यह लाली लिये हुये श्वेत होती हैं इसीलिये इसे अरुण वंच भी कहते हैं, यह झुर्रीदार, खुरदुरी और गठीली होती है। इसमें गन्ध कम होती है।

खुरासानी बच – इसे बाल वच भी कहते हैं यह श्वेत, गठीली और तेजगन्ध वाली होती है इसमें कपूर जैसी गन्ध होती हैं। यह उत्तम मानी जाती है।

वच के विभिन्न भाषाओं में नाम

घोड़वचःहिन्दी : वच, घोडवच, **संस्कृत** : वचा, उग्रगंधा, **अंग्रेजी** : स्वीट फैग या सेज, **बंगला** : बच, **पंजाबी** : वर्च, वरच, **मराठी** : वेखन्ड, **लैटिन** : एकोरस कैलेमस

खुरासानी वच –हिन्दी : बाल वच, सफेद वच, मीठी वच, दूधिया वच, **संस्कृत** : श्वेत वचा, हेमवती वचा, पारसीक वचा, **फारसी** : सोसन जर्द, **नैपाली** : सतुआ, **बंगला** : शादावच, **मराठी** : बाल वेखन्ड, **गुजराती** : खुरासानी वच, बाल वच, **लैटिन** : पेरिय पॉलिफाइल

वच के गुण (घोड़ वच) – इसका रस कटु और तिक्त होता है। वीर्य उष्ण व यूनानी के अनुसार गरम खुश्क है। विपाक कटु होता है।

दोषशामक गुण – यह वातकफ शामक है।

औषधीय गुण

आम दोष को पचाने वाली अग्नि को बढ़ाने वाली, स्वर व वाणी के लिये उत्तम, वमनकारक, मेध्य, मिरगी, उन्माद, वातकफज उदरशूल, कब्ज व गैस नाशक तथा मलों का शोधन करने वाली, लेखन वात और कफ के रोगों का नाश करने वाली, वादी अर्श में लाभदायक, शीत को हरने वाली, बेहोशी को दूर करने वाली और रेचक होती है।

मात्रा : १/२ से १ ग्राम

वच के औषधीय उपयोग

- बच्चों के हकलाने या तुतलाने में इसका चूर्ण आयु के अनुसार २५० मिलीग्राम से ५०० मिली ग्राम तक मधु के साथ चटाते हैं। लगातार २–३ महीने प्रयोग करने पर लाभ दिखता है।
- जुकाम, खाँसी, टॉसिल शोथ, गूंगापन गले का बैठ जाना, आदि वाकफज रोगों में वच का चूर्ण मधु के साथ १ से २ ग्राम की मात्रा में मधु के साथ दिन में दो बार चाटना चाहिये।
- चेहरे का रंग साफ करने या झाँई आदि चेहरे के दाग मिटाने के लिये अकेले या हल्दी, चन्दन, लोध्र, जटामांसी, समुद्रफेन, सरसों आदि में मिलाकर पीस कर लेप के रूप में प्रयोग की जाती है।
- उदर रोगों, अग्निमान्द्य में तथा वातज रोगों में वासादि चूर्ण के रूप में लाभदायक है

वचादि चूर्ण – वच, मुलेठी, सेंधानमक, हरड़ छोटी, सोंठ, मिरच, पीपल छोटी, अजमोदा, जीरा और अतीस समान भाग लेकर चूर्ण कर लें ३ से ६ ग्राम गरम जल या मट्ठे या दही से लें दिन में दो बार।

वमन कराने के लिये – ५ ग्राम वच चूर्ण व १० ग्राम सेंधा नमक १/२ लीटर पानी में मिलाकर एक साथ पिला देते हैं जिससे वमन होकर आमाशय में एकत्र कफ का निर्हरण व शोधन हो जाता है और कफज रोग तथा दमा में लाभ होता है।

मस्तिष्क रोगों – जैसे याददाश्त कम होना, मिर्गी, हिस्टीरिया आदि में वंच चूर्ण को जटामासी, ब्राह्मी व शंख पुष्पी चूर्ण के साथ स्वर्ण भस्म मिलाकर देना चाहिये। कई महीना भस्म लगातार देने पर लाभ मालूम पड़ेगा।

अतीस

वैद्य एस० ए० खान, लखनऊ

यह एक प्रकार का कन्द है। इसका पौधा दो से चार फुट ऊंचा होता है। इसकी जड़ (कन्द) शंकु के आकार की होती है जो ऊपर से मटमैली भूरी व अन्दर से सफेद पिट्ठीदार होती है। यह विष वर्ग वत्सनाभ वर्ग की होती है तथा इसका नाम अतिविषा है फिर भी यह विषैली नहीं होती। इसमें घुन बहुत जल्दी लग जाते हैं। अतः इसको घुन प्रिया भी कहते हैं। इसमें कोई गन्ध नहीं होती परन्तु स्वाद अत्यन्त कड़ुवा होता है। यह ताजी, छिद्र रहित घुन रहित लेना चहिए। जब कोई औषधि योग बनाना हो तभी वांछित मात्रा में ही खरीदना चाहिए। क्योंकि बहुत पहले से खरीद कर रखने या शेष रहने पर घुन कर बेकार हो जाती है।

अतीस के भाषावार नाम

हिन्दी : अतीस, **संस्कृत** : अतिविषा, **गुजराती** : अतिविष, **पंजाबी** :पतीस, **तमिल** : विदयम्, **मराठी** : अतिविषा, **तेलुगू** : अतिवासा, **अंग्रेजी**: इन्डियन अतीस, **बंगला**: आतईच, **लैटिन** : एकोनाइटम हेटरोफाइलम

अतीस के गुण

इसका रस तिक्त, वीर्य उष्ण तथा विपाक कटु होता है। यह कफ पित्त शामक होता है। इसकी मात्रा एक से तीन ग्राम है

औषधीय गुण

यह जठराग्नि वर्धक, पाचक, आम पाचक, अपच के कारण उत्पन्न वमन को नष्ट करने वाला, ग्रहणी दोष को नष्ट करने वाला और कास तथा वात कफ शामक होता है। यह बच्चों के लिए अत्यन्त उपयोगी है। यह आम दोषों का पाचन करता है। बढ़े हुए या कुपित सभी दोषों को हरता है। बच्चों के खांसी, सर्दी, जुकाम, दस्त, वमन, उदरशूल आदि सभी रोगों में हितकारी है।

औषधीय उपयोग

बच्चों के रोगों में बाल चातुर्भद्र के रुप में लिया जाता है। इसके लिए अतीस, काकड़ाश्रंगी, सोंठ व नागरमोथा बराबर-बराबर मात्रा में लेकर कूट छानकर चूर्ण बना लेते हैं। इसे २५० मि० ग्रा० से एक ग्राम तक आयु के अनुसार बच्चों को मधु के साथ देते हैं। अदरक के रस के साथ भी दे सकते हैं।

अतीस के एकल औषधि प्रयोग

अग्निमांद्य व आम दोष में : इसे एक से दो ग्राम की मात्रा में शुन्ठी चूर्ण समभाग मिलाकर गर्म पानी से प्रातः शाम देना चाहिए।

जुकाम या खांसी में एक से दो ग्राम अतीस चूर्ण दो तीन ग्राम वासा अडूसा के पत्तों के चूर्ण या वासा मूलत्वक जड़ की छाल चूर्ण एक ग्राम के साथ देना चाहिए या एक ग्राम घी में भूने गये हल्दी चूर्ण के साथ मधु से देना चाहिए।

यकृत दोष या रक्त दोष में : एक ग्राम की मात्रा में समान भाग रसौत के साथ गरम जल से देना चाहिए।

बुखार में एक से दो ग्राम की मात्रा में गरम जल से दें।

अतिसार या दस्त में एक से दो ग्राम अदरक २ से ५ ग्राम मिलाकर मट्ठे या गरम पानी से दें।

पांडु रोग में आधा ग्राम अतीस चूर्ण को २५० मि० ग्रा० हरा कसीस के साथ मधु या गोमूत्र के साथ दें।

आवश्यकता है

लखनऊ और कानपुर क्षेत्र के लिए प्रचारकों की जो घर-घर जाकर जीवनीय पत्रिका के ग्राहक बना सकें और पत्रिका व जीवनीय सोसाइटी के अन्य प्रकाशनों की बिक्री हेतु घर-घर जाकर सम्पर्क कर सकें। प्रचारकों को दैनिक वेतन व बिक्री पर आकर्षक कमीशन देय होगा।

गर्मी की छुट्टियों में विद्यार्थियों के लिये भी यह सुनहरा अवसर है।

शीघ्र सम्पर्क करें।

सचिव
जीवनीय सोसाइटी
ई-III/249, सेक्टर-एच, अलीगंज, लखनऊ
दूरभाष : 77568

गन्ने का रस

डॉ. प्रकाश कुमार 'आलोक' सहरसा (बिहार)

गुड़, खांडसारी, चीनी जैसी चीज जिस वस्तु से तैयार होती होगी, भला वह खुद कितनी मीठी होगी? जी हां, हम गन्ने के रस की बात ही कर रहे हैं। सिर्फ मिठास में ही नहीं, बल्कि स्वास्थ्य प्रदायक गुणों के लिहाज से भी गन्ने का रस उपरोक्त चीजों से बाजी मार ले जाता है।

आयरन, कार्बोहाइड्रेटस, विटामिन्स तथा खनिज लवणों से समृद्ध गन्ने का रस रक्ताल्पता, पीलिया, दृष्टिक्षीणता और पैत्तिक रोगों में फायदेमंद है। इसका आसानी से पचने वाला कार्बोहाइड्रेट रक्त में घुल कर तुरन्त शक्ति प्रदान करने में समर्थ है। आयुर्वेद के अनुसार गन्ने का रस मधुर, शीतल, स्निग्ध, बृंहण और वृष्य (शुक्रवर्द्धक) होता है। यह प्यास, जलन व पेशाब होने की तकलीफ में सहायता और प्रकुपित पित्त को शांत करता है।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान ने भी इसे एक स्वास्थ्यवर्धक पेय के रूप में स्वीकार किया है।

औषधीय प्रयोग

अम्लपित्त – गन्ने के रस में आंवले का रस मिलाकर दिन भर में तीन बार पीने से अम्लपित्त के रोगी काफी राहत महसूस कर सकते हैं।

रक्ताल्पता – गन्ने का रस नित्य सेवन करना और इसी के रस में चावलों की खीर बना कर दो माह तक खाने से लोहे की कमी वाले एनीमिया या रक्ताल्पता में निश्चित रूप से लाभ होता है।

मूत्रावरोध – गन्ने के ताजे रस में डाभ (कच्चे नारियल का पानी) मिलाकर पीते रहने से मूत्र की रुकावट दूर होती है और पेशाब खुल कर आने लगता है।

शुक्रवर्द्धन हेतु – गन्ने के एक गिलास रस में बरगद का दूध १० बूंद मिलाकर पीने से वीर्य की वृद्धि होती है और उसकी तरलता दूर होती है।

अजीर्ण एवं अफारा – गन्ने के रस में नींबू और अदरक का रस तथा काला नमक मिला कर पीना फायदेमंद होता है।

उपरोक्त रोगों के अतिरिक्त गन्ने का रस सूजाक, रक्तातिसार, वमन, कब्जियत, पेप्टिक अल्सर आदि में भी अच्छे परिणाम देता है।

मधुमेह, पीनस, आंत्रकृमि के रोगियों और कफ प्रकृति वाले लोगों को गन्ने के रस का सेवन नही करना चाहिए।

गन्ने में क्या होता है ?

तत्व	प्रतिशत
पानी	७४.५०
राख	०.५०
रेशा	१०.००
चीनी	१४.००
नाइट्रोजनस तत्व	१४.००
वसा व मोम	०.२०
पेक्टिन (गोंद)	०.२०
मुक्त एसिड	०.०८
संयुक्त एसिड	०.१२

आलू

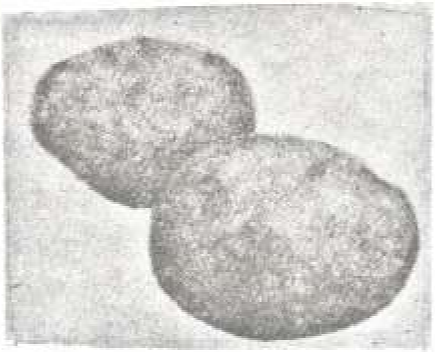

आलू दुनिया के बहुत से देशों में आहार का एक महत्वपूर्ण अंग है। इसे कई प्रकार के व्यंजनों के साथ मिलाकर पकाया जा सकता है। इसका मूल उत्पत्ति स्थान अमरीका है। भारत में यह प्रचुरता से उगाया जाता है तथा भंडारण किया जाता है। इसकी सफेद, लाल, देशी, पहाड़ी आदि कई किस्में हैं।

भाषावार नाम- हिन्दी, बंगाली, पंजाबी- आलू, **संस्कृत-** आलुक; **मराठी, गुजराती-**बटाटा, **अंग्रेजी-**पोटेटो, **लैटिन-** सोलानम ट्यूबरोसम।

रासायनिक संगठन- आलू में प्रोटीन- ०.७-४.६%, पानी-लगभग- ६३.२-८६.९%, वसा- ०.०२-०.९६%, रेशे- ०.१७-३.४८% तथा कार्बोहाइड्रेट - १३.६-३०.५% पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें विटामिन ए और बी अल्प मात्रा में तथा कैल्शियम, फास्फोरस, पोटेशियम, मैग्नीशियम, लौह आदि खनिज द्रव्य तथा अल्प मात्रा में प्रोटीन भी पाया जाता है।

गुण और उपयोग- आलू गुण में शीतल और रुक्ष है। यह मल और मूत्र की मात्रा बढ़ाता है, परन्तु वायु के अनुलोमन में सहायक नहीं है।अतः अधिक आलू खाने से पेट फूल जाता है। यह वायु को बढ़ाता है अतः श्वास-कास के रोगियों के लिये अहितकर है। यह पित्त का शमन करता है और रक्त विकारों में लाभदायक है। आलू शरीर के लिये पोषक और बलवर्धक है । इसे उबालकर या आग पर भून कर खाना उत्तम है। भूनने से इसका पाचन सरल हो जाता है। मधुमेह के रोगियों के लिये यह वर्जित है।

जल जाने पर कच्चा आलू पीस कर लगाना बहुत लाभदायक है जब लगाया आलू सूखने लगे तो उसे आसानी से हटाकर ताजा पीसा आलू फिर लगा दें। इस प्रक्रिया से जले स्थान पर फफोले नहीं पड़ते तथा जलन शांत होती है।

जीवनीय में विज्ञापन देकर अपना संदेश हजारों पाठकों तक पहुंचायें

पत्रिका के पाठकों में स्वास्थ्य कार्यकर्ता, डाक्टर, वैज्ञानिक, वकील, शिक्षक और गृहणियां आदि हैं। पत्रिका स्वैच्छिक संगठनों, सरकारी कार्यालयों और प्रौढ़ शिक्षा विभाग के जन शिक्षण निलयमों तथा ग्राम विकास संस्थान के पुस्तकालयों में भी मंगाई जाती है।

विज्ञापन दरें (रूपये में)

स्थान	प्रति अंक	छमाही (३ अंक)	वार्षिक (६ अंक)
पिछला आवरण (रंगीन)	८,०००	२०,०००	३५,०००
अंदरूनी आवरण (रंगीन)	६,०००	१५,०००	२५,०००
अंदरूनी आवरण (श्याम-श्वेत)	५,०००	१२,०००	२०,०००
अंदर के पृष्ठ (रंगीन)	५,०००	१२,०००	२०,०००
अंदर के पृष्ठ (श्याम-श्वेत)	३,०००	८,०००	१४,०००
अंदर का आधा पृष्ठ	२,०००	५,०००	९,०००
अंदर का चौथाई पृष्ठ	१,०००	२,५००,	५,०००

अंग्रेजी व हिन्दी दोनों भाषाओं के संस्करणों में विज्ञापन एक साथ देने पर २०% छूट दी जाएगी।

विज्ञापन सामग्री :
रंगीन-पाजटिव स्कैनिंग (डिजाईन सहित)
श्याम-श्वेत- आर्ट पूल/ब्रोमाइड/निगेटिव

विज्ञापन कार्यालय : **ई-III/२४९, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ-२२६०२० फोन-०५२२-७७५६८**

वासावलेह

वैद्य बी. पी. जैन, लखनऊ

वसंत की शुरुआत होते ही अड़ूसा या वासा के हरे-हरे पौधों में सफेद-गुलाबी फूलों के गुच्छे आने शुरू हो जाते हैं। सड़कों के किनारे खेतों की मेड़ों पर या ऊसर जमीन में भी अड़ूसा के पौधों की कतारें देखी जा सकती हैं। यह पौधे घरों के पिछवाड़े क्यारियों में भी उगाए जा सकते हैं। यद्यपि इसके हरे पत्तों का रस विशेष गुणकारी है और यह पौधा बारहों महीने हरा-भरा रहता है, इस मौसम में इस पौधों का अवलेह बना कर रख सकते हैं जो तत्काल उपलब्ध हो सकता है और विशेष गुणकारी है।

इसके निर्माण के लिए निम्न द्रव्यों की आवश्यकता है :

वासा पंचांग (पूरा पौधा)	**१**	**किलोग्राम**
गुड़ अथवा चीनी	**१**	**किलोग्राम**
घी	**१२५**	**ग्राम**
पीपल (छोटी) का चूर्ण	**१२५**	**ग्राम**

निर्माण विधि

वासा के हरे पौधे इस प्रकार उखाड़ें कि कुछ जड़ अवश्य अंदर ही शेष रह जाए। ऐसे एक दो पौधों से काफी मात्रा में वासावलेह बन सकता है। पौधों को अच्छी तरह पानी से साफ कर लें। वासा पंचांग के छोटे-छोटे टुकड़े कर उसे किसी कड़ाही अथवा भगोने में रखकर उसमें १६ गुना जल मिलाकर धीमी-धीमी आग में पकायें। १ किलोग्राम वासा पंचांग में १६ किलोग्राम पानी मिलाते हैं। पकते-पकते जब जल की मात्रा लगभग १ किलोग्राम रह जाय तो उसे उतार कर छान लें। इस छने हुये काढ़े में १ किलोग्राम चीनी अथवा गुड़ मिलाकर उसकी चाशनी बनायें। पुनः चाशनी में १२५ ग्राम घी डालकर उस समय तक गाढ़ा करें जब तक चाशनी की एक बूंद को किसी ठण्डे बर्तन में डालने से वह गाढ़ा होकर चाटने लायक न हो जाय। अब बर्तन को आग पर से उतार लें। जब वह गाढ़ा होने लगे तब उसमें छोटी पीपल का १२५ ग्राम चूर्ण मिलाकर किसी स्वच्छ बर्तन में या डिब्बे में रख लें। यही वासावलेह है।

वैसे अड़ूसे के फूलों का गुलकंद भी बनाया जा सकता है। इसके फूलों का शर्बत भी बना सकते हैं जो गर्मी भर उपयोग में आ सकता है।

उपयोग

यह अवलेह सभी प्रकार की खांसी व सांस की तकलीफों में विशेष लाभकारी है। इसके उपयोग से सूखी खांसी में भी बलगम निकल जाने से आराम मिलता है। आयुर्वेद में इसका उपयोग टी.बी. की बीमारी तक में किया जाता है।

मात्रा

बच्चों में - एक चम्मच दिन में दो बार।

बडों में : दो चम्मच दिन में तीन बार।

इसका सेवन गर्म दूध अथवा गुनगुने पानी के साथ लाभ होने तक करना चाहिए।

बच्चों की घरेलू चिकित्सा

बच्चों के रोगों की जड़ी बूटी चिकित्सा आदि काल से प्रचलित है। बाबा श्रीनाथ शिक्षा संस्थान की ओर से श्री हरि प्रताप जी द्वारा उत्तर प्रदेश के एक बड़े मैदानी भाग में प्रचलित परंपराओं का संकलन किया गया है। जन-साधारण के लाभार्थ कुछ नुस्खे इस संकलन से दिये जा रहे हैं।

दांत निकलना -मसूढ़ों पर शहद मलने से दांत सुगमतापूर्वक निकल आते हैं।

काली खांसी - काली बकरी का दूध १०० से २५० ग्राम तक आयु के अनुसार पिलाते रहने से काली खांसी में लाभ होता है।

खांसी - छोटी पीपल का चूर्ण एक ग्राम शहद में मिलाकर दिन में दो तीन बार चटायें।

अड़ूसे के पत्तों को जला कर उसकी राख शहद में मिला कर चटाने से लाभ होता है।

पसलियां चलना-आम की गुठली, पान की छाल और सेंधा नमक पीसकर शहद में मिलाकर चटायें।

सूरजमुखी का तेल सीने, पीठ और पसलियों पर मलें।

कुकरौंधे का अर्क गर्म करके पसलियों पर लगायें तथा २-४ बूंद मां के दूध में मिलाकर पिलायें।

सूखा रोग-पथरचटा की जड़ों का रस ६ ग्राम देने से लाभ होता है।

एक माह के बालक को मछली के तेल की मालिश करें यदि इससे बड़ा हो तो २-४ बूंद पिलाने से बहुत लाभ होता है।

लटजीरा की जड़ और दो कालीमिर्च पीस कर पिलायें। यह प्रयोग चार दिन करें।

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक का नाम - चिल्ड्रेन ऑन दि, फ्रंटलाइन
प्रकाशक - यूनिसेफ, यूनिसेफ हाउस, युनाइटेड नेशन्स प्लाज़ा, न्यूयार्क

यह दक्षिण अफ्रीका (तंजानिया, जांबिया, अंगोला, मलावी, मोजंबिक, जिंबाब्वे, बोत्स्वाना, लेसोथो और स्वाजीलैंड) और दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद, अस्थिरता और बच्चों के विरुद्ध युद्ध की स्थिति पर एक रपट है। इसमें प्रमुख रूप से अंगोला, मोजंबिक़, नामीबिया तथा दक्षिण अफ्रीका में बच्चों की दुर्दशा को उजागर किया गया है।

रपट का उद्देश्य रंगभेद संघर्ष के परिणामों का अभिलेखन, शिशुओं और बच्चों की मृत्यु-दर पर बड़े लोगों के टकरावों के प्रभाव का मूल्यांकन तथा बच्चों और स्त्रियों के जीवन पर उसके प्रभावों का चित्रण है। इसमें उन देशों में बच्चों की आवश्यकताओं के प्रति ग़ैर सरकारी संगठनों की अनुक्रियाओं का भी विशेष उल्लेख है। इसमें उन क्षेत्रों में तत्काल उठाये जाने योग्य कदमों का भी उल्ल्लेख है।

रपट के मुताबिक़ अंगोला और मोज़ंबिक़ में १९८० ई. से अब तक लगभग ८,५०,००० ऐसे शिशुओं और बच्चों की मृत्यु हुई है जिन्हें बचाया जा सकता था। संप्रति उन देशों में शिशुओं और बच्चों की मृत्युदर, दुनिया भर में सर्वोच्च है। दक्षिण अफ्रीका और नामीबिया में भी स्थिति इससे कुछ विशेष अच्छी नहीं। विश्लेषण से सिद्ध होता है कि सूखा, बाढ़, धनाभाव, कारोबार की गिरती स्थिति, बढ़ता हुआ विदेशी क़र्ज तथा अतीत की गलत घरेलू नीतियों के कारण बच्चों का स्वास्थ्य और कल्याण कुप्रभावित हुआ है। लेकिन मुख्य अभियुक्त हैं युद्ध और आर्थिक दबाव, जिनसे राष्ट्रों के सामाजिक ताने-बाने की भी क्षति हुई है। स्वास्थ्य और शिक्षा सुविधाओं का खात्मा, सामूहिक विस्थापन, अन्न उत्पादन की कमी और स्वास्थ्य और पानी के सरकारी आय-व्ययक में कटौती इन मौतों के कारण हैं।

गरीबी की मार सबसे ज्यादा बच्चों पर पड़ी है। जब कोई राष्ट्र कर्ज के भार से पंगु हो जाता है तो सबसे पहले प्रायः शिक्षा, स्वास्थ्य और शिशु कल्याण कुप्रभावित होते हैं। जब जीवन का स्तर गिरने लगता है तो कुपोषण और शिशु मृत्यु-दर की वृद्धि होती है।

वर्तमान अवस्था में सुधार के लिए प्रस्तावित कदमों में सर्वोपरि हैं : (१) प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं की स्थापना : बच्चों के स्वास्थ्य और वृद्धि का अनिवार्य प्रशिक्षण, औषधों और टीकों की आपूर्ति, (२) खाद्य की आपूर्ति, (३) स्वच्छ पेय जल की व्यवस्था और (४) छोटी उम्र के पीड़ितों के पुनर्वास के कार्यक्रम।

यह रपट आंखों में अंजन का काम करने वाली है और दक्षिणी अफ्रीका में बच्चों की दीन दशा का मार्मिक चित्रण करती है। आशा है कि अंतर्राष्ट्रीय एजेन्सियां ओर गैर-सरकारी संगठन आगे आकर न केवल दक्षिणी अफ्रीका में बल्कि सभी विकासशील देशों में, जहाँ भविष्य में ऐसी समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं बच्चों के कल्याण के कार्यक्रमों को मूर्त रूप देंगे।

जब बच्चा रोने लगे

जो न नाचना जानता हो और न नाचना चाहता हो, उसे भी कभी-कभी छोटे बच्चों को चुप कराने के लिए नाचना पड़ जाता है। बच्चे को प्रसन्न करने के लिए बच्चे को लेकर नाचना रोते बच्चे को चुप कराने का एक बड़ा ही सफल साधन है। नाचने की कला सीखने का प्रयास न करे-चाहे जैसे उल्टे सीधे नाचे, बच्चे को आराम मिलेगा।

सभी बच्चे रोते है। पर यदि आप यह मानते है कि उनको स्तन-पान कराने, कंधा बदलने, उठा लेने या झुलाने के परम्परागत तरीके गलत हैं तो यह आपकी भूल है। आप बच्चे को चुप कराने की विधि से अनभिज्ञ हैं।

बच्चे को चुप कराने के उपाय

पीठ रगड़िये: रोते बच्चे को चुप कराने के लिए बच्चे की पीठ हाथ से रगड़िये। यह निवारक दवा की तरह कारगर चीज है। साथ में पीठ पर हल्की थपकी दें। बच्चा रोना बंद कर देगा। रोते बच्चे को गोद में बिठाकर पीठ सहलाएँ। रोते बच्चे अपना शरीर इतना कड़ा कर लेते हैं कि मालिश करना कठिन हो जाता है। पीठ रगड़ने से शरीर का तनाव कम हो जाता है।

पेट दर्द की आशंका में

पेट को गरम पानी से सेंकने से पेट के दर्द में लाभ पहुंचेगा। और पेट का दर्द चले जाने पर बच्चा चुप हो जायेगा।

एक तौलिये को मोड़कर तकिये का रूप दे उसे पेट पर रोल करे। इससे भी बच्चे को आराम मिलेगा और वह रोना बंद कर देगा।

लपेटना

अति प्राचीन काल से रोते बच्चों को कपड़े में लपेट देने की प्रथा रही है। सही लपेट से बच्चों को चुप होते देखा गया है। ६ सप्ताह तक के बच्चों के लिए यह बड़ी ही सफल विधि सिद्ध हुई। लपेटने से बच्चे तत्काल रोना बंद कर देते हैं।

पौष्टिक व्यंजन

श्रीमती वन्दना टंडन, लखनऊ

सन्तुलित आहार बच्चों के शारीरिक व मानसिक विकास के लिए बहुत आवश्यक है। यह स्वस्थ मनुष्य के विकास की नींव बनाने में सहायक होता है। सन्तुलित आहार में उन सभी पोषक तत्वों का होना आवश्यक है जिनकी आवश्यकता बच्चों के विकास में है जैसे विटामिन, प्रोटीन, वसा, लौह तत्व आदि। बच्चे के शारीरिक विकास और उसकी क्रियाओं में वृद्धि के साथ पोषक तत्वों की आवश्यकता भी बढ़ती जाती है। इसलिए उसको दिन में चार बार जो खाना दिया जाए वह उसकी उम्र व विकास को ध्यान में रख कर ही दिया जाए। बच्चों को दिन में किसी भी समय कुछ और हल्का खाना दिया जा सकता है। इस कारण यहाँ पर कुछ आसानी से तैयार और आवश्यक तत्वों से भरपूर व्यंजनों के बनाने के तरीके दिए जा रहे हैं।

सूजी की खीर

सामग्री :

सूजी	–	२० ग्राम
दूध	–	१०० मि.ली.
शक्कर	–	१० ग्राम
घी	–	१० ग्राम

बनाने की विधि : सबसे पहले किसी खुले बर्तन या कड़ाही में घी डालकर सूजी भून ले। सूजी को भूरा होने तक चलाते रहें। अब इसमें शक्कर और दूध मिला दीजिए और ५–१० मिनट तक गर्म कर लीजिए।

सूजी की खीर शिशुओं को ऊर्जा देती है क्योंकि इसमें पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन व विटामिन हैं।

बेसन की बर्फी

सामग्री :

बेसन का आटा	–	५५ ग्राम
गेहूं का आटा	–	५५ ग्राम
गुड़ के टुकड़े	–	२० ग्राम
घी	–	२० ग्राम

बनाने की विधि : बेसन व गेहूं के आटे को घी में भून लें। अब एक खुले बर्तन में थोड़ा पानी डालकर उसमें गुड़ के टुकड़े डाल तब तक चलाते रहिए जब तक कि उसकी चिपचिपाहट एक तार की न हो जाए। इसके बाद भुना हुआ बेसन गेहूं का आटा गुड़ के मिश्रण में डाल दीजिए और भली भांति मिला दीजिए। एक थाली या प्लेट में थोड़ी सी चिकनाई लगाकर इस पेस्ट को उसमें फैला दीजिए और थोड़ी देर सूखने के लिए छोड़ दीजिए। जब ठंडी हो जाए तब अपने मनपसन्द आकार के टुकड़े काट कर रख लीजिए। यह बर्फी एक सप्ताह तक खराब नहीं होती है।

यह बर्फी बच्चों को खेलने के लिए ऊर्जा देती है ओर इससें प्रोटीन व लौह तत्व की भी प्राप्ति होती है।

फलयुक्त कस्टर्ड

सामग्री

सेब	–	एक (१)
केला	–	२
संतरा	–	१
दूध	–	२५० मि.ली.
शक्कर	–	२० ग्राम
कस्टर्ड पाउडर	–	डेढ़ चम्मच

बनाने की विधि : सबसे पहले दूध को किसी बर्तन में उबाल लें। इसके बाद थोड़े से ठंडे दूध में कस्टर्ड पाउडर मिला कर इस दूध को उबले हुए दूध में मिला दें और तब तक चलाते रहें जब तक दूध गाढ़ा न हो जाए। अब ठंडा होने के बाद धुले, कटे फलों को इसमें मिला दें।

इस प्रकार से बनाया कस्टर्ड बच्चे की विटामिनों व खनिज, विशेषकर लौह तत्व की कमी को पूरा करता है। इसके अतिरिक्त इससे प्रोटीन, विशेष रूप से विटामिन 'ए' व कैल्शियम मिलता है। यह सभी तत्व बच्चे के विकास में सहायक हैं।

खमन ढोकला

सामग्री

चने का आटा	–	३० ग्राम
चने की दाल	–	३० ग्राम
मट्ठा	–	१४० मि.ली.
तेल	–	२ मि.ली.
सरसों का तेल	–	२ ग्राम
हल्दी (पिसी)	–	१ ग्राम
अदरक (कटी)	–	२ ग्राम
हींग	–	१ ग्राम
धनिया की पत्ती	–	२ ग्राम
नमक	–	एक चुटकी

बनाने की विधि: चने की दाल रात भर भिगोने के बाद उसको पीस लीजिए। इसके बाद इसमें बेसन मट्ठा और थोड़ा खाने वाला सोडा मिलाकर करीब १०–१२ घंटे के लिए रख दीजिए। अब इस मिश्रण में थोड़ा नमक, हल्दी और कटे हुए अदरक के टुकड़े मिला कर भाप में लगभग १०–१५ मिनट तक पकाना चाहिए जब तक कि ढोकला ठीक से फूल न जाए।

अब एक खुले बर्तन में सरसों के दाने व हींग तेल में भून लें और उसको कटे हुए ढोकले के टुकड़ों पर डाल दें। सजाने के लिए धनिया की पत्ती ली जा सकती है।

औषधीय पौधों पर प्रशिक्षण

लोक स्वास्थ्य परम्परा संवर्धन समिति ने राष्ट्रीय वृक्ष उत्पादक सहकारी फेडरेशन के सचिवों और स्वयंसेवकों को औषधीय पौधों के बारे में प्रशिक्षण देने हेतु दिनांक २८ से ३० मार्च'९५ तक कर्नाटक के कोलार जिला में एक कार्यशाला का आयोजन किया। इसमें कर्नाटक के कोलार और आन्ध्र प्रदेश के मदनापल्ली से आए १५ लोगों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया।

प्रशिक्षण के पहले दिन प्रशिक्षुओं को ६० औषधीय पौधों के चित्र दिखा कर उन्हें पहचानने को कहा गया। प्रशिक्षुओं ने उनके स्थानीय नाम तथा उनके प्रचलित उपयोग बताये जब कि प्रशिक्षकों ने इन पौधों के वानस्पतिक नाम, संस्कृत भाषा में नाम तथा आयुर्वेद के अनुसार उनके गुण और उपयोग बताये।

प्रशिक्षण के दूसरे दिन प्रशिक्षुओं को कोलार के लगभग ४० किलोमीटर क्षेत्र में भ्रमण करा कर स्थानीय औषधीय पौधों की पहचान तथा इनसे स्वरस, चूर्ण, क्वाथ आदि बनाने के तरीकों के बारे में बताया।

प्रशिक्षण के अन्तिम दिन प्रशिक्षुओं को बंगलौर विश्वविद्यालय में स्थित 'धनवन्तरि वन' में ले जा कर उन्हें पौधे लगाने की तकनीकों, जैसे पौध तैयार करना, कलम बांधना आदि सिखाया गया। दोपहर बाद खुले अधिवेशन में तीन दिन के प्रशिक्षण कार्यक्रम के बारे में चर्चा की गई। लो.स्वा.प.सं.स. कोयम्बटूर के वैद्य के. पी. ससि और सी.आई.के.एस. मद्रास के वैद्य के.एम. श्याम सुन्दर इस कार्यक्रम के प्रशिक्षक थे।

खमन ढ्रोकला आसानी से पचने वाला तथा ऊर्जा व प्रोटीन देने वाला खाद्य पदार्थ है।

संदेश

सामग्री

पनीर	–	१०० ग्राम
शक्कर	–	२० ग्राम
छोटी इलायची	–	२

बनाने की विधिः सबसे पहले पनीर में पिसी हुई शक्कर मिला कर अच्छी तरह मसल लें। भली प्रकार मिलाने के बाद इससे छोटे गोल आकार के लड्डू बना कर बीच से दबा दें। अब इस दबे हुए हिस्से में थोड़ा-थोड़ा पिसी हुई इलायची का पाउडर लगा दें। इसके बाद किसी बर्तन में पानी उबाल लें और उसके ऊपर जाली में संदेश रखकर ५-१० मिनट तक भाप दें। अब संदेश किसी को भी खाने के लिए दे सकते हैं।

संदेश एक आसानी से बनाई जाने वाली मिठाई होने के साथ इससे बच्चे को प्रोटीन भी पहुंचता है।

फ्रूट डिलाइट

सामग्री

केला	–	२
सेब के टुकड़े	–	२५ ग्राम
पपीता (टुकड़े)	–	२५ ग्राम
संतरा का गूदा	–	२५ ग्राम
अंगूर	–	२५ ग्राम
आम	–	२५ ग्राम
नीबू	–	१
शक्कर पाउडर	–	५ ग्राम

बनाने की विधिः सब फलों को एक साथ मिला कर उसमें नीबू का रस व पिसी हुई शक्कर मिला दीजिए। यह एक आसानी से बनने व पचने वाली खाने की वस्तु है। इसके खाने से बच्चे को विटामिन और लौह तत्व मिल जाता है। आम और पपीते में विटामिन 'ए' होता है जोकि बच्चों की अस्थि व नेत्र ज्योति में सहायक होता है। संतरा, अंगूर और नीबू से विटामिन 'सी' मिलता है। *यह प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक होता है।*

सब्जी का सूप

सामग्री

पालक	–	१०० ग्राम
गाजर	–	१०० ग्राम
टमाटर	–	५० ग्राम
नमक	–	एक चुटकी
काली मिर्च	–	एक चुटकी
मक्खन	–	५ ग्राम

बनाने की विधि : सब सब्जी को धोकर उबाल लें। इसके बाद सबको अच्छी तरह मसल कर छान लें। छान कर निकाले मिश्रण में नमक व काली मिर्च पाउडर मिला कर एक बार फिर से उबाल लें। बच्चे को पीने के लिए देने से पहले इसमें थोड़ा सा मक्खन मिला दें।

इस प्रकार से बने सूप में लौह तत्व व अन्य खनिज प्राप्त होते हैं।

उ० प्र० आवास एवं विकास परिषद

प्रदेश की गरीब जनता को घर उपलब्ध कराने वाली अग्रणी संस्था

परिषद की वर्तमान उपलब्धियां

१. परिषद द्वारा अब तक १,८०,४०१ नग कुल सम्पत्ति जनता के लिये निर्मित की जिनमें १,२६,५८२ नग दुर्बल आय वर्ग तथा अल्प आय वर्ग के लिए हैं।

२. परिषद का कार्य क्षेत्र १३० नगरों में है।

३. परिषद द्वारा ८७२३० एकड़ भूमि विकसित की गयी है।

४. परिषद द्वारा १२,६२४ एकड़ भूमि अधिग्रहीत की गयी है।

परिषद द्वारा आम जनता को दी जाने वाली सुविधायें

१. परिषद व हुडको के सहयोग से निर्मिती केन्द्रों की स्थापना की गयी है जिनको जन आन्दोलन के रूप में चलाया जायेगा।

२. निर्मिती केन्द्रों के माध्यम से जनता को को सस्ते मजबूत तथा उपयोगी घर बनाने की तकनीकी सलाह मुफ्त दी जायेगी।

३. निर्मिती केन्द्रों के माध्यम से भवन निर्माण सामग्री सस्ती दरों पर उपलब्ध करायी जायेगी।

४. प्रदेश की जनता श्रमिकों एवं कारीगरों को इन केन्द्रों में मुफ्त प्रशिक्षण दिया जायेगा।

५. प्रशिक्षित कारीगरों एवं श्रमिकों को अपने निर्मिती केन्द्र खोलने के लिए तकनीकी सहायता एवं वित्तीय संस्थाओं तथा शासन से अनुदान उपलब्ध कराने में सहयोग दिया जायेगा।

६. समाज के आश्रयहीन व्यक्तियों की सहकारिता समिति बनवायी जायेगी ताकि वे संगठित होकर अपना घर अपनी आवश्यकता के अनुसार स्वयं बना सकें।

७. घर बनाने के लिये वित्तीय संस्थाओं जैसे–हुडको, आवास संघ, परिषद व अन्य से ऋण उपलब्ध कराने में सहयोग दिया जायेगा।

हरिश्चन्द्र
आवास आयुक्त

जीवनीय विज्ञान पहेली

हमारे पिछले अंक में प्रकाशित पहेली पर प्राप्त प्रतिक्रियाओं से उत्साह बढ़ा है हमें और अधिक शुद्ध हलों की प्रतीक्षा है और हम इसको और अधिक रोचक बनाने का संकल्प करते हुए प्रस्तुत करते हैं।

प्रथम पुरस्कार : दो वर्ष तक निःशुल्क जीवनीय।

द्वितीय पुरस्कार : एक वर्ष तक निःशुल्क जीवनीय।

नियम और शर्तें

- पहेली का हल भेजने का कोई शुल्क नहीं देना होगा।
- पहेली का हल कोई भी पाठक भेज सकता है।
- पहेली का हल साधारण डाक से भेजना होगा।
- एक व्यक्ति को एक ही पुरस्कार मिल सकेगा।
- सर्वशुद्ध हल न आने पर पुरस्कार देने या न देने का अधिकार सम्पादक को होगा।
- सम्पादक का निर्णय हर स्थिति में मान्य होगा। किसी तरह की शिकायत सम्पादक से ही की जा सकेगी।
- किसी भी तरह का कानूनी दावा, कहीं भी दायर नहीं किया जा सकेगा।
- यहाँ छपे पृष्ठ को भरकर सामान्य डाक द्वारा भेजी गयी पूर्ति ही स्वीकार्य होगी।

कृपया सही का निशान ( ) उन वाक्यों पर लगायें जो सही हों। जहाँ विवरण देने के लिए कहा गया है, वहाँ विवरण भरें।

१. हेमन्त ऋतु में किन रसों का प्रयोग पथ्य है?

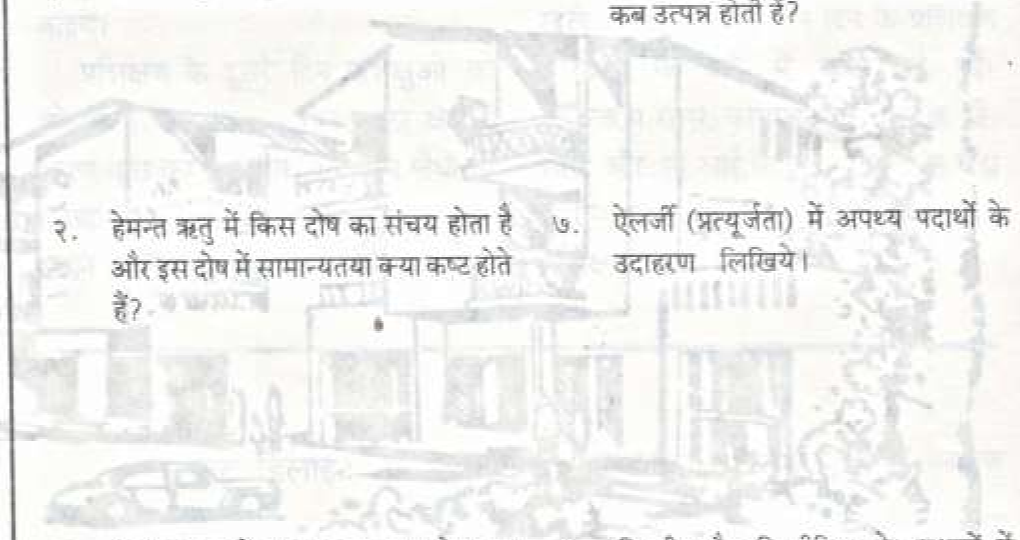

२. हेमन्त ऋतु में किस दोष का संचय होता है और इस दोष में सामान्यतया क्या कष्ट होते हैं?

३. शिशिर ऋतु में वात या वात कफ से उत्पन्न होने वाले रोगों के नाम लिखिए।

४. भोजन के समय ग्रहण किये जाने वाले रसों को आयुर्वेदीय क्रमवार लिखिए।

५. आयुर्वेदीय मतानुसार भोजन में भोज्य पदार्थों के ग्रहण का क्रम बतायें।

६. आधुनिक मतानुसार ऐलर्जी की स्थिति कब उत्पन्न होती हैं?

७. ऐलर्जी (प्रत्यूर्जता) में अपथ्य पदार्थों के उदाहरण लिखिये।

८. मिरगी और हिस्टीरिया के लक्षणों में क्या अन्तर है?

१.

२.

३.

४.

५.

६.

७.

विज्ञान पत्रकारिता से वैज्ञानिक सोच को बढ़ावा मिलेगा

लखनऊ ११.२.९५ : वैज्ञानिक विचार धारा से सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन लाया जा सकता है और इसमें विज्ञान पत्रकारिता एक महत्वपूर्ण उत्प्रेरक का काम कर सकती हैं। लेकिन साथ ही यह भी जरूरी है कि विज्ञान पत्रकारिता को सशक्त व सफल बनाने के लिए उसे पृथक स्वरूप न दिया जाये, बल्कि उसे पत्रकारिता की मुख्य धारा से जोड़ा जाये। ये विचार प्रदेश के गन्ना आयुक्त अशोक प्रियदर्शी ने आंचलिक विज्ञान केन्द्र में आयोजित विज्ञान पत्रकारिता पाठ्यक्रम का उद्घाटन करते हुए व्यक्त किये। राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद व लखनऊ विश्वविद्यालय के सहयोग से यह पाठ्यक्रम (सार्टीफिकेट कोर्स) स्वयंसेवी संस्था जीवनीय सोसाइटी द्वारा आरंभ किया जा रहा है।

श्री प्रियदर्शी ने कहा कि यद्यपि राष्ट्रीय अखबारों में अब विज्ञान पत्रकारिता को अच्छा स्थान मिल रहा है और इलेक्ट्रानिक मीडिया के क्षेत्र में भी इसका काफी विकास हुआ है। परन्तु यह अभी पत्रकारिता की मुख्य धारा से जुड़ नहीं पा रही है। विज्ञान पत्रकारिता के क्षेत्र में कार्यरत लोगों के लिए यह एक चुनौती है। उन्होंने कहा कि हमारा वैज्ञानिक ज्ञान कम है, ऐसे में मीडिया के माध्यम से हमें समाज में वैज्ञानिक सोच पैदा करनी होगी और तभी सामाजिक विकास संभव है।

इस अवसर पर लखनऊ विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. एम.एस. सोढ़ा ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में कहा कि प्रभावी विज्ञान पत्रकारिता के लिए आवश्यक है कि लक्ष्य समूह (श्रोता, पाठक, दर्शक) को ध्यान में रखा जाये। उन्होंने कहा कि अधिकतर यह देखा गया कि वैज्ञानिक पत्रकार सफलताओं को तो सामने लाते हैं, लेकिन अथक शोध प्रयासों में वैज्ञानिकों को जो दिक्कतें व असफलताएं सामने आती हैं, उनका उल्लेख नहीं किया जाता है, जिसके कारण शोध में लगे वैज्ञानिक हतोत्साहित होते हैं।

प्रो. सोढा ने कहा कि तकनीकी आयात के इस युग में विज्ञान और प्रौद्योगिकी विकास की जानकारी यदि जनसाधारण तक प्रभावी ढंग से नहीं पहुचाई गई तो जन प्रतिनिधि विज्ञान एवं तकनीकी में शोध एवं विकास के लिए आवश्यक संसाधन भी उपलब्ध करवाने में हिचकिचाएंगे इससे देश में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विकास ही नहीं वरन अस्तित्व को भी खतरा हो सकता है।

भारत में विज्ञान के इतिहास विषय पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान, नई दिल्ली के राष्ट्रीय विज्ञान, प्रौद्योगिकी एवं विकास संस्थान के प्रो. दीपक कुमार के अपने विशेष संबोधन में विज्ञान के इतिहास का उल्लेख करते हुए कहा कि ऐसा नहीं कि सालों पहले इस क्षेत्र में पत्रकारिता से लोग जुड़े नहीं थे। उन्होंने बताया कि १८४० में विज्ञान की अच्छी पत्रिकाएं निकलती थीं हालांकि यह जरुर है कि वे लम्बे समय तक जीवित नहीं रह पायीं।

इस मौके पर जीवनीय सोसाइटी के अध्यक्ष एवं एस.जी.पी.जी.आई. के प्रो.एस.आर. नाइक ने तकनीकी सम्प्रेषण पर अपने विचार रखते हुए कहा कि विज्ञान पत्रकारों को चाहिए कि विज्ञान एवं तकनीकी का संप्रेषण सही-सही हो जिसके लिए विशेषज्ञता हासिल करना महत्वपूर्ण है।

डा. एन.एन. मेहरोत्रा ने बताया कि इस विज्ञान पत्रकारिता पाठ्यक्रम का आयोजन लखनऊ में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं और सरकारी विभागों द्वारा अपने कुछ सदस्यों को प्रभावी विज्ञान संप्रेषण में दक्षता प्रदान करने को लम्बे समय से वांछित आवश्यकता की पूर्ति के लिए किया जा रहा है।

समाचार पत्र पंजीयन (केन्द्रीय), कानून, १९५६ आठवें नियम के अन्तर्गत अपेक्षित जीवनीय द्वैमासिक पत्रिका, लखनऊ, से सम्बन्धित स्वामित्व और अन्य बातों का ब्यौरा–

प्रपत्र – ४

१. **प्रकाशन का स्थान :** प्रकाश पैकेजर्स, २५७ गोलागंज, लखनऊ–१८

२. **प्रकाशन अवधि :** द्वैमासिक

३. **मुद्रक का नाम :** श्री प्रकाश नारायण भार्गव
क्या भारतीय नागरिक हैं ? : हाँ
पता – प्रकाश पैकेजर्स, २५७, गोलागंज, लखनऊ–१८

४. **प्रकाशक का नाम :** डा नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा
क्या भारत का नागरिक है ? हाँ
पता–ई–III/२४९, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ–२२६०२०

५. **सम्पादक का नाम :** डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा
क्या भारत का नागरिक है ? हाँ
पता–ई–III/ २४९, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ–२२६०२०

६. उन व्यक्तियों के नाम व पते : जो समाचार – पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों–
डा. नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा
कृते जीवनीय सोसायटी
ई–III/२४९, सेक्टर एच, अलीगंज लखनऊ–२२६०२०

मैं नरेन्द्र नाथ मेहरोत्रा, घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

डा. नरेन्द्र मेहरोत्रा

दिनांक ३१ मार्च, १९९५

(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

जीवनीय चंदे की दरें

	व्यक्तिगत (रुपये)	संस्थागत (रुपये)
वार्षिक	५०	१००
द्वैवार्षिक	९०	१८०
त्रैवार्षिक	१३०	२६०
आजीवन	५००	१०००

स्वस्थ जीवन के लिए
जीवनीय आंदोलन
के सक्रिय सदस्य बनें
जीवनीय
के पाठक बनें

जीवनीय ग्राहक चंदा अनुरोध कार्ड

कृपया मुझे एक/दो/तीन वर्ष/जीवन भर के लिये जीवनीय द्वैमासिक का ग्राहक बनाकर यह हिन्दी/अंग्रेजी पत्रिका निम्न पते पर भिजवाने का कष्ट करें। मैं चन्दे की सहयोग राशि रु.................... ड्राफ्ट (नं................ दिनांक....................)/ धनादेश द्वारा प्रेषित कर रहा हूं।

नाम : ....

पता : ....

भवदीय

पिन : ☐☐☐☐☐☐

चंदा साधारण डाकखर्च सहित है पर यदि पत्रिका रजिस्टर्ड डाक से मांगाना है तो उपरोक्त दरों में रु. ३५ प्रति वर्ष के हिसाब से और जोड़कर भेजें। चंदे की रकम ड्राफ्ट या मनीआर्डर द्वारा ही 'जीवनीय सोसाइटी, लखनऊ' के नाम से भेजें। लोस्वापसंस के सदस्यों एवं स्वैच्छिक संस्थाओं को चंदे में १० प्रतिशत की छूट मिलेगी।

चिकित्सा सेवा तथा 'प्राइवेट प्रैक्टिस'

चिकित्सकों का कारोबार एक सम्मानजनक कारोबार है तथा जब भी इसमें व्यावसायिक झुकाव बढ़ता हैं, तो सवालिया निगाहें उठ ही जाती हैं। सरकारी नौकरियों में नियुक्त डॉक्टरों द्वारा प्राइवेट प्रैक्टिस एक संवेदनशील मसला रहा है। बहरहाल, प्राइवेट प्रैक्टिस एक बढ़ता हुआ कारोबार है। इस पृष्ठभूमि में पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा पारित कानून में जब सरकारी संस्थानों के अध्यापक-डॉक्टरों की प्राइवेट प्रैक्टिस पर रोक लगाई गई तो काफी उम्मीदों व विवादों ने जन्म लिया। **'प. बंगाल स्वास्थ्य सेवा कानून', १६ मई १९९०** से लागू हुआ था। इस कानून की संवैधानिक वैधता को दो बार कलकत्ता हाईकोर्ट में और फिर सुप्रीम कोर्ट ने संविधान-सम्मत ठहराया। इस कानून का मकसद था, मेडिकल कॉलेजों की पढ़ाई में सुधार लाना तथा मेडिकल कॉलेजों से जुड़े अस्पतालों में मरीजों की देखभाल में बेहतरी व प्रशासन में चुस्ती लाना।

सरकार का दृष्टिकोणः सरकार की राय है कि राज्य में चिकित्सा शिक्षा का स्तर गिरा है, क्योंकि चिकित्सा अध्यापक अपना अधिकांश समय प्राइवेट प्रैक्टिस में लगाते हैं और अध्यापन-कार्य व अस्पताल-ड्यूटी की उपेक्षा करते हैं। लिहाजा प्राइवेट प्रैक्टिस पर प्रतिबंध लगाना ही होगा। विधान-सभा की स्वास्थ्य व परिवार कल्याण समिति की रपोर्ट के अनुसार "मेडिकल कॉलेजों का कामकाज निकृष्टतम स्तर तक गिर चुका है", और "यह गौरतलब है कि अधिकांश अध्यापक व प्राचार्य इस बात से सहमत थे कि चिकित्सा-शिक्षा में गिरावट, सारे चिकित्सा संस्थानों में एक जैसी ही हुई है", वगैरह-वगैरह।

समिति ने प्रैक्टिस न करने वाले अध्यापकों की अलग श्रेणी बनाने का सुझाव दिया था। भारतीय चिकित्सा परिषद तथा भारत सरकार की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति की सिफरिशें भी यही हैं। चिकित्सा परिषद् की राय में, "मेडिकल कॉलेजों के सारे विभागों का अध्यापक वर्ग गैर-प्रैक्टिसकर्ता तथा पूर्ण कालिक होना चाहिए"। वहीं स्वास्थ्य नीति के मुताबिक शिक्षक व गैर-शिक्षक; सारे डॉक्टर, गैर-प्रैक्टिस शर्तों पर ही नियुक्त किए जाने चाहिए।

डॉक्टरों का दृष्टिकोणः इसका कोई पुख्ता सबूत नहीं है कि अध्यापक अपने कर्तव्य निर्वाह में लापरवाह या उदासीन रहते हैं। दरअसल चिकित्सा-शिक्षा के स्तर में गिरावट की बात मिथ्या है। यह एक तथ्य है कि बाकी राज्यों के मुकाबले प. बंगाल के चिकित्सा-स्नातक प्रतियोगी प्रवेश परीक्षाओं में कहीं बेहतर साबित होते हैं। सरकार के खुद के रिकॉर्ड दिखाते हैं कि प्रैक्टिसकर्ता-शिक्षकों का कामकाज काफी संतोषजनक रहा हैं। डॉक्टरों का मत है कि प्राइवेट प्रैक्टिस और चिकित्सा-शिक्षा के गिरते स्तर का परस्पर संबंध अप्रमाणित हैं। '९० का कानून बनने से पहले भी ६०% अध्यापक अनिवार्य रूप से गैर-प्रैक्टिसकर्ता थे और दो स्नातकोत्तर कॉलेज तो पूरी तरह से 'प्रैक्टिस' से वंचित थे। गैर-प्रैक्टिसकर्ता डॉक्टरों का कोई अलग समूह नहीं था। हर डॉक्टर समय-समय पर इस समूह का सदस्य होता था। और दो विभिन्न अवधियों में एक ही डॉक्टर के कामकाज में कोई खास अंतर नहीं देखा गया। यह भी कहना अतिशयोक्ति होगी कि प्राइवेट प्रैक्टिस बंद होते ही कोई डॉक्टर पूरी तन्मयता से अध्यापन में लग जाएगा।

दरअसल चाहे प्रैक्टिस हो या न हो, किसी अध्यापक द्वारा अपने कर्तव्य की अवहेलना करने की कोई वजह नहीं है। यदि वे ऐसा करते हैं तो प्रशासन द्वारा उनकी खिंचाई की जानी चाहिए। ऐसा नहीं है कि प्राइवेट प्रैक्टिस का डॉक्टर के कामकाज पर कोई असर नहीं पड़ता। पड़ता है; मगर अनुकूल, वास्तव में, प्रैक्टिसकर्ता अध्यापक अपने अध्यापन - कार्य व मरीजों की देखभाल पर ज्यादा ध्यान देते हैं।

अदालत के फैसले ने स्पष्ट कर दिया है कि सरकारी डॉक्टरों को प्रैक्टिस करने का कोई कानूनी अधिकार नहीं। वैसे भी प्राइवेट प्रैक्टिस का अधिकार मांगने की कोई नैतिक बुनियाद नहीं। यदि डॉक्टरों को प्राइवेट प्रैक्टिस का हक है, तो बाकियों को क्यों नहीं ? सोचिए; यदि सरकारी इंजीनियर बतौर ठेकेदार और न्यायाधीश बतौर वकील प्राइवेट प्रैक्टिस करने लगें! कम तनख्वाह या अन्य दिक्कतों के समाधान होने ही चाहिए, परन्तु समाधान का मतलब यह नहीं कि आप प्राइवेट प्रैक्टिस का अधिकार मांगने लगें !

शुद्ध व्यावहारिक दृष्टि से देखें तो भी क्या किसी व्यक्ति के लिए सम्भव है कि वह प्राइवेट प्रैक्टिस व सरकारी नौकरी यानी दो-दो पूर्णकालिक कार्य, पूरी मुस्तैदी से कर पाए। अर्थात यदि कोई पूर्णकालिक अध्यापक प्रैक्टिस करता है, तो वह निश्चित तौर पर इनमें से एक काम की आंशिक उपेक्षा करेगा। चूंकि प्राइवेट प्रैक्टिस में नकद कारोबार होता है तथा प्रत्यक्ष जवाबदारी होती है, इसलिए यह समझना आसान है कि उपेक्षा की गाज किस पर गिरेगी। किसी भी परिप्रेक्ष्य से देखें, सरकारी डॉक्टरों की प्राइवेट प्रैक्टिस को नैतिक या कानूनी, किसी भी आधार पर जायज नही ठहराया जा सकता।

अलबत्ता चोरी-छिपे हो या खुले आम; प्राइवेट प्रैक्टिस का बोलबाला है। प्रैक्टिस न करने की शर्तों पर नियुक्त डॉक्टरों द्वारा प्राइवेट प्रैक्टिस करना एक परम्परा सी बन गई है।

राजकीय चिकित्सा का भविष्य वैसे भी निजीकरण और उदारीकरण की चपेट में सुरक्षित नहीं है। निजी नर्सिंग होम तथा जांच क्लीनिकों को आज हर तरह की राजकीय सहायता मिल रही है। राजकीय चिकित्सा-सुविधा का विस्तार थम-सा गया है। सरकारी अस्पतालों में जहां पहले १०० से ज्यादा दवाइयां उपलब्ध होती थीं, वहीं धीरे-धीरे उनकी संख्या घटकर ३२ पर पहुंच गई है। उनकी सप्लाई भी अनियमित हो गई है। ऐसी परिस्थिति में मेडिकल कॉलेजों में प्राइवेट प्रैक्टिस प्रतिबंधित करने का अनुकूल असर स्वास्थ्य सुविधा की उपलब्धता पर निश्चित रूप से पड़ेगा। मगर इस कानून को लागू करवाने में सरकार उदासीन रही है। लोगों की जो उम्मीदें थीं, उन पर पानी फिर रहा है। यह देखकर दुख होता है कि एक अच्छी योजना फाइलों में; कागजों में पड़ी सो रही है। *(स्रोत फीचर्स)*

डाक्टरों के एकाधिकार का विकास

यूरोप में आधुनिक चिकित्सा के विकास से पहले तीन प्रकार के चिकित्सक थे चर्च, पारंपरिक चिकित्सक और विश्वविद्यालयों में प्रशिक्षित चिकित्सक। चर्च एक शक्तिशाली संस्था थी जो जीवन के सभी पहलुओं को प्रभावित करती थी। यह मानव की प्रत्येक प्रकार की पीड़ा को, जिसमें रोग भी शामिल थे, व्यक्ति के पापों के ईश्वरीय दंड के रूप में प्रतिपादित करती थी। अतः रुग्णावस्थामें चर्च प्रार्थना और तपस्या करने का तथा ईश्वर की इच्छा को बगैर किसी शिकायत के स्वीकार करने का परामर्श देता था।

पारंपरिक चिकित्सक प्रायः महिलाएं होती थीं जिन्हें जड़ी-बूटियों और औषध वनस्पतियों और घरेलू दवाओं की अच्छी जानकारी होती थी। यह जानकार उन्हें पीढ़ियों से प्राप्त होती चली आ रही थी। इन्हीं स्त्रियो को बाद में "चुड़ैल" कहा जाने लगा जो प्रायः किसानों के बीच अपना चिकित्सा व्यवसाय करती थीं।

बुद्धिमान स्त्रियां या "चुड़ैलें" बहुत सारी दवाओं को जानती थीं जिनके पीछे पीढ़ियों का अनुभव था। "चुड़ैलों" द्वारा प्रयोग में लायी जाने वाली ढेरों औषधियां आज भी आधुनिक चिकित्सा में प्रयोग में आ रही है। उन्हें दर्द निवारक, हाजमा सुधारक और सूजन तथा दाह निवारक जड़ी-बूटियों का ज्ञान था। वे प्रसव वेदना में अर्गाट का प्रयोग करती थीं जबकि चर्च प्रसव-वेदना को हौवा के मूल पाप के लिए ईश्वर का न्यायोचित दंड बताकर स्त्रियों को उसे चुपचाप सहने के लिए प्रेरित करता था। आज भी अर्गाट के उत्पादों का प्रयोग प्रसव-वेदना को कम करने, शीघ्र प्रसव कराने तथा शिशु जन्म के बाद माँ को शीघ्र स्वास्थ्य लाभ कराने के निमित्त किया जा रहा है। गर्भस्राव की आशंका में वे गर्भाशय का संकुचन रोकने के लिए बेलाडोना का प्रयोग आक्षेपरोधी द्रव्य के रूप में करती थीं, जिसका प्रयोग आज भी व्यवहार में है। कहा जाता है कि डिजिटैलिस का आविष्कार एक अंग्रेज "चुड़ैल" ने किया था जो आज भी हृदय-रोगों की एक महत्वपूर्ण औषधि है। निश्चय ही "चुड़ैलों" की दवाएं जादू की तरह काम करती थीं।

हड्डियों और पेशियों की विस्तृत जानकारी को विकसित करने का श्रेय इन्हीं "चुड़ैलों" को है। जड़ी-बूटियों और वनस्पतिक औषधियों का ज्ञान भी इन्होंने ही अर्जित किया।

"चुड़ैलों" का ज्ञान इतना समृद्ध था कि १५२७ ई. में पैरासैल्सस ने, जो कि आधुनिक चिकित्सा का जनक माना जाता है, अपने सभी पाठ्यग्रंथ यह कहकर जला दिये कि मैंने अपनी सारी जानकारी जादूगरनियों से अर्जित की है, इन पुस्तकों से नहीं।

इनकी तुलना में विश्वविद्यालयों में शिक्षण प्राप्त चिकित्सक रोग की चिकित्सा करने में नितांत असफल रहते थे। वे रक्तमोक्षण पर जोर देते थे, विशेष रुप से घावों कें इलाज में। इसके लिए वे जोंक का प्रयोग करते थे। इन चिकित्सकों को इलाज करने से पूर्व अपनी सहायता के लिए पुरोहित को बुलाना अनिवार्य होता था और वे किसी ऐसे मरीज का इलाज नहीं कर सकते थे जिसने अपना पाप स्वीकार न किया हो। जहाँ तक चर्च का प्रश्न है वह यह मानता था कि इन "चुड़ैलों" ने अपना सारा ज्ञान शैतान से अर्जित किया है। चिकित्सकों की दृष्टि में, ये "चुड़ैलें" उनके पेशे की दुश्मन थीं।

ऐसी स्थिति में चिकित्सा-व्यवसाय करने के लिए विश्वविद्यालय में प्रशिक्षित होना अनिवार्य कर दिया गया। इससे स्त्रियों का चिकित्सा व्यवसाय में उतरना लगभग असंभव हो गया क्योंकि उन दिनों स्त्रियों को विश्वविद्यालयों में प्रवेश ही नहीं मिलता था। मगर इतने से ही "चुड़ैलों" को किसानों का इलाज करने से नहीं रोका जा सकता था। इसलिए ऐसी स्त्रियों को "चुड़ैल" कहकर कलंकित किया गया और उन्हें सुसंगठित तरीके से उत्पीड़ित करने का क्रम शुरू हुआ। चौदहवीं शताब्दी से लेकर १७वीं शताब्दी तक लाखों स्त्रियों का उत्पीड़न और वध हुआ। इन शिकारों में चर्च और चिकित्सा व्यवसाय ने अपनी सारी शक्ति लगा दी थी। इन "चुड़ैल" शिकारों ने स्त्रियों को चिकित्सा व्यवसाय से बिमुख कर दिया। प्रचार किया गया कि उनकी चिकित्सा अंधविश्वासपूर्ण, दुर्भावनापूर्ण और पूर्णतया अमंगलकारी हैं।

इस प्रकार डाक्टरों ने चिकित्सा-व्यवसाय पर अपना एकाधिकार स्थापित किया, जिसमें उन्होने रोगमुक्त करने की कला प्रदर्शित करने की बजाय अन्य सभी इलाज करने वालों की प्रतिस्पर्धा को ही खत्म कर दिया था। इस प्रकार चिकित्सा-व्यवसाय उच्च एवं मध्यवर्ग के शिक्षितों के पूर्ण नियंत्रण में चला गया।

विशेष छूट **मुफ्त डाक खर्च**

जीवनीय सोसायटी– लोस्वापसंस द्वारा प्रकाशित

स्वास्थ्य परंपराओं पर महानिबंध

स्वास्थ्य की स्थानीय परंपराएं : पृष्ठ सं.१०८ मूल्य रु.४०.००

भारतवर्ष के विभिन्न भागों में शताब्दियों से प्रचलित स्वास्थ्य की कुछ सशक्त परंपराओं का सर्वेक्षण व उनका मूल्यांकन इस पुस्तक में किया है। इन परंपराओं के वैज्ञानिक आधार और वर्तमान में उनकी प्रासंगिकता एवं संभावनाओं के साथ–साथ आयुर्वेद के कुछ महत्वपूर्ण ग्रंथों के संदर्भ व प्राविधिक शब्दों का विवरण भी पुस्तक का महत्व बढ़ाता है।

पारंपरिक चिकित्सा में मातृ एवं शिशु स्वास्थ्यः खण्ड–१ पृष्ठ सं. ८४, मूल्य रु.४५.००,

हमारे देश में प्रचलित स्वास्थ्य परंपराओं में संभवतः सबसे प्राचीन और समृद्ध परंपरा दाइयों की रही है जो आज भी काफी सुदृढ़ है। इस परंपरा के वर्तमान आधार पर एक देशव्यापी सर्वेक्षण लोस्वापसंस व चेतना ने अनेकों स्वैच्छिक संस्थाओं के सहयोग से किया था। इसी पर आधारित इस परंपरा में गर्भधारण एवं गर्भ की पहचान से लेकर गर्भिणी परिचर्या एवं कुछ विशिष्ट व्याधियों एवं उनके उपचार का विवरण भी इस पुस्तक में सविस्तार है।

खण्ड – २ पृष्ठ सं.८८, मूल्य रु.४५.०० (प्रेस में)

इस सर्वेक्षण पर आधारित इस पुस्तक में शिशु जन्म के पश्चात सूतिका एवं शिशु की परिचर्या के बारे में विस्तार से विवरण दिया है।

आहार एवं पोषण के आयुर्वेदीय सिद्धांत – खण्ड –१ पृष्ठ सं.१२८,मूल्य रु.५०.०० (शीघ्र प्रकाश्य)

इस पुस्तक में आहार एवं पोषण के मूल सिद्धांतों जिनमें पाचन क्रिया, अग्नि, प्रकृति एवं ऋतु के अनुसार आहार, सेवन विधि, पथ्य–अपथ्य व विशेष पदार्थों आदि का सचित्र वर्णन है। पुस्तक में निघंटुओं में उपलब्ध ज्ञान के उपयोग की विधि और उसके आधार पर पदार्थों का विभिन्न गणों में वर्गीकरण भी किया है।

चारों महानिबंधों का सेट एक साथ खरीदने पर विशेष छूट के साथ केवल रु.१५०.०० में उपलब्ध है। डाक खर्च मुफ्त। अपने आर्डर के साथ रु.१५०.०० का डिमांड ड्राफ्ट "जीवनीय सोसायटी", लखनऊ के नाम से निम्न पते पर भेजें–

जीवनीय सोसायटी

ई–III/249, सेक्टर एच, अलीगंज, लखनऊ–226020

मस्तरामजी
कथा : पं० काशीनाथ गोरे
चित्र : सन्दीप सेन
वैद्यजी ! शरीर की सफाई के लिए उबटन, मालिश और स्नान के अलावा भी कुछ और आवश्यक होता है ?
मस्तरामजी ! आपने बहुत अच्छा प्रश्न पूछा !
"प्रात: उठकर चेहरा ठंडे पानी से साफ करना चाहिए."
"ठंडे पानी के छींटे देकर आँखों को हल्के हाथों से साफ करना चाहिए."
दाँतो को किसी मुलायम मंजन से हल्के से रगड़-कर साफ करें.
वैद्यजी ! आजकल तो ब्रश से दांत साफ करते है..
हाँ ब्रश के बाल दाँतो के बीच के हिस्सों तक पहुंच जाते है जहाँ उंगली नही पहुँचती !
अत: ब्रश से दांत अधिक साफ होते है.. लेकिन ब्रश भी ठीक से साफ होना चाहिए.
परन्तु ध्यान रहे कि ब्रश के बाल बहुत मुलायम हों ताकि मसूड़ों को उनसे चोट या रगड़ न लगे.
देशी ब्रश के रूप में नीम या बबूल के डंठल का प्रयोग अधिक गुणकारी है.. इसे दातौन कहते है.
वैद्यजी, दातौन अधिक गुणकारी क्यों है ?

नीम की दातौन को दाँतों से चबाकर उसके सिरे को ब्रश का रूप दिया जाता है.
नीम को चबाने से उसका रस मुँह में फैल जाता है..
नीम का रस कीटाणुनाशक होता है.
नीम के डंठल के सिरे से दाँतों के बीच के हिस्से भी स्वच्छ हो जाते है.
वैद्यजी! यदि कोई दाँत साफ न करे तो-
मस्तरामजी! यदि दाँत साफ न किए जाएं तो उन पर मैल की पीली परत चढ़ती है.
यह परत दाँतो के ऊपरी आवरण को कमजोर करती है और दाँत कमजोर हो जाते है..
“दाँतो और दाढ़ों के बीच में अन्न के कण फँसे रहते है.”
साफ न करने से वे वहीं सड जाते हैं और उनमें कीटाणु पैदा हो जाते है.
ये कीटाणु दाँतो के मूल में पहुँचकर उन्हें कमजोर करते है!
“इससे दाँत बहुत जल्दी गिर जाते है.”
दाँतों में उत्पन्न कीटाणुओं का विष थूक के साथ पेट में पहुँचता है!
क्रमशः

हाथ में मशाल हो, आँखों में सपना, दिल में ख़याल हो।
निकल पड़ो, आगे बढ़ो, निर्बलों की ढाल हो।

वर्तमान शासन के सभी कायदे पूर्ण

प्रमुख उपलब्धियाँ एवं निर्णय :

कृषि एवं ग्रामीण विकास

- प्रदेश के इतिहास में पहली बार योजना राशि का 70% हिस्सा ग्रामीण विकास पर व्यय करने के निर्णय के तहत 4762 करोड़ रुपये की वार्षिक योजना राशि में से 3333 करोड़ रुपये की विपुल राशि व्यय करने की स्वीकृति।
- अम्बेडकर ग्राम योजना के लिये 15 करोड़ रुपये की स्वीकृति।
- किसानों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने हेतु खलिहान दुर्घटना बीमा योजना लागू व फसल बीमा योजना लागू करने का निर्णय।
- विशेष सिंचाई सुविधा योजनान्तर्गत दो लाख हेक्टेयर क्षेत्र के लिए अतिरिक्त सिंचन क्षमता सृजित की गयी।
- किसानों को कृषि उत्पादन का लाभकारी मूल्य दिलाने के ठोस उपाय।
- कतिपय मामलों में विद्युत मूल्य के सरचार्ज माफी से किसानों को 70 करोड़ रुपये की रियायतें।
- ग्रामीण जीवन में गुणात्मक सुधार लाने के उद्देश्य से न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत 842.68 करोड़ रुपये की विशाल धनराशि व्यय करने की अभूतपूर्व व्यवस्था।
- किसान पेंशन योजना लागू करने का ऐतिहासिक निर्णय। इस वर्ष 7 लाख एवं 3 वर्षों में 20 लाख लोगों को लाभान्वित करने का अभियान।
- गत वर्ष गन्ना मूल्य में भारी वृद्धि और समयबद्ध भुगतान से गन्ना किसानों को भारी राहत। इस वर्ष गन्ना मूल्य में पुनः वृद्धि होने से 300 करोड़ रुपये अधिक किसानों को मिलने की आशा।
- पेराई क्षमता 75 हजार टन प्रतिदिन बढ़ाने के उद्देश्य से 25 नई चीनी मिलें लगाने का कार्य प्रगति पर।
- गन्ना खरीद केन्द्रों पर होने वाली कटौती 3 रुपए कुन्टल से घटाकर 2 रुपये कर देने से 20 लाख गन्ना किसानों को राहत।
- ऊसर सुधार तथा बेरोजगारी उन्मूलन के उद्देश्य से 12 जनपदों में भूमि सेना का गठन। 12 हजार हेक्टेयर ऊसर क्षेत्र में उपचार, 45 हजार टन अतिरिक्त खाद्यान्न के उत्पादन तथा 45 लाख मानव दिवस रोजगार सृजन का लक्ष्य।
- अब तक लगभग 4 हजार हेक्टेयर में ऊसर सुधार का कार्य पूरा।
- ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम के लिये 20 करोड़ रुपये की स्वीकृति।
- गत वर्ष वितरित 313.48 करोड़ रु० ऋण के विपरीत इस वर्ष 356.29 करोड़ रुपये तथा दीर्घकालीन ऋण के तौर पर गत वर्ष वितरित 78.60 करोड़ रुपये के विपरीत 87.27 करोड़ रुपये ऋण इस वर्ष वितरित।
- दुग्ध उत्पादन योजना को विशेष प्रोत्साहन। इस वर्ष दुग्ध मूल्य में कमी न करने से दुग्ध उत्पादकों को 2.22 करोड़ रुपये अधिक प्राप्त।
- सघन मिनी डेरी योजना के तहत 14 नये जनपद आच्छादित तथा तरल दुग्ध विक्रय में 22% की वृद्धि।
- फास्फेटिक तथा पोटाश युक्त उर्वरकों पर व्यापार कर हटाने के फलस्वरूप किसानों को कुल मिलाकर 45 करोड़ रुपये की राहत।

दलितों एवं पिछड़ों को विशेष अवसर

- पिछड़े वर्गों के लिये सरकारी सेवाओं, शिक्षण संस्थाओं, तकनीकी शिक्षा संस्थाओं तथा चिकित्सा शिक्षा संस्थाओं में 27% आरक्षण
- अनुसूचित जाति का आरक्षण कोटा 18% से बढ़ाकर 21% कर दिया गया है।
- सिर पर मैला ढोने की कुप्रथा समाप्त करके सफाई कर्मचारियों को सम्मानजनक पेशों में लगाने हेतु 37.63 करोड़ रुपए की योजना लागू।
- अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों की पुत्रियों के विवाह हेतु सहायता राशि रु० 1000/- से बढ़ाकर 5000/- कर दी गयी है।
- आरक्षण नियमों का उल्लंघन दण्डनीय अपराध घोषित। इसके लिये तीन माह का कारावास 1000 रु० जुर्माना अथवा दोनों एक साथ देने का प्राविधान।
- पंचायतों में महिलाओं, अनुसूचित जाति, जनजाति तथा पिछड़े वर्गों के लिये समुचित आरक्षण।
- पात्रता क्षेत्र में आने वाले 1 लाख अतिरिक्त वृद्धों तथा सभी विकलांगों को पेंशन योजना से आच्छादित करने का अभियान।
- वर्ष 1994-95 के प्रारम्भिक आठ माह में मछुआ समुदाय के 3469 सदस्यों को तालाबों के तथा 3543 कुम्हारों को स्थलों के पट्टे दिये गये।
- अनुसूचित जाति/जनजाति के सदस्यों को उत्पीड़न से बचाने तथा उनके हितों की सुरक्षा के लिए अनुसूचित जाति/जनजाति आयोग के गठन का निर्णय।

शिक्षा सुविधा का विस्तार

- प्रदेश के इतिहास में पहली बार शिक्षा आयोग का गठन।
- छात्र-छात्राओं एवं गुरुजनों से अपराधियों जैसा व्यवहार करने वाले नकल अध्यादेश की समाप्ति।
- दस जनपदों में 'सभी के लिए शिक्षा योजना' हेतु वर्ष 94-95 में 130 करोड़ रुपए का प्राविधान।
- किसान परिवार के प्रतिभाशाली छात्रों हेतु विशेष छात्रवृत्ति प्रदान करने की अनूठी योजना लागू।
- माध्यमिक एवं डिग्री शिक्षा को रोजगार परक बनाने की कार्यवाही प्रारम्भ।
- प्रदेश के सभी प्राइमरी स्कूलों की बाउण्ड्री, शौचालय तथा हैण्डपम्प निर्माण हेतु 25 करोड़ रु० की योजना की स्वीकृति।
- प्रत्येक ग्रामसभा में प्राइमरी, प्रत्येक ग्राम पंचायत में जूनियर हाईस्कूल खोलने की प्रतिबद्धता के तहत 3240 प्राइमरी तथा 800 जूनियर हाईस्कूल खोलने का कार्य प्रगति पर।
- असेवित क्षेत्रों में बालिकाओं की शिक्षा के लिये बालिका इंटर कालेज खोले जाने का निर्णय।
- गैर सरकारी उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में सेवा के दौरान मृत शिक्षकों के आश्रितों को एल.टी. ग्रेड में नियुक्ति का प्राविधान।
- दूरस्थ इलाकों में निजी प्रबन्ध में बालिका हाईस्कूलों की स्थापना के लिये विशेष रियायतों की घोषणा। भवन, पुस्तकालय तथा विज्ञान उपकरणों के लिये 10 लाख रुपये का अनुदान तथा गांव सभा की एक एकड़ भूमि निःशुल्क देने का प्राविधान। प्रथम चरण में 100 स्कूलों की स्थापना होगी।
- गैर सरकारी तथा सरकारी महाविद्यालयों में सेलेक्शन ग्रेड में कार्यरत पूर्णकालिक प्रवक्ताओं को 'रीडर' का पद नाम देने का निर्णय।
- राज्य उच्चतर शिक्षा परिषद् का गठन।
- प्राथमिक शिक्षकों के विकलांग परिवहन भत्ते की दर में बढ़ोत्तरी।
- व्यावसायिक शिक्षा हेतु विश्वविद्यालय की कार्यकारी परिषद में उद्योगपति नामित।

व्यापार एवं उद्योग विकास

- प्रदेश में नयी उद्योग नीति, निर्यात नीति तथा ऊर्जा नीति घोषित। इंस्पेक्टर राज खत्म करने की ऐतिहासिक पहल।
- औद्योगिक विकास में विद्युत की उपलब्धता हेतु कुल 2300 मेगावाट विद्युत उत्पादन हेतु "मेमोरण्डम ऑफ अण्डरस्टैन्डिंग" हस्ताक्षरित करके इसकी शुरूआत कर दी गई है तथा "को-जेनरेशन" हेतु एक नीति भी घोषित की गई है।
- समस्याओं के निवारणार्थ शीघ्र निर्णय हेतु 'सिंगिल विण्डो' व्यवस्था जिला एवं मण्डल स्तर पर लागू।
- मा० मुख्यमंत्री द्वारा उद्योगपतियों से सीधा संवाद कायम करने तथा औद्योगिक वातावरण में सुधार आने के फलस्वरूप 20 हजार करोड़ रु० के पूंजीनिवेश की सम्भावना।
- बिक्रीकर के स्थान पर उसके व्यवहारिक विकल्प के रूप में व्यापार कर लागू होने से व्यापारियों तथा उद्यमियों को राहत तथा अनेक रियायतें।
- व्यापारियों का उत्पीड़न रोकने के लिये आवश्यक वस्तु अधिनियम के अन्तर्गत मुकदमें न चलाने का निर्णय तथा उनके विरुद्ध राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के अन्तर्गत दायर मुकदमें वापस।
- दाल मिलों के लिये नयी समाधान योजना लागू।
- निजी क्षेत्र में जो औद्योगिक संस्थान उद्योग लगाने में आरक्षण नीति का पालन करेंगे उन्हें अधिक सुविधायें उपलब्ध करायी जायेंगी।

अल्पसंख्यकों का कल्याण

- प्रदेश में पहली बार 'हज यात्रियों के लिए मृत्यु दुर्घटना बीमा योजना' लागू की गयी।
- प्रत्येक सरकारी कार्यालय में उर्दू अनुवादकों की नियुक्ति ताकि उर्दू में प्राप्त आवेदन पत्र को हिन्दी में अनुदित कर उन पर कार्रवाही हो सके।
- वक्फ सम्पत्तियां (अलल्खैर एवं अलल औलाद) रेंट कन्ट्रोल ऐक्ट से मुक्त।
- प्रत्येक सरकारी सेवाओं में होने वाली प्रतियोगी परीक्षाएं उर्दू माध्यम से भी कराने के आदेश।
- उर्दू भाषा को रोजगारपरक बनाने की कार्यवाही शुरू।
- प्रदेश में गठित अल्पसंख्यक आयोग को कानूनी दर्जा देने के लिए अध्यादेश जारी।
- 6121 उर्दू शिक्षकों तथा 5061 उर्दू अनुवादकों कम कनिष्ठ लिपिकों की नियुक्ति का कार्य प्रगति पर।
- 31 शिक्षण संस्थाओं को अल्पसंख्यक शिक्षण संस्था का दर्जा, शिक्षा एवं चिकित्सा विभाग में इसके लिये मानक निर्धारित।
- बुनकरों को जनता वस्त्र पर 25 रुपये प्रति कि०ग्रा० अनुदान की व्यवस्था तथा सूत की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिये प्रदेश के बाहर इसके निर्यात एवं बिक्री पर रोक।
- ऐसे क्षेत्र जहां कम से कम 10 प्रतिशत अल्पसंख्यक हों उनमें भी उर्दू शिक्षण हेतु कारगर व्यवस्था।

कानून व्यवस्था

- शांति व्यवस्था हेतु 'शांति सुरक्षा बल' के लिये प्रबल प्रयास जारी। शांति सुरक्षा बल की 7 वाहिनियों के गठन की व्यवस्था तथा 5000 कांस्टेबल की भर्ती की कार्यवाही।
- प्रदेश में आशातीत शांति सभी प्रमुख त्योहार शांति पूर्वक सम्पन्न। साम्प्रदायिक सौहार्द बनाये रखने में शतप्रतिशत सफलता।
- होमगार्डों को पुलिस तथा पी० ए०सी० की भर्ती में 10 प्रतिशत आरक्षण।
- जोखिम भरा उल्लेखनीय कार्य करने वाले पुलिस कर्मियों को 'आउट - आफ - टर्न' प्रोन्नति देने की व्यवस्था।
- गलत ढंग से फंसाए गए एक हजार से अधिक लोगों पर से टाडा हटाया गया।

सांस्कृतिक समृद्धि के आयाम

- डा० राम मनोहर लोहिया के नाम पर एक अति विशिष्ट पुरस्कार (रु० दो लाख) व एक विशिष्ट पुरस्कार (डेढ़ लाख रुपए) प्रारम्भ।
- कला, संस्कृति, साहित्य, खेल तथा समाजसेवा आदि क्षेत्रों में अपने व्यक्तिगत उपलब्धियों से प्रदेश का नाम देश विदेश में रोशन करने वाली प्रतिभाओं को यशभारती अलंकरण देने का अभिनव कार्यक्रम।
- स्वायत्तशासी भाषा-संस्थान का गठन।

उत्तराखण्ड

- उत्तराखण्ड को अलग राज्य का दर्जा देने का संकल्प विधान मंडल द्वारा पारित तथा केन्द्र सरकार से पृथक उत्तराखण्ड के लिए निरन्तर अनुरोध जारी।
- अंशकालिक शिक्षकों के नियमतीकरण का निर्णय।
- उत्तराखंड का विकास सुनिश्चित करने के लिये एक अतिरिक्त मुख्य सचिव तथा सचिवों की नियुक्ति।
- 'हिल कैडर' लागू करने की कार्यवाही में तेजी 28 महत्वपूर्ण विभागों में से 27 में पृथक संवर्गों के गठन का कार्य पूर्ण।
- विश्वविद्यालयों तथा डिग्री कालेजों में एम.एस.सी. तथा बी०एड कक्षाओं की प्रवेश क्षमता में 50% वृद्धि।
- उत्तर प्रदेश परिवहन निगम की बसों में उत्तराखंड के छात्र-छात्राओं को 50% छूट।
- उत्तराखंड में पेयजल की समस्या के निदान के लिये 51 करोड़ रुपये का प्राविधान।
- उत्तराखण्ड के विद्यालयों में नियुक्ति के मामलों में बी०टी०सी० उपलब्ध न होने की स्थिति में बी०एड० अभ्यर्थियों की नियुक्ति का निर्णय।
- नयी पर्यटन नीति तथा पेइंग गेस्ट योजना के तहत अनेक सुविधायें।
- उत्तराखंड में तृतीय व चतुर्थ श्रेणी के पदों की भर्ती में स्थानीय लोगों को वरीयता।

विविध

- स्वाधीनता संग्राम सेनानियों की पेंशन बढ़ाकर 1050 रुपया प्रतिमाह।
- सहकारिता एक्ट 1965 में आवश्यक संशोधन करके सहकारी समितियों का कार्यकाल 3 वर्ष से बढ़ाकर 5 वर्ष किया गया तथा समितियों भंग न किये जाने का निर्णय।

"हम समन्नता चाहते हैं, हम समता चाहते हैं, हम बख्शीश की राजनीति नहीं चाहते हैं, हम परिवर्तन की राजनीति चाहते हैं। इसीलिए हम चाहते हैं कि व्यवस्था परिवर्तन हो, सामाजिक परिवर्तन हो, गैर-बराबरी मिटे और कोई इस हिन्दुस्तान के अंदर न भूखा रहे, न नंगा रहे, किसी चीज का किसी को अभाव न रहे। ऐसे हिन्दुस्तान का, ऐसे समाज का हम लोगों ने सपना देखा है।"

— मुलायम सिंह यादव
मुख्यमंत्री, उ० प्र०

गणतंत्र दिवस की 45वीं वर्षगाँठ

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, उ०प्र० द्वारा प्रसारित